अप्रैल 2019

आई.एस.ओ. 9001: 2008 संगठन
मूल्य: ₹30

भाकृअनुप
ICAR

खेती

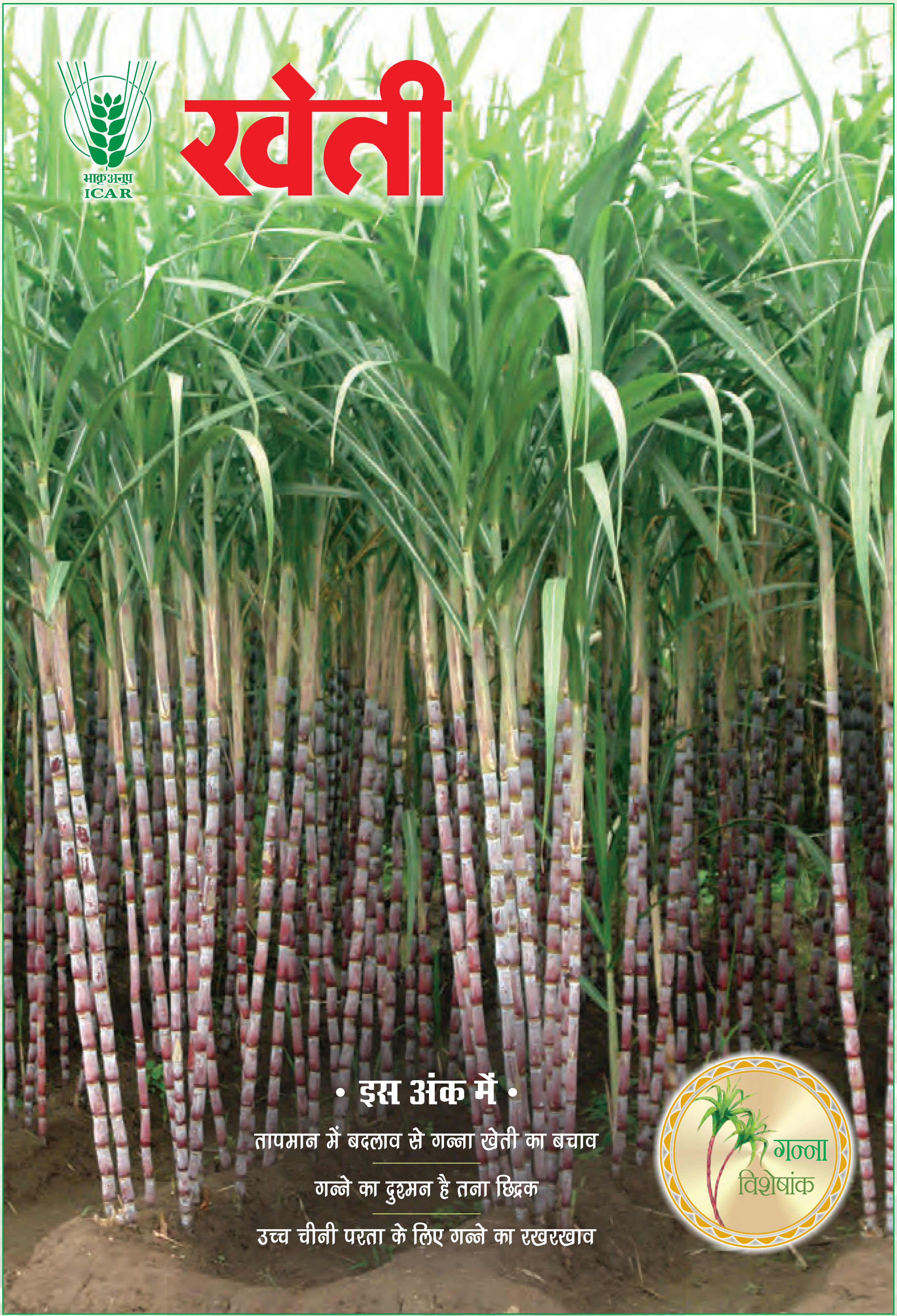

• इस अंक में •

तापमान में बदलाव से गन्ना खेती का बचाव

गन्ने का दुश्मन है तना छिद्रक

उच्च चीनी परता के लिए गन्ने का रखरखाव

गन्ना विशेषांक

www.icar.org.in

भाकृअनुप-गन्ना प्रजनन संस्थान, कोयंबटूर

भाकृअनुप-गन्ना प्रजनन संस्थान कोयंबटूर, में स्थिति है। इस संस्थान की स्थापना वर्ष 1912 में हुई थी। यह संस्थान गन्ना कृषि के विभिन्न पहलुओं और प्रजातियों के विकास के लिये अनुसंधान कर रहा है। संस्थान द्वारा अब तक 2930 से अधिक गन्ना प्रजातियों को विकसित किया गया है। इनमें से कई किस्में देश के विभिन्न क्षेत्रों में किसानों के बीच काफी लोकप्रिय हैं।

देश भर में अधिकांश गन्ने के क्षेत्रफल में जिन प्रजातियों को उगाया जा रहा है, उनमें से अधिकतर इस संस्थान में ही विकसित की गई हैं। भारत सहित विश्व के 30 से अधिक देशों में गन्ने की सफल खेती में इस संस्थान की ओर से विकसित की गईं प्रजातियों का योगदान है। विश्व में सबसे अधिक गन्ने के आनुवंशिक संसाधनों को भी इसी संस्थान में संग्रहित करके, उनको सुरक्षित किया जा रहा है।

गन्ने में आनुवंशिक सुधार की शुरुआत भी सबसे पहले गन्ना प्रजनन संस्थान, कोयंबटूर में हुई थी। इस आनुवंशिक सुधार के लिए गन्ने की प्रचलित किस्मों में जंगली प्रजातियों का अंतर्जातीय संकरण किया गया, ऐसे में अनेक उन्नत व सफल व्यावसायिक प्रजातियों का विकास हुआ।

यह संस्थान गन्ने की विभिन्न प्रजातियों के विकास के साथ ही गन्ना उत्पादन एवं गन्ना संरक्षण में भी उल्लेखनीय कार्य कर रहा है। संस्थान विभिन्न प्रदेशों के प्रजनन कार्यक्रमों में भी सहायता प्रदान करता है। प्रौद्योगिकी हस्तांतरण के माध्यम से गन्ना कृषि अनुसंधान में मानव संसाधन विकास को प्रभावी बनाने का काम भी संस्थान द्वारा किया जा रहा है।

यह संस्थान बेहतर उपज और गुणवत्ता के साथ जैविक और अजैविक दबावों के विरुद्ध प्रतिरोधी स्थानीय अनुकूलित गन्ना किस्मों का आकलन करने के साथ ही मूल्यांकन भी करता है। गन्ने की फसल में अधिक उपज के लिए भी संस्थान ने तकनीकी पैकेज का भी विकास किया है। गन्ने के उत्पादन के लिए कम लागत वाली प्रौद्योगिकियों को विकसित करने का काम भी संस्थान करता रहा है। गन्ना प्रजनन संस्थान, कोयंबटूर का एक क्षेत्रीय केंद्र हरियाणा के करनाल में और दो अनुसंधान केंद्र केरल के कन्नूर और अगली में स्थित हैं। ■

संस्थान की नई उपलब्धियां

गन्ने की व्यावसायिक खेती के लिये तीन नई प्रजातियों का विकास

जल्द पकने वाली को. 05009 (करण-10) को उत्तर-पश्चिमी क्षेत्र के लिये, मध्यम देरी से पकने वाली को. 06027 को प्रायद्वीपीय क्षेत्र के लिये और मध्यम देरी से पकने वाली को. 06030 प्रजाति को पूर्वी तटीय क्षेत्र के लिये विकसित किया गया है।

मृदा नमी संकेतक यंत्र

इस यंत्र की सहायता से गन्ना किसान अपने खेत में मृदा की नमी की आसानी से जांच कर सकते हैं।

गन्ने में कार्बनिक खेती प्रणाली

गन्ने में परंपरागत खेती प्रणाली की तुलना में कार्बनिक खेती प्रणाली से अधिक उपज प्राप्त होती है। कार्बनिक उत्पादन प्रणाली में परंपरागत के मुकाबले पादप परजीवी सूत्रकृमियों की संख्या में भी कमी होती है।

गन्ने में टपक सिंचाई के साथ उर्वरकों को देने की प्रणाली

गन्ने के खांचों में टपक सिंचाई द्वारा उर्वरकों को देने से 41 प्रतिशत सिंचाई के पानी की बचत होती है और गन्ना उत्पादन 9.4 प्रतिशत अधिक होता है। इससे गन्ने की लागत में कमी आती है।

गन्ने से इथेनॉल के उत्पादन के लिये सूक्ष्मजीव

संस्थान ने गल रहे फलों और सब्जियों, ताड़ी के नमूनों और लिग्नोसैल्यूलोज पर पल रहे कीटों और उनकी सामग्री से 35 यीस्ट के विलगनों की पहचान की है। इन संवर्धनों के माध्यम से गन्ने से इथेनाल उत्पादन करने में मदद मिल रही है।

खेती

कृषि विज्ञान द्वारा ग्रामोत्थान
की मासिक पत्रिका

वर्ष: 71, अंक: 12, अप्रैल 2019

संपादन सलाहकार समिति

1. **डा. अशोक कुमार सिंह** — **अध्यक्ष**
   उप-महानिदेशक (कृषि विस्तार)
   भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली
2. **डा. सतेन्द्र कुमार सिंह** — **सदस्य**
   परियोजना निदेशक
   कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय
   भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली
3. **डा. आर.सी. गौतम** — **सदस्य**
   पूर्व डीन
   भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली
4. **डा. एस.के. सिंह** — **सदस्य**
   निदेशक
   राष्ट्रीय मृदा सर्वेक्षण एवं भूमि उपयोग
   नियोजन ब्यूरो, नागपुर
5. **डा. वाई.पी.एस. डबास** — **सदस्य**
   निदेशक (प्रसार)
   जी.बी. पंत कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय
   पंतनगर
6. **श्री सेठपाल सिंह** — **सदस्य**
   प्रगतिशील किसान
7. **श्री सुरेन्द्र प्रसाद सिंह** — **सदस्य**
   कृषि पत्रकार
8. **श्री अशोक सिंह** — **सदस्य सचिव**
   प्रभारी, हिन्दी संपादकीय एकक

संपादक
अशोक सिंह
संपादन सहयोग
सुनीता अरोड़ा

प्रधान प्रोडक्शन अधिकारी
डा. वीरेन्द्र कुमार भारती
सहायक मुख्य तकनीकी अधिकारी
अशोक शास्त्री

लेआउट डिज़ाइन
डा. वीरेन्द्र कुमार भारती
अशोक शास्त्री

व्यवसाय सम्पर्क सूत्र
सुनील कुमार जोशी
व्यवसाय प्रबंधक
दूरभाष : 011-25843657
E-mail: bmicar@icar.org.in
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
कृषि अनुसंधान भवन, पूसा गेट, नई दिल्ली-12
एक प्रति : रु. 30.00 वार्षिक : रु. 300.00

E-mail: khetidipa@gmail.com

विषय-सूची

संपादकीय — भारत में गन्ना उत्पादन, **अशोक सिंह**

आवरण कथा — 3
तापमान में बदलाव से गन्ना खेती का बचाव
तपेन्द्र कुमार श्रीवास्तव, पुष्पा सिंह और राम रतन वर्मा

फसल सुरक्षा — 7
गन्ने का दुश्मन है तना छिद्रक
हरी चन्द, अनिल कुमार और नागेन्द्र कुमार

सावधानी — 11
उच्च चीनी परता के लिए गन्ने का रखरखाव
राधा जैन, चन्द्र पाल सिंह, अमरेश चन्द्रा, पुष्पा सिंह, सुशील सोलोमन और अश्विनी दत्त पाठक

उपयोग — 15
गन्ने के अवशेषों का प्रबंधन
मनोज कुमार शर्मा, देवेन्द्र कुमार, पूनम मान और आर.एस. सेंगर

प्रबंधन — 17
गन्ने की पेड़ी में पलवार बिछाकर जल बचत
डी.वी. यादव, आर.पी. वर्मा, कामता प्रसाद, ए.के. साह, राजेन्द्र गुप्ता और के.पी. सिंह

पोषण — 19
गन्ने में जैव उर्वरक

किसानोपयोगी — 21
गन्ना प्रश्नोत्तरी

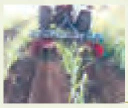
मशीनीकरण — 26
गन्ने की खेती में उपयोगी तकनीक और उपकरण

सहफसल — 28
गन्ने के साथ पपीते की खेती दिलाएगी बम्पर मुनाफा

नई तकनीक — 30
ड्रिप सिंचाई प्रणाली से गन्ना उत्पादन
आर.एल. चौधरी, योगेश्वर सिंह, महेश कुमार, प्रवीण माने, पी.ए. काले और एन.पी. सिंह

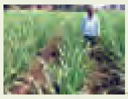
मार्गदर्शिका — 34
गन्ने की खेती में कब क्या करें

भंडारण — 37
वर्षा जल संचयन और संरक्षण के विविध आयाम
मनीष कुमार, रिंकी, सीमा, एन.वाई. आजमी और पी.के. सिंह

दलहन — 40
कैसे लें चने की भरपूर उपज
मुकेश नागर, हुकमराज सैनी, दीपक कुमार सरोलिया और आशा शेरावत

आहार — 43
खुशहाली का खजाना खार्चिया गेहूं
मोती लाल मीणा, धीरज सिंह, ऐश्वर्य डूडी और एम.के. चौधरी

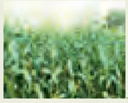
पोषण — 47
बायोचार एवं मृदा स्वास्थ्य
बृज लाल लकारिया, प्रमोद झा, भारत मीणा, अभय शिराले, ए.के. विश्वास, प्रिया गुरव, संजीव बेहेरा और ए.के. पात्र

जानकारी — 52
गन्ने की खेती का इतिहास

कृषि कैलेण्डर — 53
अप्रैल के मुख्य कृषि कार्य
राजीव कुमार सिंह, विनोद कुमार सिंह, कपिला शेखावत, प्रवीण कुमार उपाध्याय और एस.एस. राठौर

संस्थान परिचय **भाकृअनुप-गन्ना प्रजनन संस्थान, कोयंबटूर** — आवरण II
भाकृअनुप-भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ — आवरण III

डिस्क्लेमर

लेखों में व्यक्त विचारों, जानकारियों, आंकड़ों आदि के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं, उनसे भाकृअनुप की सहमति आवश्यक नहीं है। पत्रिका में प्रकाशित लेखों तथा अन्य सामग्री का कॉपीराइट अधिकार भाकृअनुप-डीकेएमए के पास सुरक्षित है। इन्हें पुन : प्रकाशित करने के लिए प्रकाशक की अनुमति अनिवार्य है। लेखों में संस्तुत रसायनों के डोज का प्रयोग करने से पहले विशेषज्ञों से सलाह अवश्य लें।

संपादकीय

भारत में गन्ना उत्पादन

वर्तमान में गन्ना उत्पादन में भारत की विश्व में शीर्ष देशों में गिनती होती है। यद्यपि ब्राजील एवं क्यूबा भी भारत के लगभग बराबर ही गन्ना पैदा करते हैं। देश में 4 करोड़ किसान अपनी जीविका के लिए गन्ने की खेती पर निर्भर हैं और इतने ही खेतिहर मजदूर भी इस पर निर्भर हैं, जो गन्ने के खेतों में काम करके अपनी जीविका कमाते हैं। गन्ने के महत्व को इसी बात से समझा जा सकता है कि देश में निर्मित सभी मुख्य मीठे उत्पादों के लिए गन्ना एक मुख्य कच्चा माल है। यही नही इसका उपयोग गुड़ तथा खंडसारी उद्योगों में भी किया जाता है।

वर्तमान में देश में लगभग 4.36 मिलियन हैक्टर क्षेत्रफल में गन्ने की खेती की जाती है। दूसरे शब्दों में इस फसल की खेती कुल कृषि क्षेत्र के लगभग 3 प्रतिशत भाग में की जाती है। यह प्रमुख नगदी फसलों में से एक है, जिसका देश में कृषि उत्पादन का सकल मूल्य लगभग 7.5 प्रतिशत है। भारत में 300 मिलियन टन के गन्ने उत्पादन की लगभग 35 प्रतिशत मात्रा गुड़ और खंडसारी उत्पादन हेतु उपयोग में लाई जाती है। गुड़ और खंडसारी का उत्पादन कर्नाटक, तमिलनाडु और उत्तर प्रदेश में मुख्य रूप से किया जाता है।

उत्तर प्रदेश, उत्तराखंड, बिहार, पंजाब, हरियाणा मुख्य गन्ना उत्पादक राज्य हैं। मध्य प्रदेश, पश्चिम बंगाल, राजस्थान और असोम के भी कुछ क्षेत्रों में गन्ना पैदा किया जाता है, लेकिन इन राज्यों में उत्पादकता बहुत ही कम है। इनके अलावा महाराष्ट्र, आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु और गुजरात में भी गन्ने का उत्पादन किया जाता है। उत्तरी राज्यों से देश के उत्पादन का 50 प्रतिशत गन्ना मिलता है, किन्तु इसका प्रति हैक्टर उत्पादन दक्षिण भारत की अपेक्षा कम है। कुल उत्पादित गन्ने का 40 प्रतिशत गुड़ एवं 50 प्रतिशत चीनी बनाने में प्रयुक्त होता है।

उत्तर प्रदेश, देश की कुल गन्ना उपज का 35.81 प्रतिशत, महाराष्ट्र 25.4 प्रतिशत और तमिलनाडु 10.93 प्रतिशत पैदा करते हैं अर्थात ये तीनों राज्य देश के कुल गन्ना उत्पादन का 72 प्रतिशत उत्पादन करते हैं। इधर पिछले दो दशकों से दक्षिण के राज्यों में गन्ने की उपज में पर्याप्त वृद्धि हुई है। इन राज्यों में प्रति हैक्टर गन्ने की उपज भी उत्तर भारत की तुलना में अधिक है। यही कारण है कि अधिकांश नयी चीनी मिलों की स्थापना इन राज्यों में हुई है।

आज जरूरत इस बात की है कि गन्ना उत्पादन की लागत को कम करने पर आधारित नई तकनीकियों से किसान भाइयों को अवगत करवाया जाये तथा गन्ना उत्पादकता में बढ़ोतरी पर ध्यान दिया जाए। आपकी अपनी लोकप्रिय पत्रिका ***'खेती'*** के इस गन्ना विशेषांक में हमने भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के तहत कार्यरत गन्ना अनुसंधान संस्थानों द्वारा विकसित गन्ना उत्पादन की ऐसी ही कुछ नई एवं उन्नत तकनीकियों को संजोने का काम किया है, जिनके उपयोग से गन्ने की उपज में और वृद्धि की जा सकती है। इसके अतिरिक्त कम से कम जल के उपयोग से गन्ने की खेती करने पर आधारित विधियों के बारे में भी बताने का प्रयास किया गया है। इस विशेषांक में गन्ने की हाल में विकसित नई किस्मों पर भी विस्तृत विवरण दिया जा रहा है। गन्ने से निर्मित होने वाले विभिन्न प्रसंस्करित उत्पादों को तैयार करने की विधियों पर भी उपयोगी जानकारी इस क्रम में दी गयी है। इसके साथ ही गन्ने की पपीते के साथ सहफसली खेती के फायदे, ड्रिप सिंचाई का गन्ने की खेती में प्रयोग, गन्ने में अवशेष प्रबंधन आदि पर भी लेख हैं।

उम्मीद करते हैं इस अंक में प्रस्तुत जानकारियां गन्ना उत्पादन से जुड़े किसानों के लिए मददगार सिद्ध होंगी।

(अशोक सिंह)

तापमान बदलाव से गन्ना खेती का बचाव

तपेन्द्र कुमार श्रीवास्तव, पुष्पा सिंह और **राम रतन वर्मा**
भाकृअनुप-भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ-226002 (उत्तर प्रदेश)

"भाकृअनुप-भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ में पिछले साठ वर्षों के दौरान हुए जलवायु परिवर्तन के वर्षा एवं तापमान पर पड़ने वाले प्रभाव पर अध्ययन किया गया। इससे यह ज्ञात हुआ कि इस अवधि में औसत वार्षिक वर्षा में 19.52 प्रतिशत की कमी हुई है। इसका प्रमुख कारण मानसूनी वर्षा में आई गिरावट (21.25 प्रतिशत) है। औसतन अधिकतम तापमान में इस दौरान 0.40^0 सेल्सियस की कमी के विपरीत औसत न्यूनतम तापमान में 0.21^0 सेल्सियस की बढ़त दर्ज की गई है। मौसम परिवर्तन की विभिन्न परिस्थितियों का गन्ने की फसल के बढ़वार की क्रांतिक अवस्थाओं जैसे कल्ले निकलने व लंबवत वृद्धि पर विपरीत प्रभाव पड़ने की आशंका है। इससे बचाव के लिए 2-3 अतिरिक्त सिंचाइयों की व्यवस्था के लिए सतह पर जल संग्रहण आवश्यक है। सिंचाई की दक्ष विधियों जैसे एक नाली छोड़कर, सिंचाई व टपक सिंचाई को अपनाने के साथ खेत में नमी संरक्षण के लिए सूखी पत्तियों का बिछावन प्रभावी पाया गया है। कम पानी के उपयोग से अधिक उपज देकर सूखा सहने वाली किस्मों की खेती तथा नाशीकीटों व रोगों से बचाव के लिए जैव नियंत्रण आधारित समेकित प्रबंधन की जरूरत है। फसल पकते समय शर्करा संचयन पर मौसम के विपरीत प्रभाव की आशंका को देखते हुए शीघ्र पकने वाली उच्च शर्करायुक्त किस्मों के अंतर्गत गन्ने का क्षेत्रफल बढ़ाना लाभदायक सिद्ध होगा।"

वनों की वृहद स्तर पर कटाई, आवागमन के साधनों के लिए जीवाश्म ईंधन का अधिकाधिक प्रयोग, खेती में हानिकारक रसायनों का बढ़ता उपयोग, उद्योगों एवं परिवहन से होने वाले प्रदूषण जैसे कारणों से वातावरण में कार्बनडाइऑक्साइड की मात्रा तेजी से बढ़ रही है। पिछले लगभग सौ वर्षों के अंतराल में पृथ्वी के वातावरण में कार्बनडाइऑक्साइड का स्तर 280 पीपीएम से बढ़कर 406 पीपीएम तक पहुंच गया है। ऐसे में 'ग्रीनहाउस' प्रभाव के कारण पृथ्वी का औसत तापमान 0.94^0 सेल्सियस तक बढ़ गया है। यदि प्रभावी उपाय नहीं अपनाए गए तो इस सदी के अंत तक इसमें लगभग 2^0 सेल्सियस तक बढ़ोतरी हो सकती है। एक अनुमान के अनुसार उत्तर भारत में इस अवधि में औसत तापमान में 0.65^0 सेल्सियस की बढ़त दर्ज की गई है। वैश्विक एवं स्थानीय स्तरों पर घटित होने वाली इन महत्वपूर्ण घटनाओं के कारण स्थानिक मौसम में बड़े बदलाव जैसे कि अतिवृष्टि, अनावृष्टि, वर्षा ऋतु के दौरान लंबे अंतराल तक वर्षा का अभाव, एक या दो दिनों में ही अत्यधिक वर्षा का होना, कई वर्षों तक लगातार सूखा पड़ना तथा शीत ऋतु में पाले एवं कोहरे की अधिकता आदि की बारंबारता में वृद्धि प्रत्यक्ष रूप से दिखाई दे रही है। स्थानीय मौसम में इन असामान्य बदलावों के कारण जहां एक ओर प्राकृतिक आपदाओं से जनजीवन संकटग्रस्त होता है, वहीं दूसरी तरफ खेती तथा फसलोत्पादन को भारी क्षति पहुंचती है।

उत्तर प्रदेश एक महत्वपूर्ण कृषि उत्पादक राज्य है। प्रदेश की अर्थव्यवस्था में कृषि एवं अन्य संबंधित उद्यमों से राज्य सकल घरेलू उत्पाद में लगभग 30 प्रतिशत के योगदान को देखते हुए खेती पर जलवायु परिवर्तन के संभावित प्रभावों का आकलन आवश्यक है। उपजाऊ मृदा, सतत प्रवाही नदियों तथा समशीतोष्ण जलवायु के कारण यहां सालभर फसल उत्पादन के लिए अनुकूल परिस्थितियां बनी रहती हैं। इस कारण सभी प्रकार की फसलों जैसे खाद्यान्न, दलहन, तिलहन, सब्जियों एवं नगदी फसल आदि का यहां वृहद स्तर पर उत्पादन होता है। गन्ना, इस प्रदेश में प्रमुख नगदी फसल होने के साथ-साथ ग्रामीण समृद्धि का वाहक भी है।

उत्तर प्रदेश का देश के सकल गन्ना क्षेत्रफल में लगभग 46 प्रतिशत (23 लाख

हैक्टर) का योगदान है। यह एक ऐसी फसल है, जिसका विपणन सुनिश्चित है तथा जो अन्य फसलों की तुलना में प्रतिकूल मौसम के प्रति अधिक सहिष्णु भी है। इससे यह फसल कृषकों के लिए अपेक्षाकृत अधिक लाभकारी सिद्ध होती है। राष्ट्रीय स्तर पर गन्ने के वार्षिक क्षेत्रफल में विगत दशक (2006-07 से 2016-17; औसत वार्षिक क्षेत्रफल (49.10 लाख हैक्टर) में पूर्ववर्ती दशक (1996-97 से 2005-06; औसत वार्षिक क्षेत्रफल (41.42 लाख हैक्टर) की तुलना में 18.54 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। देश के सर्वाधिक गन्ना उपजाने वाले राज्य उत्तर प्रदेश में भी इस अवधि के दौरान फसल के अंतर्गत क्षेत्रफल लगभग स्थिर बना रहा।

गन्ना बोने की गड्ढा विधि से अधिक उपज

जलवायु परिवर्तन का वर्षा पर प्रभाव

पिछले साठ वर्षों की लंबी अवधि में भाकृअनुप-भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ स्थित वेधशाला में मापित वर्षा के आंकड़ों के आधार पर औसत वार्षिक वर्षा 948.8 मि.मी. दर्ज की गई। ज्ञात हुआ कि साल दर साल वार्षिक वर्षा की औसत मात्रा कम होती जा रही है। इस अवधि को तीस वर्ष की दो समय अवधि में विभाजित करने से जलवायु परिवर्तन का वर्षा पर होने वाला प्रभाव स्पष्ट है। प्रथम समय अवधि (1956-1985) में औसत वार्षिक वर्षा जहां 1051.5 मि.मी. दर्ज की गई, वहीं द्वितीय समय अवधि (1986-2015) के दौरान मात्र 846.1 मि.मी. औसत वार्षिक वर्षा हुई। स्पष्ट है कि गत साठ वर्षों की अवधि में एक साल में होने वाली कुल वर्षा की मात्रा में 205.3 मि.मी. (19.5 प्रतिशत) गिरावट आई है (सारणी-1)। हर महीने वर्षा के आंकड़ों को देखने से पता चलता है कि दिसंबर से फरवरी तथा अप्रैल के अलावा अन्य सभी महीनों में होने वाली वर्षा की औसत मात्रा कम होती जा रही है। विशेषत: वर्षा ऋतु में अगस्त, सितंबर व जुलाई में होने वाली हर मासिक वर्षा में सर्वाधिक (52 मि.मी. या अधिक) कमी हुई है। खेती के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण वर्षा ऋतु की बात करें तो पता चलता है कि जून से लेकर सितंबर के दौरान द्वितीय दीर्घावधि में प्रथम दीर्घावधि की अपेक्षा औसत वर्षा 196.3 मि.मी. (21.25 प्रतिशत) कम हो गई है। इसी प्रकार रबी (अक्टूबर से फरवरी) के मौसम में भी वर्षा की मात्रा में 5.3 मि.मी. की कमी दर्ज की गई है। मानसून से पहले मार्च से मई तक होने वाली वर्षा की मात्रा में 3.7 मि.मी. की गिरावट हुई है। तुलनात्मक वर्षा के आंकड़े दर्शाते हैं कि प्रथम दीर्घावधि में अगस्त सर्वाधिक वर्षा (305.1) वाला था, जबकि द्वितीय दीर्घावधि में माहवार सर्वाधिक वर्षा (238.1 मि.मी.) जुलाई में दर्ज की गई। स्पष्ट है कि अगस्त में होने वाली वर्षा में जलवायु परिवर्तन के कारण जुलाई (17.8 प्रतिशत) की अपेक्षा अधिक गिरावट (27.5 प्रतिशत) आई है। वर्षा ऋतु के आखिरी दो महीने सितंबर व अक्टूबर में भी वर्षा की मात्रा में क्रमश: 25.2 तथा 35.6 प्रतिशत की कमी दर्ज की गई है। दूसरी तरफ जाड़े के महीने दिसंबर, जनवरी व फरवरी के दौरान वर्षा की मात्रा में क्रमश: 38.66, 22.44 तथा 87.27 प्रतिशत की बढ़त पाई गई है।

प्रथम व द्वितीय दीर्घावधि के वर्षा के आंकड़ों से स्पष्ट है कि जलवायु परिवर्तन के कारण उत्तर प्रदेश में वार्षिक वर्षा की मात्रा में कमी हुई है, जो मानसून के दौरान होने वाली वर्षा में आई गिरावट से सीधे संबंधित है। दूसरी तरफ दिसंबर से फरवरी में होने वाली वर्षा में बढ़त हुई है। वर्ष के अलग-अलग महीनों में वर्षा की मात्रा में उतार-चढ़ाव भी देखने को मिला है। इस प्रकार वार्षिक वर्षा में कमी, मासिक वितरण में परिवर्तन तथा जाड़े के महीनों में वर्षा का बढ़ता स्तर भी प्रदेश में गन्ने की बढ़वार तथा चीनी उत्पादन को प्रभावित कर सकता है।

उत्तर प्रदेश में गन्ना क्षेत्रफल में विगत दो दशकों के दौरान स्थिर वृद्धि के बावजूद वार्षिक गन्ना उत्पादन में उतार-चढ़ाव तथा प्रति हैक्टर उपज में कभी गिरावट, तो कभी मामूली बढ़त दर्ज की गई। इन स्थितियों के लिए जिम्मेदार अनेक कारकों में जलवायु परिवर्तन के कारण मौसम में होने वाले विभिन्न बदलाव सीधे तौर पर संबंधित हैं। वर्तमान में लगभग 30 लाख किसान तथा 119 चीनी मिलों में कार्यरत 5 लाख मिलकर्मी एवं उनके परिवारजन गन्ने की फसल पर प्रत्यक्ष रूप से निर्भर हैं। जलवायु परिवर्तन के कारण वार्षिक वर्षा और तापमान में बदलावों का पूरे वर्ष या अधिक अवधि तक खेत में रहने वाली इस फसल की वृद्धि, उपज एवं गुणवत्ता पर अन्य फसलों की अपेक्षा अधिक प्रतिकूल प्रभाव होने की आशंका है। यही कारण है कि मौसम के इन दो प्रमुख घटकों का प्रदेश में गन्ने की खेती पर पड़ने वाले प्रभाव का आकलन एवं उनसे बचने के उपायों का निरूपण आवश्यक है।

गन्ने की वृद्धि के लिए सामान्य मौसम

उत्तर प्रदेश में गन्ना फसल 12 से 15 माह की अवधि में तैयार होती है। इस दौरान गन्ने की वृद्धि एवं विकास की विभिन्न अवस्थाओं के लिए मौसम की भिन्न-भिन्न दशाएं अनुकूल पाई गई हैं। उदाहरण के लिए जमाव (बुआई से लेकर 45 दिनों बाद तक) के समय हल्का गर्म (20^0 से 32^0 सेल्सियस) एवं शुष्क मौसम, जो अक्टूबर-नवंबर तथा फरवरी-मार्च में मिलता है, गन्ने की आंखों के उचित प्रस्फुटन के लिए अनुकूल होता है। अक्टूबर तथा फरवरी में उत्तर प्रदेश में क्रमश: शरदकालीन व बसंतकालीन गन्ने की बुआई

गहरी नाली (ट्रेंच) विधि से गन्ना बुआई बदलते मौसम में लाभप्रद

की संस्तुति की गई है। इस दौरान औसत दैनिक तापमान 20^0 से 32^0 सेल्सियस के बीच रहता है। जलवायु परिवर्तन के कारण यदि फसल की इस अवस्था के दौरान तापमान के स्तर में परिवर्तन होता है तो बुआई के समय एवं विधियों में बदलाव आवश्यक होगा। गन्ने का अच्छा जमाव सुनिश्चित करने के पश्चात लाभकारी उपज प्राप्त करने के लिए पर्याप्त संख्या में कल्लों का निकलना जरूरी होता है। इसके लिए गर्म (30^0 से 35^0 सेल्सियस) तथा शुष्क मौसम आवश्यक होता है।

उत्तर भारत में सामान्यत: अप्रैल से लेकर जून के महीने (बुआई के 45 दिनों बाद से लेकर 120 दिनों बाद) तक ऐसा मौसम होता है, जिसमें इस दौरान अत्यधिक मात्रा में कल्ले निकलते हैं। इनको इष्टतम स्तर पर रखने के लिए मई के अंत तक गन्ने की पंक्तियों पर मृदा चढ़ाने की संस्तुति की जाती है। कल्ले निकलने की अवधि में गन्ने की फसल को सिंचाई की अधिक आवश्यकता होती है। इसके लिए प्रमुखत: भूजल का उपयोग किया जाता है। इस अवधि में अन्य फसलों की अनुपस्थिति में गन्ने की फसल को पर्याप्त सिंचाई मिलने की संभावना अधिक होती है। यद्यपि भूजल के गिरते स्तर तथा वर्षा की मात्रा में लगातार होती गिरावट के कारण भूगर्भीय जल स्रोतों के कमी होने से आने वाले वर्षों में गन्ने की सिंचाई के लिए संकट उत्पन्न हो सकता है। ऐसी स्थिति में उच्च सिंचन क्षमता तथा जल उत्पादकता देने वाली सिंचाई विधियों को अपनाने के साथ-साथ सतही व भूगर्भीय जल का संचयन एवं संरक्षण अनिवार्य होगा।

मौसम में होने वाले किसी भी प्रकार के बदलाव का गन्ने की उपज एवं शर्करा प्रतिशत पर प्रतिकूल असर होता है, जिससे कुल चीनी उत्पादन प्रभावित होता है। फसल के विकास की अंतिम अवस्था है पकने की अवस्था। इसमें गन्ने की पोरियों में शर्करा का संचयन अधिक होता है तथा वानस्पतिक वृद्धि अत्यंत कम हो जाती है। यह अवस्था बुआई के 270 दिनों बाद से लेकर फसल के कटने तक बनी रहती है। हल्की ठंड (10^0 से 20^0 सेल्सियस) एवं शुष्क मौसम (आपेक्षिक आर्द्रता 50 प्रतिशत से कम) में शर्करा का संचयन उच्च स्तर पर होता है।

सारणी 1. उत्तर प्रदेश में वर्ष के विभिन्न महीनों में औसत अधिकतम तापमान (1956-2015 अवधि पर आधारित) एवं दीर्घावधि में होने वाला बदलाव

महीना	औसत अधिकतम तापमान (डिग्री सेल्सियस)	मानक विचलन	भिन्नता गुणांक (प्रतिशत)	प्रथम दीर्घावधि औसत (1956-1985)	द्वितीय दीर्घावधि औसत (1986-2015)	तापमान में बदलाव (डिग्री सेल्सियस))
जनवरी	21.9	2.9	13.3	22.9	20.9	-2.0
फरवरी	25.4	1.8	7.1	25.6	25.3	-0.3
मार्च	31.3	1.7	5.5	31.7	30.9	-0.7
अप्रैल	37.0	3.2	8.8	37.5	36.5	-0.9
मई	39.2	2.1	5.4	39.6	38.8	-0.8
जून	37.8	2.7	7.2	37.8	37.8	-0.1
जुलाई	33.6	1.2	3.6	33.5	33.7	0.2
अगस्त	33.0	1.5	4.5	32.6	33.3	0.7
सितंबर	32.8	1.1	3.4	32.8	32.8	0.1
अक्टूबर	32.2	2.3	7.1	32.3	32.1	-0.2
नवंबर	28.5	1.5	5.1	28.5	28.6	0.1
दिसंबर	23.9	1.3	5.4	24.1	23.6	-0.5
वार्षिक	**31.4**	**0.7**	**2.3**	**31.6**	**31.2**	**-0.4**

सामान्यत: अक्टूबर से लेकर मार्च तक उत्तर प्रदेश के गन्ना उत्पादक क्षेत्रों में इस प्रकार का मौसम रहता है। कभी-कभी जाड़े के मौसम में अधिक वर्षा, कोहरा व पाला पड़ने से गन्ने में शर्करा की मात्रा कम हो जाती है और मिलों के चीनी उत्पादन पर विपरीत प्रभाव होता है।

गन्ने की फसल पर प्रभाव व बचाव के उपाय

फसल के पर्याप्त जमाव तथा उचित बढ़वार के लिए गन्ना बुआई के समय वातावरण का तापमान व गन्ने के टुकड़ों और खेत की मृदा में नमी का स्तर सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। उत्तर प्रदेश में गन्ना बुआई की दोनों प्रमुख ऋतुओं शरद (अक्टूबर-नवंबर) व बसंत (फरवरी-मार्च) में से शरद ऋतु के दौरान तापमान में कोई विशेष बदलाव नहीं आया है, जबकि वर्षा की मात्रा में काफी कमी हुई है। स्पष्ट है कि शरदकालीन गन्ने की बुआई के समय में बदलाव आवश्यक नहीं है किन्तु वर्षा में होने वाली कमी के कारण खेत की तैयारी से पहले पलेवा करना आवश्यक होता है। फरवरी-मार्च के दौरान औसत न्यूनतम तापमान में बढ़त (0.63^0 से 0.70^0 सेल्सियस तक) के कारण नमी के तीव्र ह्रास की आशंका को देखते हुए गन्ने की बुआई जल्दी से जल्दी पूर्ण करने की आवश्यकता है। इस दौरान वर्षा की मात्रा में बढ़त के कारण मौसम संबंधी सूचनाओं के प्रति जागरूकता की भी जरूरत है। इससे बुआई के ठीक बाद होने वाली भारी

वर्षा के विपरीत प्रभाव से बचाव हो सकता है। गन्ना बुआई के बाद वर्षा होने की दशा में खेत में पपड़ी बन जाती है, जिसको तोड़ना आवश्यक होता है अन्यथा गन्ने के जमाव पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। ऐसी स्थिति में जमीन की ऊपरी सतह की उथली गुड़ाई की संस्तुति की जाती है। प्रदेश के उन क्षेत्रों में, जहां गन्ने की बुआई देर से यानी 15 अप्रैल के बाद की जाती है, विशेष सावधानी बरतने की जरूरत है। इस अवधि में होने वाली वर्षा की कमी तथा न्यूनतम तापमान में बढ़त को देखते हुए गन्ने की बुआई जितनी जल्दी हो सके, कर लेनी चाहिए। कल्ले निकलने की अवधि में कमी की भरपाई के लिए गन्ने की दो पंक्तियों के बीच की दूरी 60 सें.मी. ही रखनी चाहिए।

गन्ने के साथ लोबिया की अन्त:फसली खेती

अप्रैल से लेकर वर्षा प्रारंभ होने तक गन्ने की फसल में कल्लों की संख्या में तेजी से वृद्धि होती है। इसके लिए पर्याप्त नमी एवं पोषक तत्वों की उपलब्धता अनिवार्य है। जलवायु परिवर्तन के फलस्वरूप मई-जून के दौरान वर्षा में होने वाली कमी एवं न्यूनतम तापमान में बढ़त के कारण खेत की नमी में तेजी से कमी आने पर ऐसी तकनीकों को अपनाना आवश्यक है। इस प्रकार इस दौरान सिंचाई के लिए पानी की उपलब्धता बनी रहे और नमी का ह्रास भी न्यूनतम हो। इससे केवल गन्ने की नालियों में अथवा एक नाली छोड़कर सिंचाई करने से पानी की बचत होती है। गन्ने की पंक्तियों के बीच सूखी पत्तियों का बिछावन के रूप में प्रयोग करने से खरपतवार की रोकथाम के साथ-साथ नमी का भी संरक्षण होता है। सिंचाई जल का कम से कम प्रयोग करके गन्ने का अधिकाधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिए ड्रिप (टपक) सिंचाई की विधि सफल साबित हुई है। शोध परिणामों से स्पष्ट है कि सतही टपक सिंचाई अथवा अधोसतही टपक सिंचाई अपनाने से 30-40 प्रतिशत जल की बचत के साथ गन्ने की उपज में भी 20-25 प्रतिशत की वृद्धि होती है। गन्ने के एक हैक्टर खेत के लिए टपक सिंचाई प्रणाली को लगाने में 1.5 से 2.0 लाख रुपये तक का खर्च आता है, जो पौध फसल के बाद 2 या 3 पेड़ी लेने में लाभकारी होती है। जलवायु परिवर्तन के कारण मानसूनी वर्षा में कमी (19.6 प्रतिशत) तथा जुलाई से सितंबर तक अधिकतम व न्यूनतम तापमान में वृद्धि के फलस्वरूप गन्ने की लंबवत बढ़त पर सर्वाधिक विपरीत प्रभाव पड़ता है। इससे उत्पादन लागत में बढ़त के बावजूद उत्पादकता में संतोषप्रद वृद्धि नहीं हो पाती है। दूसरी तरफ माहवार वर्षा में बदलाव जैसे अगस्त की तुलना में जुलाई में अधिक वर्षा होने से नाशीकीटों व रोगों के आपतन तथा संक्रमण व्यवहार में परिवर्तन दिख जाता है। बेधककीटों जैसे तनाबेधक, इंटरनोड बेधक व चोटीबेधक का गन्ने पर आक्रमण बढ़ने के साथ ही कुछ नये रोग जैसे पीली पत्ती रोग (वाईएलडी) का प्रकोप बढ़ जाता है। गन्ने की वृद्धि पर वर्षा की कमी के विपरीत प्रभाव को अतिरिक्त सिंचाई देकर कुछ हद तक रोका जा सकता है, किन्तु इसी अवधि में धान की रोपाई होने के कारण यह आसान नहीं होता। निदान रूप में सूखा सहनशील अथवा कम पानी में अधिक उपज देने वाली किस्मों का विकास एवं खेती के लिए उनका चयन उचित होगा। कीट एवं रोग प्रतिरोधी किस्मों की खेती के साथ-साथ जैविक नियंत्रण आधारित एकीकृत कीट व रोग प्रबंधन, जलवायु परिवर्तन की दशा में अधिक सफल सिद्ध होगा। ■

जलवायु परिवर्तन का तापमान पर प्रभाव

वर्ष 1956-2015 के दौरान वार्षिक औसत अधिकतम तापमान 31.4^{0} सेल्सियस तथा औसत न्यूनतम तापमान 18.1^{0} सेल्सियस दर्ज किया गया था। वर्ष के विभिन्न महीनों में मई का महीना सबसे अधिक गर्म तथा जनवरी सबसे ठंडा रहता है। साथ ही औसत न्यूनतम तापमान सबसे अधिक जून (26.3^{0} सेल्सियस) एवं सबसे कम जनवरी (7.3^{0} सेल्सियस) के महीने में दर्ज किया जाता है। तीस वर्षीय अवधि के प्रथम एवं द्वितीय दीर्घावधियों की तुलना से पता चला है कि द्वितीय दीर्घावधि में औसत अधिकतम तापमान में 0.4^{0} सेल्सियस की कमी आई है। इसी अवधि में औसत न्यूनतम तापमान में 0.21^{0} सेल्सियस की बढ़त दर्ज की गई है। औसत अधिकतम तापमान के माहवार बदलावों से पता चलता है कि दिसंबर से लेकर जून तक तापमान लगातार कम हो रहा है जबकि जुलाई, अगस्त व सितंबर में अधिकतम तापमान में वृद्धि हुई है। जनवरी के अधिकतम तापमान में सबसे अधिक (2^{0} सेल्सियस) गिरावट हुई है, जबकि अगस्त में सबसे अधिक वृद्धि हुई है। मासिक औसत न्यूनतम तापमान में सर्वाधिक बढ़त फरवरी, मार्च व सितंबर में देखी गई एवं अक्टूबर, दिसंबर, जनवरी तथा अप्रैल में मामूली कमी दर्ज हुई। तापमान का विशेष उल्लेखनीय बदलाव मानसून ऋतु के दौरान जुलाई से सितंबर में देखने को मिला जब औसत अधिकतम व न्यूनतम दोनों ही स्तरों में वृद्धि देखी गई। इसके विपरीत दिसंबर एवं जनवरी में तापमान के दोनों ही स्तरों में कमी दर्ज की गई है। यह स्पष्ट है कि पिछले तीन दशकों (1986-2015) में उत्तर प्रदेश के तापमान स्तर में बदलाव आया है। वार्षिक औसत अधिकतम तापमान में गिरावट व न्यूनतम तापमान में बढ़त, जहां एक ओर आपेक्षिक तापमान असमानता में कमी दर्शाता है, वहीं दूसरी तरफ मौसम के अन्य कारकों में हुए बदलाव की ओर भी इंगित करता है। वर्ष के विभिन्न महीनों में तापमान में होने वाले भिन्न-भिन्न बदलाव वर्षा की मात्रा में होने वाले समकालीन विपरीत बदलाव से प्रभावित होते हैं।

गन्ने का दुश्मन है तना छिद्रक

हरी चन्द, अनिल कुमार और **नागेन्द्र कुमार**
कीट विज्ञान विभाग, गन्ना अनुसंधान एकक,डा. राजेन्द्र प्रसाद केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय,
पूसा, समस्तीपुर-848125 (बिहार)

"तना छिद्रक, गन्ने का एक महत्वपूर्ण विनाशकारी कीट है। यदि समय पर इस कीट की रोकथाम नहीं की जाती है तो शत-प्रतिशत फसल की क्षति हो सकती है। यह कीट क्षेत्रीय स्तर पर सर्वप्रथम असोम में सन् 1909 में फसल पर देखा गया। इसके बाद सन् 1957 में इस कीट के द्वारा उत्तरी बिहार के जिलों में गन्ने की फसल को नुकसान पहुंचाते हुए देखा गया। इस कीट का गण-लेप्डिोप्टोरा, कुल-पाइरैलिडी एवं वंश काइलो है। विज्ञान जगत में इसको काइलो *ट्युमिडीकोस्टैलिस* के नाम से जाना जाता है।"

गन्ना छिद्रक के प्रकोप से ग्रस्त फसल कीट की समय पर रोकथाम हेतु इसकी पहचान, जीवनचक्र, संक्रमण समय, क्षति के लक्षण और प्रबंधन के उपाय की जानकारियां गन्ना उत्पादक को होनी अति आवश्यक हैं। अधिक दिनों तक लगातार भारी वर्षा, फसल में जल-जमाव की स्थिति, उच्च तापमान और उच्च आपेक्षिक आर्द्रता होने पर इस कीट के आक्रमण की आशंका काफी प्रबल हो जाती है।

कीट की पहचान

इस कीट की चार अवस्थाएं होती हैं; जो अंडा, लार्वा, प्यूपा एवं वयस्क हैं।

अंडा

ताजा अंडा आकार में चपटा तथा मटमैले सफेद रंग का होता है। अंडे के ऊपर हल्के रंग की झलक होती है। एक अंडे का औसत व्यास 0.5 मि.मी. होता है। अंडा समूहों की लंबाई 8-10 मि.मी. तथा चौड़ाई 2-4 मि.मी. तक होती है। ये अंडे 2-4 की पंक्तियों में खपरैल की छत के आकार में ऊपर की पहली से तीसरी खुली पत्तियों के नीचे स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ते हैं।

लार्वा

नवनिर्मित लार्वा का शरीर अत्यधिक बालों से घिरा रहता है और गहरा भूरा रंग लिए होता है। सिर चौड़ा एवं शरीर के अन्य भागों की अपेक्षा गाढ़े भूरे रंग का होता है। इसकी लंबाई 1.5 मि.मी. तथा चौड़ाई 0.5 मि.मी. होती है। काले बिंदुओं की चार पंक्तियां एक-दूसरे के समानांतर सारे शरीर पर लंबवत रहती हैं। लार्वा के शरीर का आकार बढ़ने

पर इन बिंदुओं की पंक्तियां अधिक स्पष्ट होती जाती हैं। पूर्ण विकसित लार्वा 25-30 मि.मी. लंबा एवं 3-4 मि.मी. चौड़ा होता है। लार्वा की पीठ पर चार गुलाबी रंग की स्पष्ट धारियां दिखाई देती हैं, जिसमें से दो उपपृष्ठीय तथा दो आधारीय होती हैं। लार्वा के आकार में अंतर जलवायु के परिवर्तन पर आधारित होता है।

प्यूपा

प्यूपा, प्राथमिक अवस्था में हल्के बादामी रंग का होता है, जो 4-8 दिनों के पश्चात गहरे बादामी रंग में परिवर्तित हो जाता है। नर एवं मादा प्यूपा के आकार में काफी अंतर होता है। नर प्यूपा की लंबाई 10-12 मि.मी. और मादा की 15-17 मि.मी. होती है। सिर के अग्र भाग पर दो काइटिनिक प्रक्षेप ऊपर की ओर उठे रहते हैं। पांचवें, छठे और सातवें उदरीय खंडों को कांटे घेरे रहते हैं, जो पांचवें तथा छठे खंड पर अधूरे तथा सातवें खंड पर पूर्ण वृत्त बनाते हैं। सभी कांटे द्विविभाजित तथा अत्यधिक सख्त होते हैं।

वयस्क कीट

नर वयस्क कीट (तितली) मादा से

छोटे तथा रंग में गाढ़े होते हैं। पंख फैलावस्था में नर का आकार 21-26 मि.मी. तथा मादा का 28-31 मि.मी. होता है। अग्र पंख दालचीनी या हल्का पीलापन लिए हुए बादामी रंग के होते हैं। काले रंग के बहुत से धब्बे पंख के समस्त भाग पर फैले रहते हैं। पिछला पंख श्वेत होता है, परंतु नर वयस्क के पंखों के पिछले भाग में कुछ हल्के भूरे रंग के धब्बे होते हैं।

प्यूपा अवस्था सितम्बर-अक्टूबर में 18-26 दिनों की होती है, परंतु प्यूपा अवस्था वातावरण परिवर्तन के साथ परिवर्तित भी हो सकती है। जुलाई से अक्टूबर में वायुमंडल का उच्चतम तापमान 29-35^0 सेल्सियस तथा आपेक्षिक आर्द्रता 59-83 प्रतिशत होती है। उस समय में इस कीट का एक जीवन-चक्र 44-83 दिनों में पूर्ण होता है।

जीवन चक्र

गन्ना छिद्रक कीट के प्रौढ़ रात्रिचर होते हैं। प्रौढ़ कीटों का बनना गोधूलि से प्रारंभ हो कर अर्धरात्रि तक चलता रहता है। यह सक्रियता 8-11 बजे रात्रि में होती हैं। इस कीट के प्रौढ़ अत्यन्त ही प्रकाश धनात्मक होते हैं और प्रकाश पर सरलता से आकर्षित होते हैं। मादा द्वारा अंडे 2-4 की पंक्तियों में ऊपर की पहली से तीसरी पत्तियों की निचली सतह पर समूहों में दिये जाते हैं। एक मादा कीट एक ही रात्रि में 3-4 अंड समूहों का अवपात कर देती है। प्रत्येक अंडे के समूह में 80-250 अंडे हो सकते हैं। मादा अपने पूरे जीवनकाल में 4-5 अंड समूहों में 800 अंडे तक भी दे सकती है। अंडों से लार्वा बनने की अवधि यद्यपि 7-11 दिनों की होती है, परंतु अधिकांश अंडे 8 दिनों में फूट जाते हैं। अंडों से लार्वा बनने का क्रम प्रात:काल होता है, जो एक ही अंड समूह में 2-3 दिनों तक चलता रहता है। इस कीट के नवनिर्मित लार्वा व्यवहार में संगठित तथा चलने-फिरने में आलसी होते हैं। एक अंड समूह के समस्त लार्वा गन्ने की फसल के अधिक प्रकाशमय किनारे की तरफ जाते हैं। वे 15-20 के झुंड में इकट्ठा होकर पत्तियों की सतह पर खाते रहते हैं। पत्तियों की सतह पर खाते हुए चलते-चलते पर्णच्छद (लीफशीथ) की भीतरी सतह पर पहुंच कर तने के अंदर प्रविष्ट कर जाते हैं। इसके पश्चात लार्वा का झुंड ऊपर की पोरियां (गुल्लियों) में एक या कई छिद्रों के द्वारा तने के अंदर प्रवेश कर जाते हैं। लार्वा के झुंड लगभग 10 दिनों तक संगठित अवस्था में रह कर अलग-अलग गन्ने को ग्रसित कर क्षति पहुंचाते रहते हैं। इस कीट की यही लार्वा अवस्था गन्ने को क्षति पहुंचाती है।

क्षति के लक्षण

गन्ने के खेत में इस कीट की उपस्थिति का संकेत गन्ने के पुंजों में कुछ गन्नों के शिखर सूखे होने पर मिलता है। ग्रसित गन्ने के तनों का निकट से निरीक्षण करने पर दो प्रकार के अलग-अलग प्रकोप का स्पष्ट रूप से पता चल जाता है, जिसको प्राथमिक तथा द्वितीय आक्रमण कहते हैं।

प्राथमिक आक्रमण

गन्ने की तीन से चार गुल्लियां (पोर) के बीच नवनिर्मित लार्वा किसी एक गुल्ली में इकट्ठे होकर अंदर ही अंदर गन्ने को ग्रसित करते रहते हैं। ऐसी गुल्लियों को चीरकर देखा जाये तो लार्वा की संख्या 15-20 तक हो सकती है। ग्रसित गुल्लियों के छिद्रों से ताजा कीट मल गीला तथा चमकीले रंग का बाहर निकलता हुआ दिखाई देता है। ग्रसित गन्नों की ऊपरी पत्तियां कुछ समय बाद पूर्ण रूप से सूख जाती हैं। गन्ने की ग्रसित गुल्लियां इस प्रकार छिद्रित हो जाती हैं कि तनों को थोड़ा सा झटका देने पर अथवा तेज हवा चलने पर ये आसानी से टूटकर गिर जाते हैं।

द्वितीय आक्रमण

इस प्रकोप में विकसित पिल्लुओं द्वारा आसपास के स्वस्थ पौधों या प्राथमिक ग्रसित पौधों के निचले स्वस्थ भागों को दोबारा ग्रसित किया जाता है। इसमें ग्रसित पौधों के अगोले नहीं सूखते हैं। द्वितीय प्रकोप की स्थिति का जायजा निम्न लक्षणों से स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है:

- पिल्लुओं का मल लकड़ी के बुरादे के आकार में प्रचुर मात्रा में ग्रसित पौधों से छिद्रों में निकलता रहता है।
- पौधे हरे रंग के दिखाई देते हैं।
- अत्यधिक क्षतिग्रस्त पौधों का ऊपरी भाग हवा के झोकों से सरलतापूर्वक नहीं टूटता है और पौधों का अगोला नहीं सूखता है।
- पिल्लुओं के अधिक संख्या में एक स्थान पर एकत्रित होकर पौधों को ग्रसित करने से कई प्रवेश छिद्र (6-10) एक ही पोरी में पाये जा सकते हैं।

द्वितीयक प्रकोप से क्षतिग्रस्त गन्ना फसल

क्षति की सीमा

इस कीट का फरवरी-मार्च में रोपे गए गन्नों एवं पेड़ी फसल की अपेक्षा अक्टूबर में रोपे गए गन्ने में अधिक प्रकोप देखा गया है। इसके प्रकोप से गन्ने के विभिन्न प्रभेदों में 25-85 टन प्रति हैक्टर तक पैदावार में कमी हो सकती है। चीनी की उपलब्धता में भी 3-25 प्रतिशत तक कमी हो सकती है।

क्षति की अनुकूल परिस्थितियां

मध्यम से उच्चतम तापमान तथा उच्च आर्द्रता, जो जुलाई से सितम्बर तक पाई जाती है, इस छिद्रक कीट की वृद्धि

के लिए उपयुक्त होती है। चिकनी मिट्टी, जल जमाव तथा बाढ़ से आक्रान्त गन्ने की फसल जिससे वातावरण में आर्द्रता बढ़ती है, इस कीट की वृद्धि के लिए सहायक होती है। पेड़ी फसल में इस कीट का अत्यधिक प्रकोप देखा गया है।

समेकित प्रबंधन

- गन्ने के खेत का निरीक्षण समय-समय पर अवश्य करते रहें। यदि जल जमाव की स्थिति दिखाई दे तो अविलंब जल निकास की व्यवस्था करें।
- एकल फसल प्रणाली नहीं अपनानी चाहिए।
- रोपण के समय दो कतारों के बीच की दूरी 90 सें.मी. से कम नहीं रखें।
- फसल में नाइट्रोजन की अनुशंसित मात्रा का प्रयोग करना चाहिए। नाइट्रोजन की अधिक मात्रा देने पर फसल की अनावश्यक बढ़वार होती रहेगी और फसल गिरने की आशंका बन सकती है। ऐसी स्थिति बनने पर कीट के आक्रमण की आशंका प्रबल हो सकती है।
- गन्ने की पत्तियों पर यदि अंडे नजर आयें तो उनको पत्तियों समेत नष्ट कर दें। इसके साथ ही प्रकाश पाश खेत के पास लगा दें। ऐसा करने से वयस्क कीट प्रकाश चर होने के नाते प्रकाश पाश के द्वारा एकत्रित किए जा सकते हैं। फलस्वरूप कीट की वृद्धि रुक जायेगी, जिससे फसल सुरक्षित हो सकती है। एक हैक्टर में तीन से चार प्रकाश पाश लगाये जा सकते हैं। प्रयास रहे कि प्रकाश पाश का वितरण फसल में समान रूप से हो एवं इसकी ऊंचाई सदैव ऊपर रहे, ताकि प्रकाश कीटों को दिखाई दे सके।

लार्वा

क्षतिग्रस्त गन्ना

- यदि इस कीट का आक्रमण हो गया है तो अविलंब ग्रसित गन्नों को काटकर एक स्थान पर एकत्रित कर नष्ट कर देना चाहिए। अत्यधिक प्रकोप होने पर कटाई का कार्य सप्ताहिक अंतराल पर करते रहना चाहिए ताकि इस कीट की वृद्धि को रोका जा सके।
- परिणामों से यह निष्कर्ष निकल कर आया है कि रासायनिक नियंत्रण इस विनाशकारी कीट के लिए कम प्रभावी है।
- प्राकृतिक शत्रु, जो इस कीट के अंडे एवं लार्वा को ग्रसित करते पाये गए हैं, उनमें ट्राइकोग्रामा किलोनिस प्लासी छिद्रक के अंडों का प्रभावी परजीवी है। 'अपेन्टेलेस प्लौविपस' इस कीट के लार्वा का परजीवी है। इस प्रकार इन दोनों परजीवियों के प्रयोग करने से इस कीट के प्रकोप को काफी हद तक रोका जा सकता है। ■

गन्ना फसल में अंतर-फसलचक्र के लिए संशोधित ट्रेंच

श्री जबरपाल सिंह सुपुत्र श्री केहरी सिंह, निवासी करनपुर गांव, मीरगंज ब्लॉक, बरेली, उत्तर प्रदेश द्वारा पारंपरिक विधि से गन्ना की खेती की जाती थी। इन्होंने ट्रेंच ओपनर का उपयोग करते हुए अंतर-फसलों के साथ गन्ना रोपाई की ट्रेंच विधि को अपनाया। ट्रेंच ओपनर द्वारा हटाई गई मृदा असमतल हुई जिससे अंतर फसल की बुआई के लिए बीज क्यारियां तैयार करने हेतु 20-25 अतिरिक्त श्रमिकों की आवश्यकता पड़ी। इसमें बीज क्यारियों में सुधार करने में समय लगता है, इसलिए उसमें से नमी समाप्त हो गई जिससे कि अंतर-फसल का अंकुरण प्रभावित हुआ।

श्री सिंह द्वारा ट्रेंच ओपनर को संशोधित किया गया। एक लेवलिंग अटेचमेंट के साथ 120 से 180 सें.मी. का समायोज्य अंतराल रखा गया, जो कि अंतर-फसलों के लिए बीज क्यारियां बनाता है। शाकीय मटर, आलू, टमाटर, फूलगोभी, बंदगोभी, मसूर और सरसों जैसी अंतर-फसलों की समय से बुआई करने पर मृदा में उपलब्ध नमी का उपयोग सुनिश्चित किया गया। गन्ना रोपाई की ट्रेंच विधि से जहां गन्ना की उपज तिगुनी हुई, वहीं इससे अंतर-फसल की अतिरिक्त उपज भी हासिल हुई। वर्तमान में बरेली क्षेत्र में 25 प्रतिशत से अधिक गन्ने की खेती ट्रेंच विधि से की जाती है। समायोज्य ट्रेंच ओपनर द्वारा दो ट्रेंच के बीच में 120 से 180 सें.मी. तक आवश्यकता अनुसार स्थान बढ़ाने की स्वतंत्रता प्रदान की गई है और इससे प्रति हैक्टर लगभग 20-25 श्रमिकों की बचत हुई है। लेवलर समायोजन से समय पर बीज क्यारियों को तैयार करने में मदद मिलती है। इससे मृदा की नमी का संरक्षण करते हुए तुरंत बुआई में समय एवं श्रमिक की बचत होती है। इनके फार्म का दौरा करने वाले किसानों और इनके व्हाट्सऐप ग्रुप के सदस्यों ने लेवलर के साथ इस संशोधित समायोज्य ट्रेंच ओपनर को अपनाया है।

IFFCO 50
1967
2017
पूर्णतः सहकारी स्वामित्व
Wholly owned by Cooperatives
स्वर्ण जयंती
Golden Jubilee

इफको के स्वर्णिम 50 वर्ष

कृषि, सहकारिता एवं ग्रामीण विकास को समर्पित

नीम लेपित यूरिया | एन पी के | डी ए पी | एन पी | बॉयो फर्टिलाइजर
वॉटर सोल्यूबल फर्टिलाइजर | माईक्रो न्यूट्रीएन्ट फर्टिलाइजर

Follow us :
YouTube IFFCO live
iffcolive.com

IFFCO
पूर्णतः सहकारी स्वामित्व

INDIAN FARMERS FERTILISER COOPERATIVE LIMITED
IFFCO Sadan, C-1 District Centre, Saket Place, New Delhi - 110017, INDIA
Phones : 91-11-26510001, 91-11-42592626. Website : www.iffco.coop

उच्च चीनी परता के लिए गन्ने का रखरखाव

राधा जैन, चन्द्र पाल सिंह, अमरेश चन्द्रा, पुष्पा सिंह, सुशील सोलोमन और **अश्विनी दत्त पाठक**
भाकृअनुप–आईआईएसआर, लखनऊ–226002 (उत्तर प्रदेश)
चन्द्र शेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर–208002 (उत्तर प्रदेश)

"गन्ने की फसल का विश्व के चीनी उत्पादन में 78 प्रतिशत का योगदान है। उचित अवस्था में विकसित ताजे गन्ने में 25 प्रतिशत शर्करा संग्रहित करने की क्षमता होती है। कटाई के समय गन्ने के रस की गुणवत्ता इसमें उपस्थित शर्करा की सांद्रता द्वारा मापी जाती है, जो कि अधिक मात्रा में होनी चाहिए तथा सुक्रोजविहीन शर्करा की मात्रा कम होनी चाहिए। परिपक्वता की अवधि में गन्ने के तने के सम्पूर्ण भाग में सुक्रोज की मात्रा बढ़ती है। पूर्ण परिपक्व काटी गई फसल में कुछ ही दिनों बाद शर्करा की मात्रा का ह्रास होने लगता है। उच्च परिवेशीय तापमान, कटाई के पूर्व फसल के जलाने, कटाई एवं परिवहन के दौरान गन्ने में क्षति हो जाने और सूक्ष्मजीवों के प्रकोप के कारण शर्करा में और भी कमी होने लगती है।"

उपोष्ण भारत में गन्ने की कटाई के उपरांत और चीनी मिलों में प्रसंस्करण की प्रक्रिया के दौरान शर्करा में ह्रास, अधिकतर चीनी मिलों की एक गंभीर समस्या है। कटाई के 72 घंटों बाद गन्ने को रखने पर उसमें नमी कम होने के कारण वजन में कमी आने लगती है और शर्करा के इन्वर्जन के कारण गन्ने के रस में शर्करा की मात्रा का ह्रास होने लगता है। कटाई से मिल तक पहुंचने में हुई देरी के अलावा अन्य कारकों जैसे आसपास का तापमान, आर्द्रता, गन्ने की प्रजाति, भंडारण की अवधि, इन्वर्टेज की गतिविधि और परिपक्वता की स्थिति आदि भी चीनी परता में गिरावट के लिए उत्तरदायी हैं।

पेराई में देरी से हानि

पेराई में देरी के कारण गन्ने की गुणवत्ता में कमी आती है जिससे गन्ना कृषक व चीनी उद्योग दोनों ही प्रभावित होते हैं। कटे हुए गन्ने की नमी में कमी होने कारण गन्ने के वजन में गिरावट आने से किसानों को हानि होती है, क्योंकि गन्ने का मूल्य वजन के आधार पर मिलता है। उपोष्ण भारत में कटाई के उपरांत 72 घंटे के अंदर 7-10 प्रतिशत गन्ने का ह्रास होता है। कटे हुए गन्ने की चीनी मिल तक पहुंचने में देरी का मुख्य आर्थिक नुकसान किसानों को होता है। उत्तर भारत में प्रचलित राज्य परामर्शी मूल्य (एसएपी) के अनुसार गन्ना उत्पादकों को यह नुकसान 200 रुपये प्रति टन तक हो सकता है।

कटाई उपरांत शर्करा की कमी

कटाई उपरांत शर्करा ह्रास से तात्पर्य है कि किसी प्रकार का मात्रात्मक या गुणात्मक परिवर्तन जो कि गन्ने की कटाई से प्रसंस्करण के दौरान इसकी संरचना में पाया जाता है। यह कमी गन्ना कटाई के तुरंत बाद शुरू हो जाती है, जो बाद में अधिक तापमान, कटाई से पूर्व जलाने, कटाई के बाद मिल पहुंचने में देरी एवं सूक्ष्मजीवों के प्रकोप से बढ़ती है। कटाई के उपरांत गन्ने के सूखने से इसके भार में 15-17 प्रतिशत का ह्रास पाया गया। गन्ने की कटाई के उपरांत समय के साथ इसकी नमी एवं शर्करा में कमी का प्रतिशत बढ़ता है और रिड्यूसिंग शुगर की मात्रा भी बढ़ती है। इस अवस्था में कुछ सूक्ष्मजीव भी विकसित हो जाते हैं, जो कार्बनिक एसिड एवं डेक्स्ट्रॉन उत्पन्न करते हैं, जिससे गन्ना खट्टा हो जाता है। शर्करा परता में ह्रास एवं गोंद की मात्रा में बढ़ोतरी से जूस का गाढ़ापन बढ़ जाता है। इस प्रकार भौतिक, जैवरासायनिक एवं सूक्ष्मजीवीय विकृतियों के कारण कटा हुआ गन्ना खराब हो जाता है। इसलिए शर्करा परता में सुधार तथा कृषकों एवं चीनी मिल मालिकों की बेहतर आमदनी के लिए आज के परिप्रेक्ष्य में गन्ने के सुचारू प्रबंधन की आवश्यकता है।

शर्करा क्षति का परिमाण

कटाई एवं प्रसंस्करण के बीच की

गन्ने का प्रबंधन है जरूरी

कटाई उपरांत गुणवत्ता ह्रास के मुख्य कारण

- प्रजातियों का स्वभाव एवं उनका इन्वर्जन व्यवहार (रिंड की कठोरता एवं मोम की मात्रा)।
- गन्ने में नमी एवं उसकी वास्तविक स्थिति: गंदे, क्षतिग्रस्त एवं भीगे हुए गन्ने की अपेक्षा सूखे हुए गन्ने की गुणवत्ता का धीमी गति से ह्रास होता है।
- फसल की परिपक्वता का स्तर।
- कटाई पूर्व पद्धतियां जैसे गन्ना जलाना एवं अगौलाविहीन करना।
- कटाई एवं भंडारण के समय मौसम की स्थिति जैसे अधिक तापमान, आर्द्रता एवं वर्षा।
- कटाई की विधियां: हाथ या मशीन से।
- हरे या जले हुए गन्ने की कटाई एवं टुकड़ों का आकार यदि कटाई मशीन द्वारा की गई हो।
- संग्रहण विधि एवं अवधि-खुले में संग्रहण या गट्ठर में एवं गट्ठरों का आकार।
- कटाई एवं पेराई के बीच का अंतराल।
- मिल के अंदर तथा बाहर (केन यार्ड) की स्वच्छता की स्थितियां और मिल की प्रसंस्करण क्षमता।
- कीटों एवं रोगों का प्रकोप।
- अजैविक कारकों जैसे खारापन/क्षारीयता, अनावृष्टि, जलमग्नता, शीत तथा गन्ने के अधिक समय तक खेत में खड़े रहने से फसल की वृद्धि एवं गुणवत्ता प्रभावित होती है।

देरी एवं बाह्य तापमान के कारण इन्वर्जन एवं श्वसन तथा कार्बनिक एसिड, डेक्स्ट्रॉन और पॉलीसैकेराइड का बनना शर्करा ह्रास की दर को निर्धारित करने वाले मुख्य कारक हैं। अध्ययनों में पाया गया है कि ढेर करके रखे हुए गन्ने की पेराई से प्राप्त चीनी की गुणवत्ता में कम से कम 12 तथा अधिकतम 50 प्रतिशत तक की कमी होती है। कटाई से प्रसंस्करण की अवधि 72 घंटे से अधिक होने पर चीनी परता में 2 प्रतिशत की गिरावट होती है। भारतीय चीनी मिलें पेराई किए गए प्रति टन गन्ने से 5-10 कि.ग्रा. चीनी का नुकसान उठाती हैं। गर्मी के मौसम में मिलें चालू रहने पर यह हानि और भी अधिक बढ़ जाती है।

गन्ना ढेर लगाकर रखने के आर्थिक प्रभाव

गन्ना कटाई उपरांत उसमें शर्करा की होने वाली कमी के कई गंभीर सामाजिक एवं आर्थिक दुष्प्रभाव होते हैं, जिससे किसान, मिल मालिक, प्रसंस्करणकर्ता, निर्यातक एवं उपयोक्ता प्रभावित होते हैं। नमी में कमी आने से गन्ने के भार में गिरावट आती है और ह्रास हुए गन्ने की पेराई से चीनी परता में अपनी कमी के कारण चीनी उद्योग का आर्थिक नुकसान होता है। इसके अलावा अनेक अवांछनीय यौगिक बनने के परिणामस्वरूप जीवाणुओं की वृद्धि होती है। रासायनिक प्रक्रियाएं शर्करा प्रसंस्करण को प्रभावित करती हैं। ह्रास हुए गन्ने से बनी निम्न गुणवत्ता वाली चीनी से उपभोक्ता एवं निर्यातक बुरी तरह प्रभावित होते हैं।

प्रभावित करने वाले जैव-रासायनिक तत्व

कटाई उपरांत गन्ने का ह्रास होना मूलत: जैव-रासायनिक प्रक्रिया है, जो गन्ने के कटे हुए सिरों या तनों के क्षतिग्रस्त भागों से जीवाणुओं के आक्रमण द्वारा होती है। गन्ना कटाई के बाद बिना किसी अंदरूनी भौतिक एवं जैव-रासायनिक नियंत्रक प्रणाली के कारण अंतर्जात इन्वर्टेज सक्रिय हो जाता है। पी-एच उत्कृष्टता के आधार पर गन्ने के तने में दो प्रकार के इन्वर्टेज, एसिड इन्वर्टेज (पी-एच 4.8) एवं उदासीन (न्यूट्रल) इन्वर्टेज (पी-एच 7.0) होते हैं। दोनों इन्वर्टेजों का व्यवहार प्रजाति, कटाई से पूर्व जलाने और भंडारण की अवधि से प्रभावित होता है। कटे हुए गन्ने के रस में घुलनशील इन्वर्टेज की गतिविधि मुख्यत: गन्ने की गुणवत्ता में कमी से संबद्ध होती है। प्रजातीय चयन कार्यक्रम के लिए प्रजातीय प्रतिक्रिया पर एसिड इन्वर्टेज/न्यूट्रल इन्वर्टेज (एसएआई/एनआई) अनुपात में अंतर एक महत्वपूर्ण दृष्टिकोण प्रतीत होता है। उच्च तापमान पर 24 घंटे तक गन्ना भंडारण करने से शर्करा परता में 0.8 यूनिट की कमी पाई गई। 12 दिनों के गन्ना भंडारण में ताजा वजन के आधार पर शर्करा परता में 13.7 से 7.9 प्रतिशत तक की कमी

मिलिंग प्रक्रिया में देरी से चीनी परता में कमी

- प्रजाति की परिपक्वता के आधार पर उचित प्रजातीय संतुलन, वैज्ञानिक विधि अनुसार कटाई तथा पेराई की निश्चित अनुसूची का अभाव।
- गर्मी के महीनों में उच्च परिवेशीय तापमान (40^0 सेल्सियस) से अधिक होने पर भी पेराई सत्र का विस्तार।
- उपोष्ण भारत में मिल में जाने से पहले गन्ने की 3-5 दिनों पूर्व कटाई तथा कुछ क्षेत्रों में यह अंतर 7-10 दिनों तक रखने की परंपरा का प्रचलन।
- चीनी मिलों की पेराई क्षमता सीमित होने के फलस्वरूप मिल यार्ड या गन्ना संग्रह केन्द्रों पर गन्ने का जमा होना।
- किसान के खेत/गन्ना संग्रह केन्द्र से गन्ने को चीनी मिल तक पहुंचने में असामयिक देरी।
- सफाई व्यवस्था की पूर्णतया कमी तथा कुछ क्षेत्रों में जड़ सहित गन्ने की कटाई, गन्ने को जलाना तथा अगौला को काट देने की परंपरा।
- बाधित बिजली व्यवस्था एवं श्रमिकों की कमी।
- गन्ने और मिल के स्वच्छता कार्यक्रम के संबंध में समझ की कमी और मिलिंग प्रक्रिया के दौरान कम गुणवत्तायुक्त बायोसाइड का उपयोग।
- उचित एवं समयबद्ध आपूर्ति व्यवस्था के बिना जली हुई फसल की यांत्रिक कटाई।

कटाई उपरांत गुणवत्ता का ह्रास निम्न दो स्तरों पर होता है जिससे चीनी परता में कमी आती है:

(i) **प्राथमिक ह्रास:** गन्ने की फसल की कटाई या खेत में खड़ा रहने और इसके बाद चीनी मिल तक ढुलाई में देरी से शर्करा इन्वर्जन की प्रक्रिया।

(ii) **द्वितीयक ह्रास:** गन्ने से निकाले गए जूस में अपर्याप्त एवं अस्वास्थ्यकर प्रसंस्करण की वजह से इन्वर्जन, डेक्स्ट्रॉन, एल्कोहल और एसिड का बनना।

कटाई के बाद गन्ने की सफाई करते श्रमिक

पायी गई। ढेर लगाकर रखने के दौरान स्टॉर्च के एंज्यमटिक विघटन के कारण डेक्स्ट्रॉन एवं रिड्यूसिंग शर्करा बनाने से गन्ने के रस का आपेक्षिक घनत्व बढ़ता है और शर्करा परता में कमी आती है।

सूक्ष्मजीवीय पहलू

रखे हुए गन्ने के बाद की अवस्था में एंजाइम, रसायन और श्वसन से संबंधित हानियों के अलावा सूक्ष्मजीवों की वृद्धि, जो कि डेक्स्ट्रॉन एल्कोहल और एसिड उत्पन्न करते हैं, भी शर्करा परता में हानि के लिए बहुत जिम्मेदार हैं। ये सूक्ष्मजीव यथा किण्वक (सेक्रोमाइसेस, टोरुला तथा पीचिया), ल्यूकोनास्टॉक, जैन्थोमोनास, एयरोबैक्टर तथा एसिड उत्पादक स्ट्रेप्टोमाइसेस गन्ने के कटे हुए सिरों या कटी हुई जगह पर पाए जाते हैं। जैव विनिष्टीकरण का मुख्य कारण ल्यूकोनास्टाक मेसेंट्राइडस है। ये जीवाणु गन्ने के तने के कटे हुए क्षतिग्रस्त सिरों द्वारा मिट्टी से प्रवेश करते हैं। मिल के कोनों, नालियों, पाइप लाइनों और रस की टंकी में ये बहुगुणित होते हैं। ये सूक्ष्मजीव एंजाइम डेक्स्ट्रॉनसुक्रेज या बहिर्जात इन्वर्टेज के द्वारा सुक्रोज को पॉलीसैकेराइड जैसे कि डेक्स्ट्रॉन में परिवर्तित करते हैं। यहां तक कि डेक्स्ट्रॉन की बहुत कम मात्रा होने से छानने, सफाई, क्रिस्टल के बनने और चीनी के दानों के आकार को बदलने में समस्या पैदा करते हैं, जिससे चीनी की गुणवत्ता प्रभावित होती है। बहुत से बहिर्जात सूक्ष्मजीवों के अतिरिक्त गन्ने के तने में एक अंतर्जातीय सूक्ष्मजीवीय जगत होता है। इसमें एसिटोबैक्टर, स्यूडोमोनास, एयरोमोनास, विब्रिओ, बैसिलस तथा लैक्टिक एसिड उत्पादक बैक्टीरिया होते हैं। ये रखे हुए गन्ने की अवधि में कई गुना वृद्धि करते हैं और रस की गुणवत्ता को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं।

कटे हुए गन्ने की गुणवत्ता के मूल्यांकन के मापदंड

- बाह्य संकेतक: खट्टी महक, सिरके जैसी गंध और रस का पीला भूरा रंग।
- रस का गाढ़ापन।
- शुद्धता में गिरावट और पोल विचलन=रस का पोल-(1.25 ब्रिक्स -7.32)
- इंक्ट्रोन की मात्रा।
- ओलिगोसैकराइड।
- रिड्यूसिंग शर्करा।
- कार्बनिक अम्ल।
- गन्नों के टुकड़ों का विश्लेषण।
- इथेनॉल का बनना।
- टाइट्रेबिल अम्लता और गोंद की मात्रा।
- एसिड इन्वर्टेज की सक्रियता में बढ़ोतरी।

रखे हुए गन्ने में चीनी प्रसंस्करण पर हानिकारक प्रभाव

- चीनी परता में कमी।
- रिड्यूसिंग शर्करा का अधिक बनना।
- डेक्स्ट्रॉन के अधिक बनने से प्रसंस्करण एवं स्वच्छता में समस्या।
- पारदर्शिता की धीमी गति, खराब विशुद्धीकरण तथा गंदगी स्थिर होने की धीमी दर।
- चीनी के कणों की लंबाई बढ़ने से इसका बाजार भाव प्रभावित होता है।
- गोंद की मात्रा बढ़ने से गन्ने के जूस का गाढ़ापन बढ़ता है।
- कार्बनिक अम्लों के बढ़ने से रस जलाने की समस्या आती है और गर्म करने में अधिक समय लगता है।
- गन्ने के वजन में कमी होने से किसानों पर असर पड़ता है।
- मिलिंग की प्रक्रिया जैसे कि गन्ने पेराई की तैयारी और रस के निकालने आदि के दौरान रखे हुए गन्ने की गुणवत्ता में और भी खराबी आती है।
- मिल की स्वच्छता तथा प्रभावी रोधक जैवनाशियों की कमी के कारण प्रसंस्करण क्षमता एवं चीनी परता में निम्न तरीकों से कमी आती है: सन्निहित इन्वर्टेज के द्वारा चीनी परता में 13 प्रतिशत की सीधी कमी तथा उपापचयी पदार्थों जैसे कि डेक्स्ट्रॉन, इथेनॉल, पॉलीसैकराइड, एसिड आदि के बनने से शर्करा का 25 प्रतिशत ह्रास।
- गन्ने के रस में बढ़ रहे सूक्ष्मजीव इसमें उपस्थित 62 प्रतिशत शर्करा का उपभोग करते हैं।

चीनी उद्योग

ह्रास हुए गन्ने के कारण चीनी परता में कमी से चीनी उद्योग को आर्थिक हानि होती है। एक 5000 टीसीडी क्षमता वाली चीनी मिल को 72 घंटे से अधिक समय तक रखे हुए गन्ने के प्रसंस्करण से चीनी परता में कमी के कारण लगभग 3-5 लाख रुपये प्रतिदिन का नुकसान हो सकता है। यही नुकसान बाद में और भी बढ़ सकता है, जो कि गन्ने की प्रजाति, कटाई से पेराई में देरी तथा आसपास के तापमान पर निर्भर करता है। इसके साथ ही रासायनिक एवं सूक्ष्मजीवों की गतिविधियों के कारण गन्ने के ह्रास होने की अवधि में अनेक अवांछनीय यौगिक बनते हैं, जो शर्करा प्रसंस्करण को और भी कठिन बनाते हैं और शर्करा विनिर्माण को अनुपयोगी बना देते हैं।

कटाई के उपरांत शर्करा ह्रास का प्रबंधन

खेत/कटाई स्तर पर

- कटाई के 3 दिनों पहले 0.1 प्रतिशत पोटेशियम परमैंग्नेट तथा 1 प्रतिशत सोडियम मेटासिलिकेट के संयुक्त घोल का अनुप्रयोग इन्वर्टेज की सक्रियता को कम करता है। इससे कटाई उपरांत ह्रास रुकने के साथ रस की गुणवत्ता भी बनी रहती है। गन्ने के ढेर पर क्वाट आधारित निरूपण तथा इन्वर्जन प्रतिरोधक रसायन (सोडियम मेटासिलिकेट) के छिड़काव और उसको पत्तियों से ढकने से सीसीएस में 1.37, 2.90 तथा 2.62 यूनिट की बचत होती है।
- कटे हुए गन्ने पर जीवाणु प्रतिरोधक तथा इन्वर्जन प्रतिरोधक रसायन (बीकेसी+एसएमएस) के प्रयोग से शर्करा परता में सुधार हुआ है। सोलोमन आदि (2006) ने गन्ने की कटाई

के बाद होने वाली शर्करा की हानि को न्यूनतम करने में कुछ रासायनिक निरूपणों जीवाणु प्रतिरोधक (क्वाटरनरी अमोनियम यौगिक/थायोकार्बोमेट) एवं इन्वर्जन प्रतिरोधक रसायन (सोडियम मेटासिलिकेट/सोडियम लाउरिल सल्फेट) की दक्षता को दिखाया है। ताजे कटे हुए गन्ने (संपूर्ण तनों और ढेर) पर निरूपणों का जलीय छिड़काव करने के साथ इसे गन्ने की सूखी पत्तियों (ट्रैश) से ढकना। बेंजल्कोनियम क्लोराइड (बीकेसी+सोडियम मेटा सिलिकेट की मात्रा से युक्त रासायनिक निरूपण को सर्वाधिक प्रभावी पाया गया और इससे चीनी परता में 0.5 यूनिट का सुधार हुआ। इस विधि से गन्ने की किसी भी प्रजाति एवं तापमान पर गन्ना कटाई से एक सप्ताह बाद तक शर्करा ह्रास को कम किया गया।

- घुलनशील एसिड इन्वर्टेज जीन की अभिव्यंजना पर आधारित हाल में हुए अनुसंधान से संकेत मिले हैं कि गन्ने की गुणवत्ता नष्ट होने में सॉल्युबल एसिड इन्वर्टेज (एसएआई) एंजाइम की अहम भूमिका है। गन्ना की कटाई के बाद आरएनएआई तरीके को अपनाकर सॉल्युबल एसिड इन्वर्टेज (एसएआई) जीन की अभिव्यंजना को नियंत्रित करने के लिए स्थाई और स्थिर निवारण की दिशा में अनुसंधान पर बल दिया गया है।

मिल/प्रसंस्करण स्तर पर

- मिल की स्वच्छता: नियमित एवं सम्पूर्ण धुलाई तथा गर्म पानी से वाष्पीकरण।
- बायोसाइड किलबैक्ट टीएम का 20 पीपीएम सान्द्रता के साथ अनुप्रयोग।
- डेक्स्ट्रॉन को हटाने के लिए डेक्स्ट्रॉनेज एंजाइम का उपचार।

भाकृअनुप द्वारा वर्ष 2018 में विकसित गन्ने की नई उन्नत किस्में

सीओवीसी-99463	कर्नाटक	नमी दबाव स्थितियों के लिए उपयुक्त, उपज क्षमता-60-70 टन प्रति एकड़ (1483-1730 क्विंटल प्रति हैक्टर), उच्च उपजवर्धक (70-80 टन प्रति एकड़), उच्च तलशाखन, बेहतर गुणवत्ता, चौड़ी पंक्ति रोपण के लिए उपयुक्त, बेहतर रतून उत्पादकता, सूखा सहिष्णु और गुड़ बनाने के लिए अति उत्तम, परिपक्वता: मध्यम पछेती।
सीओएलके-09204 (इक्षु-3)	पंजाब, हरियाणा, उत्तराखंड, राजस्थान, उत्तर प्रदेश एवं पश्चिमी क्षेत्र	सिंचित एवं जलभराव स्थिति के लिए उपयुक्त, गन्ना उपज क्षमता-82.8 टन प्रति हैक्टर और सीसीएस उपज 9.30 टन प्रति हैक्टर, एक मध्यम-पछेती क्लोन, इसमें झड़न और पुष्पण नहीं होता है, बेहतर रतून उत्पादकता और पोषकतत्व अनुक्रियाशील, परिपक्वता-मध्यम पछेती (11-12 माह), रेड रॉट एवं स्मट से मध्यम प्रतिरोधी।
सीओपीबी-94 (सीओपीबी-10181	पंजाब, हरियाणा, राजस्थान, उत्तराखंड के उत्तर-पश्चिमी क्षेत्र एवं उत्तर प्रदेश के उत्तरी तथा पश्चिमी क्षेत्र	सामान्य सिंचित स्थिति, उपोष्ण जलवायु, संस्तुत उर्वरक खुराक के साथ वसंत ऋतु में रोपण के लिए उपयुक्त, उपज क्षमता-84-87 टन प्रति हैक्टर, उच्च उपजवर्धक, उच्च शर्करा तत्व, परिपक्वता-मध्यम पछेती (11-12 माह), रेड रॉट प्रतिरोधी।
यूपी (सीओए-11321)	पूर्वी उत्तर प्रदेश, बिहार, पश्चिम बंगाल एवं असोम	सिंचित, सामान्य उर्वरता स्तर के लिए उपयुक्त, दबाव से सहिष्णु, उपज क्षमता-74.74 टन प्रति हैक्टर, रस में सुक्रोज (17.90 प्रतिशत), सीसीएस (8.76 टन प्रति हैक्टर) और गन्ना में Pol (13.23 प्रतिशत), परिपक्वता-अगेती, प्रमुख रोगों से मध्यम प्रतिरोधी और प्रमुख नाशीजीवों से न्यून प्रतिरोधी।
श्रीमुखी (सीओए-11321)	आंध्र प्रदेश	आश्वस्त सिंचाई, सीमित सिंचाई, पछेती रोपण, बारानी, जलभराव और लाल सड़न रोग संवेदनशील क्षेत्रों के लिए उपयुक्त, उपज क्षमता-111.31 टन प्रति हैक्टर, सीसीएस (13.59 टन प्रति हैक्टर), रस (17.16) में सुक्रोज (प्रतिशत) और गन्ना (13.73) में Pol (प्रतिशत), परिपक्वता-अगेती, लाल सड़न से प्रतिरोधी, स्मट एवं मुरझान से संवेदनशील, अगेती प्रोहबेधक नाशीजीव से कम संवेदनशील और अंतर ग्रंथिबेधक से उच्च संवेदनशील।
इक्षु 4 सीओएलके-11206	पंजाब, हरियाणा, उत्तराखंड, राजस्थान, उत्तर प्रदेश के मध्य एवं पश्चिमी इलाके	सिंचित रोपण के लिए उपयुक्त, उपज क्षमता-91.50 टन प्रति हैक्टर, उच्च उपजवर्धक एवं मध्यम-परिपक्वता वाली वाणिज्यिक किस्म, नमी दबाव स्थिति के तहत बेहतर निष्पादन, परिपक्वता: मध्य-पछेती, सभी केंद्रों में लाल सड़न और स्मट रोगों से मध्यम प्रतिरोधी।
इक्षु 5 सीओएलके-11203	पंजाब, हरियाणा, उत्तराखंड, राजस्थान, उत्तर प्रदेश के मध्य एवं पश्चिमी क्षेत्र	सिंचित रोपण के लिए उपयुक्त, उच्च उपजवर्धक, लाल सड़न रोग प्रतिरोधी वाणिज्यिक किस्म, उपज क्षमता-81.97 टन प्रति हैक्टर, सीसीएस (10.52 टन प्रति हैक्टर), रस (18.41) में सुक्रोज (प्रतिशत) और गन्ना (13.44) में Pol (प्रतिशत) परिपक्वता-मध्यम पछेती, अधिकतर केंद्रों में लाल सड़न एवं स्मट रोगों से मध्यम रोगी, लगभग सभी स्थानों में मुख्य नाशीकीटों से कम संवेदनशील।
सीओ-06022 (06 सीओ-022)	तमिलनाडु और पुड्डुचेरी की पारिस्थितिकी	प्रायद्वीपीय क्षेत्र की सामान्य स्थितियों तथा सूखा संवेदनशील क्षेत्रों के लिए उपयुक्त, उपज क्षमता-105.23 टन प्रति हैक्टर, सीसीएस (13.76 टन प्रति हैक्टर), रस (18.88) में सुक्रोज (प्रतिशत) और परिपक्वता अवधि : 10 माह (300 दिन), अगेती, वर्तमान रोगजनकों/लाल सड़न रोग उत्पन्न करने वाले नाशीकीटों से मध्यम प्रतिरोधी।
बाहुबली (सीसीएफ-0517	कर्नाटक	दक्षिण कर्नाटक के सिंचित क्षेत्रों के लिए उपयुक्त, उपज क्षमता : 200-225 टन प्रति हैक्टर, बेहतर रतून उत्पादकता, सामान्य झड़न के साथ गहरा जड़ स्थापन, परिपक्वता: मध्यम-पछेती (12-14 माह), पर्णिल रोग से प्रतिरोधी, पर्ण बरुथी और अंतर ग्रंथि नाशीजीव से कम संवेदनशील।
चारचिका (सीओ ओआर-10346)	ओडिशा	गैर-सड़न, सिंचित ऊपरी भूमि और मध्यम भूमि के लिए उपयुक्त, उचित जल प्रबंधन के साथ चावल भूमि में भी उगाई जा सकती है, उपज क्षमता-100 टन प्रति हैक्टर, परिपक्वता: मध्यम-पछेती (360 दिन), जलभराव और नमी दबाव से सहिष्णु।

स्रोत: भाकृअनुप वार्षिक रिपोर्ट 2018-19

गन्ने के अवशेषों का प्रबंधन

मनोज कुमार शर्मा, देवेन्द्र कुमार, पूनम मान और **आर.एस. सेंगर**
कृषि जैव प्रौद्योगिकी विभाग, सरदार वल्लभभाई पटेल विश्वविद्यालय, मोदीपुरम, मेरठ-250110 (उत्तर प्रदेश)

गन्ना अपने कुल जैवभार का 40 प्रतिशत अवशेषी कूड़ा-करकट उत्पन्न करता है। इसमें मुख्यत: इसकी सूखी पत्तियां निकालना व कटाई उपरांत इसके शीर्ष व ठूंठ इत्यादि आते हैं। इसमें से शीर्ष या अगोलों का किसान मुख्यत: पशु चारे के लिए उपयोग कर लेते हैं, परंतु बचे हुए अवशेष को खेत में ही जला देते हैं। गन्ना उत्पादन में प्रति हैक्टर क्षेत्रफल में 100 टन मृदा से लगभग 200-250 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 120 कि.ग्रा. फॉस्फेट व 175 से 225 कि.ग्रा. पोटाश आदि पोषक तत्वों की हानि होती है। अत: मृदा की उर्वर क्षमता को संतुलित बनाए रखने के लिए उसमें समय-समय पर उचित मात्रा में कार्बनिक एवं अकार्बनिक खादों की प्रतिपूर्ति करना अति आवश्यक है। यह प्राय: एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन द्वारा ही संभव है। अवशेषी कूड़े-करकट व सूखी पत्तियों को खेत में जलाने से पर्यावरण हानि के साथ-साथ 70-95 प्रतिशत तक शुष्क पदार्थ और नाइट्रोजन की भी हानि होती है।

पलवार/पलवार (मल्च) के रूप में

गन्ने की प्रथम कटाई के उपरांत इससे प्राप्त होने वाली सूखी पत्तियों व कूड़े-करकट को किसान प्राय: ईंधन के रूप में अथवा सर्दियों में आग सेंकने के

"गन्ना एक बहुवर्षीय शाकीय फसल है। यह शरद की महत्वपूर्ण नगदी फसलों में से एक है। भारत, विश्व में गन्ना उत्पादन में क्षेत्रफल व उत्पादन की दृष्टि से द्वितीय स्थान पर है। पश्चिमी उत्तर प्रदेश में गन्ने का उत्पादन व क्षेत्रफल सर्वाधिक है। गन्ने की फसल मुख्यत: चीनी उत्पादन के लिए ली जाती है। इसमें प्रतिवर्ष गन्ना उत्पादन के अलावा ढेर सारा अवशेषी कूड़ा-करकट भी खेत में बचता है, जिसे कृषक प्राय: जला देते हैं। यह पर्यावरण व मृदा की सेहत के अनुकूल नहीं है। अवशेषों को खेत में जलाने से मृदा में उपस्थित लाभप्रद सूक्ष्मजीव व पोषक तत्वों की क्षति होती है तथा पर्यावरण भी प्रदूषित होता है। यदि इसे उचित प्रबंधन तकनीकों द्वारा उपयोग में लाया जाए तो कार्बनिक पदार्थों का संरक्षण तथा मृदा के पोषक तत्वों के संतुलन को बरकरार रखा जा सकता है। गन्ने के अवशेषों का निम्न तकनीकों से प्रबंधन किया जाए तो मृदा उर्वरता बढ़ाने के साथ अन्य लाभ भी प्राप्त किए जा सकते हैं।"

जैव-ईंधन के उत्पादन में उपयोग

गन्ने की पत्तियां लिग्नोसेल्यूलोस का अच्छा स्रोत हैं। इन्हें जैव-ईंधन जैसे, बायो-इथेनॉल बायोगैस के उत्पादन के लिए बायोमास के रूप में उपयोग किया जा सकता है। अतः किसान फसल की कटाई उपरांत उससे प्राप्त सूखी-पत्तियों एवं गन्ने के ऊपरी भाग को किसी स्थानीय बायो-इथेनॉल उत्पादन करने वाली इंडस्ट्री को दे सकते हैं, जोकि उनकी आमदनी का एक अलग स्रोत हो सकता है। गन्ने की पत्तियों से बायो-इथेनॉल के रूपांतरण की प्रक्रिया में तीन मुख्य क्रियाएं शामिल हैं:

- **बायोमास का प्री-ट्रीटमेंट:** प्री-ट्रीटमेंट विभिन्न भौतिक, रासायनिक एवं जैविक माध्यमों से किया जाता है। इसका मुख्य उद्देश्य बायोमास/जैवभार से लिग्निन को हटाना एवं सैल्यूलोस की सतह क्षेत्र में वृद्धि करना है।
- **सैकेरीफिकेशन:** यह प्रक्रिया विभिन्न कवकों या जीवाणुओं के द्वारा उत्पादित एंजाइम से करते हैं। इस क्रिया में सैल्यूलोज के किण्वन के योग्य शर्करा जैसे ग्लूकोज बनाते हैं।
- **किण्वन:** खमीर सैकेरोमाइसिस सेरेविसी व जीवाणु जाइमोमोनास मेबिलिस इथेनॉल उत्पादन के लिए किण्वन प्रक्रिया में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

कटाई उपरांत गन्ना अवशेष प्रबंधन

- कटाई उपरांत सर्वप्रथम गन्ने के अवशेषी कूड़े-करकट को एकत्र करके एकांतर क्यारियों में व्यवस्थित करें।
- गन्ने के अवशेष टुकड़े अथवा जड़ों को मृदा के एकदम समीप से काट दें।
- 250 मि.ली. कार्बेन्डाजिम व 250 मि.ली. क्लोरपायरीफॉस का 100 लीटर पानी में घोल तैयार करें व उसका अवशेषी कूड़े-करकट पर छिड़काव करें।
- खेत की सिंचाई कर दें, ताकि अवशेषी कूड़ा-करकट पर्याप्त नमी अवशोषित कर सके।
- 200 लीटर पानी लेकर उसमें 200 कि.ग्रा. गाय के गोबर का घोल तैयार करें। उसमें 10 कि.ग्रा. विघटनकारी कल्चर (जोकि बाजार में विभिन्न नामों से उपलब्ध है) मिलाएं, जिससे मिश्रण जल्दी विघटित हो सके।
- तैयार मिश्रण के विघटन के पश्चात इसका अवशेषी कूड़े-करकट पर छिड़काव कर दें।

लिए उपयोग करते हैं। किसान इसका इस्तेमाल खेत में पलवार (मल्चिंग) के रूप में करें तो अधिक लाभ कमा सकते हैं। इसके लिए सर्वप्रथम सूखी पत्तियों की लगभग 8-10 सें.मी. मोटी परत गन्ने की पत्तियों के बीच में बिछाएं व इसके बाद खेत की सिंचाई कर दें। पत्तियों को बिछाते समय ध्यान रखें कि जमते हुए गन्ने के अंकुर पत्तियों के नीचे न ढक पाएं तथा खाली स्थान न छूटने पाए। इसमें कीट व दीमक न पनपें, इसलिए इस पर 5 लीटर क्लोरपायरीफॉस 20 ई.सी. का घोल लगभग 1500-2000 लीटर पानी में तैयार करके छिड़काव करें। इसके बाद समय-समय पर आवश्यकतानुसार फसल में खाद, कीटनाशी का प्रयोग व समयानुसार सिंचाई करें।

- **कार्बन:** नाइट्रोजन के अनुपात को कम करने के लिए 30 कि.ग्रा. यूरिया प्रति एकड़ का छिड़काव करें, जिससे कचरे/ट्रैश/(अवशेषी कूड़े-करकट) का तेजी से अपघटन हो सके।
- जीवाणुओं की गतिविधि बढ़ाने व उन्हें सीधे प्रकाश से बचाने के लिए इसपर मृदा की हल्की परत चढ़ा दें।
- अब ट्रैश कटर/हैरो की सहायता से अवरोधी कूड़े-करकट को काट दें अथवा जुताई करें।

गन्ने की फसल

लाभ

इस तरह की प्रबंधन तकनीक से निम्न लाभ होते हैं:

- मृदा की उर्वरा क्षमता संतुलित रहती है। नाइट्रोजन, फॉस्फोरस व पोटाश (एनपीके) के स्तर में बढ़ोतरी होती है। साथ ही इसके ट्रैश प्रबंधन से लगभग 4-10 प्रतिशत तक गन्ना उत्पादन में वृद्धि की जा सकती है व किसान की उर्वरक लागत को कम किया जा सकता है।
- गन्ने की सूखी पत्तियां/अथवा पलवार बिछाने से मृदा में नमी बनी रहती है, जिससे काफी हद तक जल की बचत की जा सकती है।
- पेड़ी गन्ने का अंकुरण तेजी से होता है।
- खरपतवारों का नियंत्रण कर खरपतवारनाशी के प्रयोग में आने वाली लागत को कम किया जा सकता है।
- मृदा की उर्वराशक्ति को भी बढ़ाया जा सकता है।

अन्य उपयोग

- गन्ने की पत्तियों का सर्दियों के मौसम में पशुओं के नीचे बिछावन के रूप में उपयोग किया जा सकता है।
- गन्ने की सूखी पत्तियों को गड्ढे में डालकर और गलाकर अच्छी मात्रा में जीवांश खाद बनायी जा सकती है।
- गन्ने की कटाई उपरांत अवशेषी ठूंठों को सुखाकर ईंधन के रूप में उपयोग किया जा सकता है। ■

गन्ने की पेड़ी में पलवार बिछाकर जल बचत

डी.वी. यादव, आर.पी. वर्मा, कामता प्रसाद, ए.के. साह, राजेन्द्र गुप्ता और **के.पी. सिंह**
भाकृअनुप-भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, रायबरेली रोड
पोस्ट: दिलकुशा, लखनऊ-226002 (उत्तर प्रदेश)

गन्ने के ठूंठ

"सूखी पत्तियों की एक पतली परत (8-10 सें.मी. मोटी) खेतों में बिछा दी जाए तो मिट्टी की सतह से पानी का वाष्पीकरण कम हो जाता है। इससे सिंचाई जल की बचत होती है। जब ये पत्तियां खेतों में सड़ती हैं तो मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ और पोषक तत्वों की बढ़ोतरी होती है। इस प्रकार गन्ने की पैदावार बढ़ती है और मिट्टी के स्वास्थ्य में भी सुधार होता है।"

अधिकतर किसान गन्ने की सूखी पत्तियों को या तो खेतों में जला देते हैं अथवा दूसरे उपयोग जैसे छप्पर बनाने व ईंधन के रूप में करते हैं। जलाने से जो गर्मी निकलती है, उससे मिट्टी में रहने वाले लाभदायक सूक्ष्मजीव मर जाते हैं। इसके साथ ही पत्तियों में पाये जाने वाले पोषक तत्व भी नष्ट हो जाते हैं।

कार्य विधि

- गन्ने की कटाई के पश्चात सूखी पत्तियों को खेत के दोनों किनारों पर इकट्ठा कर लें।
- यदि खेतों में ठूंठ हों तो उनकी छंटाई करें।
- गन्ने की कटाई व ठूंठों की छंटाई के पश्चात सिंचाई कर दें।
- गन्ने की पुरानी जड़ों की छंटाई करने के लिए देसी हल या पेड़ी प्रबंधन मशीन से जुताई अथवा कुदाल से गुड़ाई करें।
- गन्ने की पंक्तियों में यदि रिक्त स्थान हों तो पहले से अंकुरित गन्ना पौध की खाली स्थानों में रोपाई कर दें।
- पंक्तियों के किनारे-किनारे 140 कि.ग्रा. यूरिया, 130 कि.ग्रा. डीएपी और 100 कि.ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश प्रति हैक्टर की दर से डाल दें।
- गन्ने की एकांतर पंक्तियों के बीच की खाली जगह में सूखी पत्तियों की 8-10 सें.मी. मोटी परत बिछा दें।
- पांच लीटर क्लोरोपायरीफॉस 20 ई.सी को 1500-1600 लीटर पानी में मिलाकर घोल तैयार कर लें।
- उपरोक्त बने घोल को स्प्रेयर अथवा हजारे की सहायता से बिछाई गई सूखी

गन्ने की सूखी पत्तियां

गन्ने की पत्तियां

सूखी पत्ती बिछाने के लाभ

- गन्ने की सूखी पत्तियां बिछाने की जगह पर पानी का वाष्पीकरण कम होता है, जिससे 35 से 40 प्रतिशत सिंचाई जल की बचत होती है।
- गर्मी में मृदा का तापमान कम रहता है और सर्दी में मृदा का तापमान अधिक रहता है। इसके साथ ही मृदा में पर्याप्त मात्रा में नमी अधिक समय तक बनी रहती है, जिससे मृदा में पाये जाने वाले लाभदायक सूक्ष्मजीवों की क्रियाशीलता से पौधों को नाइट्रोजन और फॉस्फोरस की उपलब्धता बढ़ जाती है।
- गन्ने की आंख के फुटाव में तेजी आ जाती है और कल्लों का मरना कम हो जाता है।
- खरपतवारों का प्रकोप कम होता है।
- पत्तियां सड़ने के बाद मिट्टी में कार्बनिक पदार्थों की मात्रा और मिट्टी की उर्वराशक्ति बढ़ जाती है।

पत्तियों पर छिड़क दें, जिससे कि गन्ने को दीमक और सैनिक कीट से बचाया जा सके।

- पेड़ी की शुरुआत करने से एक माह बाद प्रथम कल्ले निकलने की अवस्था में दूसरी सिंचाई करें।
- सिंचाई करने के बाद खेत में उचित ओट आ जाने पर 100 कि.ग्रा. यूरिया प्रति हैक्टर की दर से डाल दें।
- दूसरी सिंचाई के एक माह बाद तीसरी सिंचाई कर दें।
- पंक्तियों के बीच के रिक्त स्थान पर जहां सूखी पत्तियां नहीं बिछाई गई है, वहां आवश्यकतानुसार निराई-गुड़ाई करते रहें।
- तीसरी सिंचाई के 20-22 दिनों बाद चौथी सिंचाई कर दें।
- जून के मध्य में 100 कि.ग्रा. यूरिया प्रति हैक्टर की दर से गन्ने की पंक्तियों के किनारे-किनारे डाल दें और गुड़ाई कर मृदा में मिला दें।
- गन्ने की फसल को चोटीबेधक कीट से बचाने के लिए जून के अंतिम सप्ताह में 33 कि.ग्रा. फ्यूराडॉन 3 जी प्रति हैक्टर की दर से गन्ने की पंक्तियों के किनारे-किनारे डालें।
- वर्षा ऋतु आने से पहले गन्ना थालों में मिट्टी चढ़ाएं।
- सितंबर में आमने-सामने की पंक्तियों के गन्ना थानों की आपस में कैंचीनुमा बंधाई करें।
- अगस्त-सितंबर में गन्ने की निचली सूखी पत्तियों को निकाल दें।
- उपयुक्त समय पर जमीन की सतह से गन्ने को काटें, जिससे उपज का नुकसान न हो और आगे आने वाली पेड़ी भी अच्छी हो।

अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क करें

निदेशक
भाकृअनुप-भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान,
पो.आ.: दिलकुशा, लखनऊ (उत्तर प्रदेश)
फोन : 0522-2480738

साभार: भाकृअनुप-भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ द्वारा प्रकाशित प्रसार साहित्य

गन्ने में जैव उर्वरक

"हरित क्रांति के पश्चात, आधुनिक खेती अधिक से अधिक रासायनिक खादों पर निर्भर करती है। रासायनिक उर्वरकों का उत्पादन दिन प्रति दिन महंगा एवं कम हो रहा है। इसका अधिक प्रयोग वातावरण एवं भूतल पानी को भी दूषित करता है। अत: इस संदर्भ में ऐसे जीवाणुओं को खोजा गया है, जो फसलों को जरूरी तत्व प्रदान करवाने में मददगार हो सकते हैं। इन तत्वों में मुख्यत: नाइट्रोजन एवं फॉस्फोरस का उल्लेख किया जा सकता है। इनके प्रयोग से न केवल वातावरण दूषित होने से बचता है, साथ में फसल-उत्पादन भी बेहतर होता है।"

जैविक खाद लाभकारी जीवाणुओं का ऐसा जीवंत समूह है, जिनको बीज, जड़ों या मिट्टी में प्रयोग करने पर पौधे को अधिक मात्रा में पोषक तत्व मिलने लगते हैं। इसके साथ ही साथ मृदा की जीवाणु क्रियाशीलता एवं सामान्य स्वास्थ्य में भी वृद्धि होती है।

गन्ने के लिए विभिन्न जैव उर्वरक

नाइट्रोजन के लिए

ये जीवाणु वातावरण में उपस्थित नाइट्रोजन (78 प्रतिशत) का परिवर्तन कर, उसे पौधों के योग्य (अमोनियाकल) बना देते हैं। साथ ही ये पौधे हेतु वृद्धि हार्मोन बनाते हैं। इनमें प्रमुख हैं;

- एसीटोबैक्टर
- एजोटोबैक्टर
- एजोस्पाइरिलम

जैविक खाद के प्रभावहीन होने के कारण

- प्रभावहीन जीवाणु का उपयोग।
- जीवाणु संख्या कम होना।
- अनचाहे जीवाणुओं का ज्यादा होना।
- जीवाणु खाद को उच्च तापमान या सूर्य की किरणों में रखना।

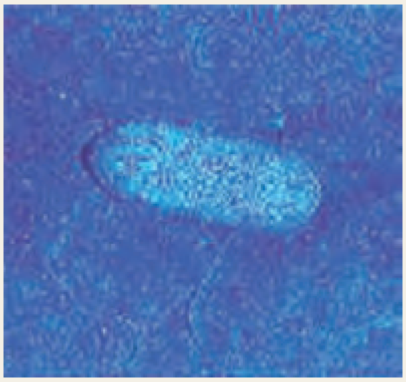

- अनुशंसित विधि का ठीक से प्रयोग न करना।
- जीवाणु खाद को रसायनों के साथ प्रयोग करना।
- प्रयोग के समय मृदा में तेज तापमान अथवा कम पानी का होना।
- मृदा का अति क्षारीय और अम्लीय होना।
- फॉस्फोरस और मॉलिब्डिनम की अनुपलब्धता।
- मृदा में जीवाणुओं एवं वायरस का अधिक होना।

एजोटोबैक्टर जैविक खाद

- यह जैविक खाद 'एजोटोबैक्टर क्रोकोकम' से बनी है।
- यह जीवाणु मिट्टी में कहीं भी पाया जाता है।
- यह नाइट्रोजन परिवर्तन करता है एवं वृद्धि-हार्मोन बनाता है, जिससे जड़ों की वृद्धि होती है।
- कुछ कीटनाशक पदार्थ छोड़ता है, जिससे जड़ों की रोगों से रक्षा होती है।
- यह पौधे की वृद्धि एवं उत्पादकता में 25 प्रतिशत तक बढ़ोतरी करता है।

एजोस्पाइरिलम जैविक खाद

- यह जैविक खाद 'एजोस्पाइरिलम ब्रैजिलैंस या लिपोफैरम' से बनी है।
- यह जीवाणु जड़ों के समीप पाया जाता है।
- यह 30-35 प्रतिशत रासायनिक नाइट्रोजन खाद की बचत कर सकता है तथा साथ में वृद्धि-तत्व भी देता है।

जैविक उर्वरक

- यह पौधे के जमाव एवं बढ़ने में मदद कर, उत्पादकता में 25 प्रतिशत तक की वृद्धि कर सकता है।

फॉस्फोरस घुलनशील जैविक खाद

- यह जैविक खाद बैसिलस एवं/या एस्पर्जिलस आवामोरी से बनी है।
- ये जीवाणु पौधे की जड़ों के पास रहकर

जैविक-खाद से लाभ

- फसल उत्पादन को 10-30 प्रतिशत बढ़ाता है।
- कृत्रिम रसायनों का 25 प्रतिशत उपयोग कम करता है।
- पौधों की वृद्धि में सहायक है।
- मृदा की क्रियाशीलता को बढ़ाता है।
- मृदा की उत्पादकता को बढ़ाता है।
- पौधों को कीटाणुओं के प्रकोप से भी बचाता है।

जैव उर्वरक है फायदेमंद

अनुपलब्ध फॉस्फोरस को घुलनशील कर उपलब्ध करवाते हैं।

- ये पौधे की वृद्धि को बढ़ाते हैं तथा उत्पादकता को 20 प्रतिशत तक बढ़ाते हैं।
- जीवाणु को किसी भी कैरियर जैसे कि लिग्नाइट, गोबर-खाद, वर्मिकुलाइट, पीट एवं चारकोल में रखा जा सकता है।

जैव उर्वरक का प्रयोग करते किसान

जैविक खाद की विशेषताएं

एसीटोबैक्टर जैविक खाद

- यह जैविक खाद जीवाणु 'एसीटोबैक्टर डाइएजोट्राफिकस' से बनी है।
- यह जीवाणु गन्ने के अंदर रहता है और इसके सभी भागों (जड़, तना और पत्ते) में पाया जाता है।
- यह सामान्य फसल उत्पादन में 5-20 टन/हैक्टर और चीनी परता में 5-15 प्रतिशत की वृद्धि करता है।
- इसके प्रयोग के 5-6 सप्ताह बाद इसका प्रभाव दिखाई देता है। यह मुख्यत: गन्ने की लंबाई एवं मोटाई को बढ़ाता है।

मृदा में जैविक खाद का प्रयोग है प्रभावी

गन्ने में जीवाणु खाद की मात्रा एवं प्रयोग विधि

- **मात्रा:** 5 कि.ग्रा. जीवाणु खाद (एक एकड़ के लिए पर्याप्त) का 100 लीटर पानी में घोल बनायें तथा गन्ने के टुकड़ों को इस घोल में भिगोकर कूंड़ों में लगायें। इसके बाद कूंड़ों को ढक दें।

जीवाणु खाद के प्रयोग में सावधानियां

- जीवाणु खाद को ठंडी एवं सूखी जगह पर रखें और सूर्य की किरणों एवं गर्मी से बचायें।
- जीवाणु खाद और रासायनिक खाद को एक साथ मिलाकर प्रयोग न करें।
- जैविक खाद के थैले पर जीवाणु खाद एवं फसल का नाम, बनने एवं अंतिम प्रयोग तिथि, बनने की नंबर संख्या, प्रयोग विधि एवं बनाने वाले का नाम-पता देखकर ही खरीदें।
- जैविक खाद को उसकी अंतिम-तिथि से पहले ही उपयोग में लें।
- जैविक-खाद और रासायनिक खाद को उचित मात्रा एवं तरीके से उपयोग करना चाहिए।

यह सही है कि जैविक खाद, रासायनिक उर्वरक का स्थान नहीं ले सकती। किंतु किसान यदि दोनों का उचित मात्रा में उपयोग करें तो आर्थिक लाभ के साथ में वातावरण भी दूषित नहीं होगा। ■

स्रोत: गन्ना विकास निदेशालय लखनऊ (उ.प्र.)

भाकृअनुप की लोकप्रिय पत्रिका
'खेती' मई, 2019 अंक के प्रमुख आकर्षण

- नील-हरित शैवाल स्पायरुलिना के गुण एवं उत्पादन
- कैसे करें उन्नत बकरी पालन
- बारानी कृषि में हाइड्रोजैल का उपयोग
- चने की उन्नत किस्म 'सीएसजे-51'
- जल संग्रहण तालाबों से समेकित कृषि प्रणाली
- तेल-ताड का प्राकृतिक स्रोत
- अनुपजाऊ बारानी क्षेत्रों के लिए लाभकारी है मेहंदी
- दुधारू पशुओं में प्रजनन संबंधी समस्याओं का प्रबंधन
- सोयाबीन है पोषण सुरक्षा का महत्वपूर्ण स्रोत
- छत्तीसगढ़ के पारंपरिक व्यंजन
- महिला किसानों के लिए उपयोगी यंत्र
- सजावटी मछलियों के पालन में आहार प्रबंधन

संपर्क सूत्र: व्यवसाय प्रबंधक, कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय, कैब-1, पूसा गेट, नई दिल्ली-12 (दूरभाष: 25843657)

गन्ना प्रश्नोत्तरी

प्रश्नः कौन-सी सूखा सहनशील गन्ना प्रजातियां उपलब्ध हैं?

उत्तरः को. 86032, को. 88006, को. टी.एल. 88322, को. 95014, को. 97008, को. 99004, को. 95003, को. 95006, को. 94012, को. 96009, को.जे.एन. 86-600, वी.एस.आई. 9/20, को. 99012, को. 97001 और को. 96023 सूखा सहनशील प्रजातियों का प्रमुख तौर पर उल्लेख किया जा सकता हैं।

प्रश्नः जलप्लावन के लिए कौन सी गन्ना किस्में सहनशील हैं ?

उत्तरः प्रजातियां, जैसे कि को. 8231, को. 8232, को.8145, को.एस.आई. 86071, को.एस.आई. 776, को. 8371, को. 99006, 93ए. 4, 93ए.11, 93ए.145 और 93ए.21, जलप्लावन के लिए सहनशील हैं।

प्रश्नः लवणताग्रस्त उपयुक्त के लिए प्रजातियों के बारे में बताएं?

उत्तरः को. 95003, को. 93005, को. 97008, को. 85019, को. 99004, को. 2001-13 को लवणता वाली मृदाओं के लिए उपयोगी कहा जा सकता है। कुछ दूसरी प्रजातियां भी, जैसे कि को. 94012, को. 94008, को. 2000-10, को. 2001-15 और को. 97001, लवणताग्रस्त क्षेत्रों के लिए सहनशील हैं।

खेत में गन्ने की फसल

प्रश्नः लोहे की कमी वाले क्षेत्रों के लिए उपयुक्त गन्ना किस्मों के बारे में बताएं?

उत्तरः को. 8021, को. 86032, को. 86249, को. 88025, को. 94005 और को. 94012 लोहे की कमी वाले क्षेत्रों के लिए सहनशील हैं।

प्रश्नः कटाई के बाद आने वाली गिरावट के प्रति सहनशील गन्ने की किन किस्मों को लगाना चाहिए?

उत्तरः को.सी. 671, को. 7314 और को. 775 को को.जे. 64, को.एस. 510, को. 7240, को.सी. 8001, को. 6907 और को. 62175 से कटाई के बाद आने वाली गिरावट के लिए बेहतर प्रतिरोधिता पायी गयी। कोयम्बटूर में किए गए अध्ययन में को.सी. 671 में को. 6304 के मुकाबले कटाई के बाद होने वाली विपरीतता (इनवर्जन) के कारण आने वाली गिरावट में कमी देखी गई। को.सी. 671 को यदि 14-16 महीने बाद भी काटा गया हो तो इसमें कम विपरीतता और डेक्स्ट्रॉन का बनना देखा गया।

प्रश्नः पेय पदार्थ बनाने के लिए कौन-सी प्रजातियों की रस की गुणवत्ता बेहतर है?

उत्तरः को.सी. 671, को. 62175,

कौन सी गन्ने की प्रजातियां गुड़ बनाने के लिए अच्छी हैं?

आंध्र प्रदेशः को. 6907, को.टी. 8201, को. 8013, को. 62175, को. 7219, को. 8014, को.आर. 8001

बिहारः को.एस. 767, बी.ओ. 91, को. 1148

गुजरातः को.सी. 671, को. 7527, को. 6217, को. 8014, को. 740

हरियाणाः को. 7717, को. 1148, को. 1158, को.एस. 767

कर्नाटकः को. 7704, को. 62175, को. 8014, को. 8011, को.सी. 671, को. 86032

मध्य प्रदेशः को. 775, को. 7314, को. 6304, को. 62175

महाराष्ट्रः को. 775, को. 7219, को.सी. 671, को. 740, को. 7257, को. 86032

ओडिशाः को. 7704, को. 7219, को. 62175, को. 6304

पंजाबः को.जे. 64, को. 1148, को.जे. 81

राजस्थानः को 997, को. 419

तमिलनाडुः को.सी. 671, को. 62175, को. 7704, को. 6304, को. 8021, को. 86032, को.सी. 92061

उत्तर प्रदेशः को.एस. 687, को.जे. 64, को.1148, को.एस. 767, को.एस. 802, को. एस. 7918, को. 1158, को.एस. 8408, को.एस. 8432, बी.ओ. 91, को.एस. 8315, को.एस. 8016, को.एस. 8118, को.एस. 8119, बी.ओ. 19, को.एस. 837

पश्चिम बंगालः को.जे. 64, को. 1148

रोग एवं कीट प्रतिरोधी गन्ना प्रजाति

को. 7717, को. 86032, को. 86249 और को. 94012 के रस में शर्करा की उच्च मात्रा होने के साथ हल्के रंग और कम रेशा होने के कारण इन्हें पेय पदार्थ बनाने के लिए उपयुक्त कहा जा सकता है।

संवर्धन प्रक्रियाएं

प्रश्न: गन्ने के रोपण के लिए खेत की कितनी गहराई तक जुताई की जानी चाहिए?

उत्तर: गन्ने की करीब 80 प्रतिशत जड़ें 60 सें.मी. की गहराई तक जाती हैं। अत: गन्ने के खेतों की गहरी जुताई करना आवश्यक है। शुरुआत में एक या दो जुताइयां, कम से कम 30 सें.मी. की गहराई तक, ट्रैक्टर द्वारा खींचे गए डिस्क पलो या मोल्ड बोर्ड पलो या पशु द्वारा खींचे गए मोल्ड बोर्ड पलो की सहायता से की जानी चाहिए। इसके बाद हल्के कृषि जुताई यंत्रों से जुताई की जानी चाहिए।

प्रश्न: गन्ने की रोपाई के लिए उपयुक्त पंक्तियों की दूरी क्या होनी चाहिए?

उत्तर: गन्ने में उपयुक्त पंक्तियों की दूरी प्रजाति तथा मृदा की उर्वरता के स्तर पर निर्भर करती है। निम्न स्तर की उर्वरता वाली भूमि में एक कम ब्यांत (टिलर) उत्पन्न करने वाली प्रजाति के लिए 60 सें.मी. वाली नजदीकी पंक्तियों की दूरी अच्छी रहेगी, जबकि इस प्रकार की भूमि में अत्यधिक उत्पादन वाली प्रजाति के लिए 75 सें.मी. वाली मध्यम दूरी आवश्यक है। उच्च उर्वरता वाली मृदाओं में अत्यधिक उत्पादन वाली प्रजाति के लिए 90 सें.मी. की दूरी अति उत्तम है। यद्यपि

जल प्लावन

प्रश्न: जलप्लावन में किन प्रबंधन प्रक्रियाओं का प्रयोग किया जाना चाहिए?

- फालतू पानी की निकासी व खेत में से जल निकासी के लिए नालियों को बनायें।
- अधिक नमी को कम करने के लिए जल्द रोपण।
- बीज की अधिक मात्रा का प्रयोग ताकि अधिक गन्ने प्राप्त हो सकें।
- मिट्टी चढ़ायें ताकि जड़ों का बेहतर विकास हो सके।
- जलप्लावन सहनशील प्रजातियां जैसे कि को. 8231, को. 8232, को. 8145, को.एस.आई 86071, को.एस.आई 776, को. 8371, को. 9006, 93 ए. 4, 93ऐ.145 और 93, ए. 21 को उगायें।

मशीनीकृत खेती के लिए 150 सें.मी. की अत्यधिक दूरी वाली रोपण पद्धति अपनाई जाती है। अत: अत्यधिक उत्पादन वाली प्रजातियों का चुनाव आवश्यक है।

प्रश्न: गन्ने के रोपण के लिए बीज की गुणवत्ता कैसी हो?

उत्तर: एक अच्छी रोपण सामग्री को रोग एवं हानिकारक जीवरहित, अक्षत कलिकाओं वाले बीज टुकड़ों को, 6-8 महीने की फसल से काटकर प्राप्त किया जाता है।

प्रश्न: गन्ने की व्यावसायिक खेती के लिए एक, दो या तीन कलिकाओं वाले बीज

रोगमुक्त गन्ना फसल से ज्यादा लाभ

गन्ने का बढ़ता व्यावसायिक महत्व

टुकड़ों में से कौन से बेहतर हैं?

उत्तर: एक कलिका वाले बीज टुकड़े सर्वाधिक 90 प्रतिशत के करीब अंकुरण करते पाये गए हैं। दो कलिकाओं वाले बीज टुकड़े 60 प्रतिशत के करीब और तीन कलिकाओं वाले बीज टुकड़े रोपण करने पर और भी कम करीब 50 प्रतिशत अंकुरण प्रदर्शित करते हैं। एक कलिका वाले बीज टुकड़ों से उत्पन्न हुए पौधे प्रतिकूल वातावरण को सहन करने में सक्षम नहीं होते जबकि 2 या 3 कलिकाओं वाले बीज टुकड़ों से उत्पन्न हुए पौधे प्रतिकूल वातावरण को सहन कर सकते हैं। अत: दो कलिकाओं वाले बीज टुकड़े रोपाई के लिए बेहतर हैं।

प्रश्न: गन्ने में खरपतवार नियंत्रण के लिए कौन से खरपतवारनाशी उपयुक्त हैं?

उत्तर: गन्ने में फुटाव से पहले खरपतवारों के नियंत्रण के लिए एट्राजिन (2.0 कि.ग्रा. क्रियाशील तत्व/हैक्टर) और मेट्रिबुजिन (1.0 कि.ग्रा. क्रियाशील तत्व/हैक्टर) उपयुक्त हैं। चौड़े पत्तों वाले खरपतवारों के नियंत्रण के लिए 2,4-डी (1.0 कि.ग्रा. क्रियाशील तत्व/हैक्टर) को तभी प्रयोग किया जाये जब यह गन्ने की फसल में तीव्रता से वृद्धि कर रहे हों।

सिंचाई प्रबंधन

प्रश्न: गन्ने की एक अच्छी फसल लेने के लिए कितनी सिंचाइयों की आवश्यकता होती है?

उत्तर: ऊष्णकटिबंधीय क्षेत्र में पहले

गन्ना पौध

35 दिनों तक हर 7वें दिन, 36-110 दिनों के दौरान हर 10वें दिन, 101-270 दिनों वृहत वृद्धि अवस्था के दौरान हर 7वें दिन की और परिपक्वता प्रवस्था के दौरान हर 15वें दिन सिंचाई की जानी चाहिए। इन दिनों को वर्षा पड़ने के अनुसार अनुकूलित करना पड़ता है। करीब 30 से 40 सिंचाइयों की आवश्यकता रहती है।

प्रश्नः कम से कम पानी के साथ गन्ने की खेती कैसे की जा सकती है?

उत्तरः गन्ना एक अधिक पानी की आवश्यकता वाली फसल है। एक टन गन्ने के उत्पादन के लिए 250 टन पानी की आवश्यकता होती है। वैसे तो बिना उत्पादन

गन्ने की प्रारंभिक अवस्था

में कमी लाये पानी की आवश्यकता को अपने आप में कम नहीं किया जा सकता मगर सिंचाई के पानी की आवश्यकता में कमी, पानी को इसके स्रोत से पाईप लाइन के द्वारा खेत जड़ क्षेत्र तक लाकर, रास्ते में होने वाले रिसाव के कारण नुकसान को रोककर या फिर सूक्ष्म सिंचाई विधियों को अपनाकर लाई जा सकती है। जब पानी की कमी के हालात हों तब हर दूसरी खांच में पानी से सिंचाई की जा सकती है। मल्च का प्रयोग कर पानी की आवश्यकता में कमी लाई जा सकती है। सूखे के हालात के दौरान 2.5 प्रतिशत यूरिया और 2.5 प्रतिशत म्यूरेट ऑफ पोटाश के घोल को पाक्षिक अंतराल पर 3 से 4 बार स्प्रे कर उसके प्रभाव को कम किया जा सकता है।

प्रश्नः टपक सिंचाई प्रणाली में अवरोधों को कैसे रोका जा सकता है?

उत्तरः पानी के सही प्रयोग के लिए टपक सिंचाई व्यवस्था को ठीक-ठाक रखना अति आवश्यक है। इसके लिए समय-समय पर पानी की नलियों के अंत के ढक्कन खोलकर इनमें से पानी को तेजी से बहाकर साफ करें। टपक प्रणाली के अंदर की सतह पर जमें लवणों को हटाने के लिए 30 प्रतिशत हाइड्रोक्लोरिक एसिड को इंजैक्ट करें। जब सिंचाई के पानी का स्रोत नदी, नहर या खुला कुआं इत्यादि हो तो बैक्टीरिया, कवक इत्यादि के लिए 1 पीपीएम ब्लीचिंग पाउडर से क्लोरिनेशन करना चाहिए। एसिड उपचार और कलोरिनेशन करने की समयावधि पानी की गुणवत्ता पर निर्भर करती है।

पोषक तत्व प्रबंधन

प्रश्नः गन्ने की फसल के लिए पोषक तत्वों की कितनी आवश्यकता होती है?

उत्तरः गन्ने की 100 टन/हैक्टर की

तरल गुड़ बनाने की प्रक्रिया

गुड़ बनाने की विधि के दौरान ही तरल गुड़ भी बनाया जा सकता है। इसमें पानी, शर्करायें और गैर शर्करायें शामिल हैं। इसमें ग्लुकोस व फ्रक्टोज बराबर अनुपात में पाये जाते हैं जिनके साथ प्रोटीनों, कार्बनिक अम्लों और खनिजों का पाया जाना शामिल है। रस के निष्कर्षण के बाद पोटाश एलॅम के रवों को इसमें डाला जाता है। इससे रस में से ठोस पदार्थों को नीचे बैठ जाने में सहायता मिलती है। इस प्रकार साफ किए गए रस को कढ़ाहे में उबाला जाता है। करीब 50 ग्राम चूने को मिलाकर पी-एच को 6.0 तक लाया जाता है। जब तापमान 850 सी. पहुंचता है तो भिंडी की गोंद को डालने के बाद पहली बार झागवाली मैल को हटाया जाता है। रासायनिक निर्मलकारियों में फॉस्फोरिक अम्ल और सुपर फॉस्फेट का प्रयोग किया जा सकता है। उबालने को जारी रखा जाता है और दूसरी बार मैली को 980 सी. पर हटाया जाता है। इस कार्य को पूरा करने का समय तब आता है जब तापमान 1060 सी. पर पहुंच जाता है और इस अवस्था में कढ़ाही को आग से उतार लिया जाता है और 0.04 प्रतिशत साइट्रिक अम्ल मिला दिया जाता है। तरल गुड़ चीनी और गुड़ दोनों से मीठा होता है। पूरी तरह शांत होने पर तरल गुड़ को साफ व कीटाणुरहित बोतलों में भरा जाता है। इसे 1-1.5 साल तक भंडारित किया जा सकता है। बेहतर भंडारण के लिए इसमें 0.1 प्रतिशत साइट्रिक अम्ल व 0.1 प्रतिशत सोडियम मेटाबाईसल्फाइट मिलाना आवश्यक है।

गन्ना पौध नर्सरी

फसल औसतन 208 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 53 कि.ग्रा. फॉस्फोरस, 280 कि.ग्रा. पोटाश, 30 कि.ग्रा. गंधक, 3.4 कि.ग्रा. लोहा, 1.2 कि.ग्रा. मैंगनीज और 0.6 कि.ग्रा. तांबे को मृदा से निकालती है। अत: मृदा की उर्वरता को बनाये रखने के लिए इन पोषक तत्वों की मृदा में पुन: पूर्ति करना आवश्यक है।

प्रश्न: गन्ने के खेत में कार्बनिक और रासायनिक खादों की कितनी मात्रा की आवश्यकता होती है?

उत्तर: गन्ने के खेत में कार्बनिक और रासायनिक खादों की आपूर्ति सदा मृदा परीक्षण के आधार पर सिफारिश की गई मात्रा द्वारा की जानी चाहिए। मृदा परीक्षण सिफारिशों के अभाव में आप 12.5 टन/हैक्टर कार्बनिक खादों को खेत तैयार करते समय डालें। विभिन्न राज्यों की मृदाओं के उर्वरता स्तरों और गन्ना उत्पादन क्षमता के आधार पर इन राज्यों की खादों की सिफारिश की गई मात्रायें अलग अलग होती हैं।

प्रश्न: गन्ने में खादों का प्रयोग करने का सही समय क्या है?

उत्तर: फॉस्फोरस की सारी मात्रा रोपण से पहले ही डाल दी जाती है जबकि नाइट्रोजन व पोटाश की मात्रा दो बराबर हिस्सों में बांटकर 45 और 90 दिनों पर ऊपरी सतह के रूप में प्रयुक्त की जाती है। खुले टैक्सचर वाली रेतीली मृदाओं और अगेती प्रजातियों के लिए नाइट्रोजन व पोटाश की मात्रा तीन बराबर हिस्सों में बांटकर 30, 60 और 90 दिनों पर ऊपरी सतह के रूप में प्रयुक्त की जाती है।

गन्ने में टपक सिंचाई

फव्वारा विधि से सिंचाई

मृदा प्रबंधन

प्रश्न: गन्ने की खेती के लिए आदर्श मृदा किस प्रकार की होती है?

उत्तर: गन्ना उत्पादन के लिए एक अच्छी जल निकासी वाली, पीएच. प्रतिक्रिया 6.5 से 7.0 के बीच हो, जिसमें पोषक तत्वों की उपयुक्त मात्रा हो और बिना संघनन वाली मृदाएं आदर्श होती हैं। मृदा ढीली व भुरभरी, जिसमें कम से कम 45 सें.मी. की गहराई तक हानिकारक लवण न हो और न ही उनमें पोषक तत्वों की कमी होनी चाहिए।

प्रश्न: गन्ने की खेती के लिए मृदा से किस प्रकार की अपेक्षायें होती हैं?

उत्तर: मृदा के भौतिक गुणों पर खेती करने की तकनीक निर्भर करती है। दोमट मृदाएं, जिनकी आकृति स्थिर कणों वाली हो, उनमें गन्ने की खेती के लिए तैयारी अपेक्षाकृत बहुत ही आसान होती है, क्योंकि इनमें खेत की तैयारी केवल खांचे और मेड़ों को आवश्यक दूरी पर बनाने तक ही सीमित रहती है।

चिकनी मृदा के कारण सख्त मृदाओं में खेत की तैयारी काफी उच्च स्तर की करनी पड़ती है। इसके लिए खांचे और मेड़ों को आवश्यक दूरी पर बनाने से पहले गहरी जुताई या रूखानी से कटाई करनी पड़ती है। गन्ने की जड़ें काफी गहराई तक जाती हैं और 5 मीटर से ऊपर दूरी तक पहुंचती हैं। इस प्रकार की गहरी मृदाओं में उग रही फसल में सूखे को सहने की काफी क्षमता रहती है। मृदा का स्थूल घनत्व 1.4 मि.ग्रा./मीटर 3 और छिद्रिता करीब 50 प्रतिशत होना चाहिए। इससे अपनी धारण क्षमता के स्तर पर इसके छिद्रों में वायु और जल की मात्रा एक जैसे अनुपात में होगी। अगर मृदा का स्थूल घनत्व 1.5 मि.ग्रा./मीटर 3 से अधिक होगा तो यह जड़ों के फैलाव में बाधक होने के कारण पौधों की वृद्धि में कमी का कारण बनता है।

सूखा प्रबंधन

प्रश्न: सूखे के प्रभावों को दूसरे तनावों से भिन्न कैसे पहचाना जा सकता है?

उत्तर: छोटी-छोटी पोरियां, नीचे वाली पत्तियों का सूखना और ऊपर वाली पत्तियों

मूल्यवर्धित गुड़ क्या होता है?

ठोस गुड़ को बनाते समय उसमें पोषक पदार्थों, जैसे कि मुरमरे, चने, तिल तथा विभिन्न प्रकार के नट्स जैसे कि काजू, बादाम, विटामिन, लोहा, स्वादवर्धक चॉकलेट पाउडर को मिलाकर इस प्रकार के गुड़ की मांग बढ़ाई जा सकती है। मुरमरे, चने, तिल और मूंगफली को विभिन्न अनुपातों, 1:0.75, 1:1, 1:1.25, 1:1.5 और 1:1.75 में मिलाकर गुड़ पट्टियां बनाई जाती हैं, जिससे पोषकता व स्वाद में वृद्धि होती है। गुड़-गेहूं के आटे और गुड़-बेसन नि:स्रावित स्नैक्स, गुड़ को आटे या बेसन के साथ 90:10, 80:20, 70:30, 60:40, 50:50 और 40:60 के अनुपात में मिलाकर बनाये जाते हैं। गुड़ को 10 प्रतिशत कोको पाउडर के साथ मिलाकर जो उत्पाद बना, वह चाकलेट की जगह पर लोगों को काफी पसंद आया। मूल्यवर्धित गुड़ गरीब व कुपोषित बच्चों के लिए पोषक आहार साबित होगा।

का अंदर की तरफ मुड़ना आदि सूखे के कुछ पहचाने जा सकने वाले लक्षण हैं।

प्रश्नः सूखे का गन्ना उत्पादन व शर्करा की मात्रा पर क्या प्रभाव है?

उत्तरः सूखे का गन्ना उत्पादन पर शर्करा की मात्रा पर अधिक प्रभाव देखा जाता है। इससे गन्ने की लंबवत वृद्धि करीब 30 प्रतिशत तक कम हो जाती है।

प्रश्नः किस अवस्था पर सूखे का प्रभाव सबसे घातक होता है?

उत्तरः शुरुआती अवस्थाएं, विशेषकर कल्ले निकलने की अवधि, सबसे अधिक हानिकारक होती है।

प्रश्नः खेत के हालातों में सूखे के प्रबंधन के कौन से आसान तरीके हैं?

उत्तरः रोपण से पहले बीज टुकड़ों को 40 प्रतिशत चूने से संतृप्त पानी में भिगोना, 2.5 कि.ग्रा. यूरिया और 2.5 कि.ग्रा. पोटाश का 100 लीटर पानी में घोल बनाकर 15-20 दिनों के अंतराल पर स्प्रे किया जाना और गन्ना अवशेषों का पलवार के रूप में प्रयोग प्रबंधन के कुछ आसान तरीके हैं।

गन्ने में पुष्पण का नियंत्रण

प्रश्नः पुष्पण के गन्ना उत्पादन व रस की गुणवत्ता पर क्या प्रभाव पड़ते हैं?

उत्तरः गन्ने की फसल में पुष्पण होने से गन्ना उत्पादन व रस की गुणवत्ता पर प्रभाव इस बात पर निर्भर करते हैं कि पुष्पण के बाद कटाई कब की जाती है। इसके अलावा चोटी की वृद्धि रुकने से गन्ने की कलिकाओं में फुटाव प्रारंभ हो जाता है और गन्ने में खोखलापन बनना शुरू हो जाता है। अगर फसल को उष्णकटिबंधीय क्षेत्र में मार्च के बाद काटा जाना है तो इसमें पुष्पण को रोकना अति आवश्यक है।

प्रश्नः गन्ने में पुष्पण को कैसे रोका जा सकता है?

उत्तरः पुष्पण को रोकने के लिए 500 पीपीएम ईथरल (100 मि.ली./100 लीटर पानी/एकड़ की दर से) को जुलाई के दूसरे सप्ताह में फसल के ऊपर मिस्ट के रूप में प्रयोग करने से पुष्पण को पूरी तरह से रोका जा सकता है। इसकी उच्च सांद्रता का प्रयोग मत करें।

गुड़ व उसकी गुणवत्ता

प्रश्नः गन्ने के गुड़ के संघटकों का ब्यौरा दें?

उत्तरः गुड़ में करीब 60-85 प्रतिशत शर्करा, 5-15 प्रतिश ग्लूकोज और फ्रक्टोज होते हैं, जिसके साथ 0.4 प्रतिशत प्रोटीन, 0.1 ग्राम वसा, 0.6 से 1.0 ग्राम तक खनिज पदार्थ (8 मि.ग्रा. कैल्शियम, 4 मि.ग्रा. फॉस्फोरस और 11.4 मि.ग्रा. लोहा) 100 ग्राम गुड़ में पाये जाते हैं। इसके अलावा विटामिन और अमीनो अम्ल भी नाम मात्र में पाये जाते हैं। सौ ग्राम गुड़ से 383 किलो कैलोरी ऊर्जा प्राप्त होती है। आयुर्वेद में दवाइयां बनाने के लिए गुड़ को सर्वोत्तम मूल पदार्थ माना जाता है। इसके मुकाबले सफेद रवेदार चीनी में 99.5 प्रतिशत शर्करा ही होती है, जबकि खनिज पदार्थ बिल्कुल भी नहीं होते।

तैयार गन्ने की फसल

गुड़ भंडारण की विधियां कौन-सी हैं?

- गुड़ को बड़ी मात्रा में भंडारगृह, जिसमें कैल्शियम, क्लोराइड या चूने जैसे नमी सोखने वाले पदार्थ रखे हों, में भंडारित किया जा सकता है
- गुड़ की तहों के बीच गन्ने के अवशेष, फ्लाई ऐश, पामीराह के पत्ते, चावल की भूसी इत्यादि रखें
- विशेषकर मानसून ऋतु के दौरान भंडारगृह में चावल की भूसी का धुआं करें
- कम तापमान पर भंडारण करने से गुड़ की ताजगी और सुगंध बनी रहती है तथा इसके शर्करा के स्तर में भी गिरावट नहीं होगी।
- गुड़ को टाट के बोरे, जिनके अंदर काली पॉलीथीन की परत लगी हो, में भंडारित किया जा सकता है।
- गर्मियों में गुड़ की नमी को छाया में सुखाकर 6 प्रतिशत से कम लाकर इसे टाट के बोरे, जिनके अंदर काली पॉलीथीन की परत लगी हो, में भंडारित करने से इसकी भंडारण की अवधि और उपयोगिता बढ़ जाती है।
- आम मिट्टी के बर्तन, जिन्हें बाहर अंदर से पेंट किया गया हो, लकड़ी के डिब्बे, पामिराह के पत्तों से बनी टोकरियों को घर में गुड़ को भंडारित करने के लिए प्रयोग किया जा सकता है।

गन्ने के संघटक

पानीः 75-88 प्रतिशत

शर्कराः 10-21 प्रतिशत

रिड्यूसिंग शर्कराएंः 0.3-3.0 प्रतिशत

शर्कराओं के अलावा दूसरे कार्बनिक पदार्थः 0.5-1.0 प्रतिशत

अकार्बनिक संयोजकः 0.2-0.6 प्रतिशत

नाइट्रोजन वाले संयोजकः 0.5-1.0 प्रतिशत

प्रश्नः गुड़ बनाने की विधि क्या है?

उत्तरः आमतौर पर बाजार में मिलने वाले गुड़ में हानिकारक रसायनों, जैसे कि सल्फरडाईऑक्साइड अधिक मात्रा में पाया जाता है। गुड़ बनाने के लिए रसायनों के प्रयोग से स्वाद और भंडारण प्रभावित होते हैं। उच्च गुणवत्ता वाले गुड़ को बनाने के लिए पहले तो गन्ने की खेती को प्राकृतिक तौर पर कार्बनिक पदार्थों के प्रयोग से किया जाना चाहिए और उससे गुड़ बनाते समय कार्बनिक निर्मलकारियों का प्रयोग ही किया जाना चाहिए। देश में और निर्यात के लिए भी कार्बनिक विधि से उगाई गई फसल और गुड़ बनाने की मांग बढ़ती जा रही है। कार्बनिक गुड़ बनाने के लिए गन्ने की खेती उन मृदाओं में की जानी चाहिए जो पिछली फसल के रासायनिक खादों, खरपतवारनाशियों, कीटनाशकों इत्यादि के अवशेषों से मुक्त हों। कार्बनिक खेती के लिए सभी सिफारिश की गई तकनीकों का प्रयोग किया जाये और पोषक तत्वों के लिए केवल कार्बनिक स्रोतों का ही उपयोग किया जाये। खरपतवारनाशियों व कीटनाशकों का बिल्कुल भी प्रयोग न किया जाये। रोगों व हानिकारक जीवों के प्रबंधन के लिए केवल जैव-नियंत्रकों का ही प्रयोग किया जाये। ■

(स्रोतः भाकृअनुप-गन्ना प्रजनन संस्थान, कोयम्बटूर की वेबसाइट)

गन्ना विशेषांक

गन्ने की खेती में उपयोगी तकनीक और उपकरण

अंतराल रोपाई तकनीक (एसटीपी)

एक साथ कल्ले निकलने तथा गन्ना बीज के शीघ्र बहुगुणन हेतु भाकृअनुप-भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ द्वारा स्पेस्ड ट्रांसप्लांटिंग तकनीक (एस.टी.पी.) विकसित की गई है। इस तकनीक से बीज बहुगुणन अनुपात 1:10 से 1:40 तक बढ़ाया जा सकता है। इसके प्रयोग से नवीनतम विकसित प्रजातियों के तीव्र प्रसार में कई स्थानों पर सफलता मिली है।

तीन स्तरीय बीज कार्यक्रम

यह कार्यक्रम गन्ना उत्पादकों को रोग मुक्त स्वस्थ बीज प्रदान करता है। यह पूरे देश में लोकप्रिय हो गया है। नम गर्म हवा उपकरण (एमएचएटी) की रूपरेखा इस संस्थान में ही विकसित की गई है। इसे अनेक चीनी मिलों में स्थापित भी किया गया है। इस विधि ने गन्ना उत्पादन में टिकाऊपन बनाए रखने की अपनी उपयोगिता को साबित कर दिया है।

गन्ना कृषि का मशीनीकरण

रिजर टाइप शुगरकेन कटर-प्लांटर

ट्रैक्टरचालित रिजर टाइप शुगरकेन कटर-प्लांटर 75/90 सें.मी. की दूरी पर गन्ने की बुआई में समाहित सभी प्रमुख कार्यों का सफलतापूर्वक निष्पादन करता है। इस यंत्र द्वारा एक हैक्टर क्षेत्र की बुआई 4-5 घंटे में हो जाती है। यह यंत्र बुआई क्रियाओं में लगने वाली लागत में 60 प्रतिशत की बचत करता है।

तीन पंक्ति बहुउद्देशीय गन्ना कटर-प्लांटर

खेत पर चलने वाले पहियों (ग्राउन्ड व्हील) से संचालित तीन-पंक्ति बहुउद्देशीय गन्ना कटर-प्लांटर 75 सें.मी. की दूरी पर गन्ने की बुआई हेतु सभी कार्यों का सुगमतापूर्वक निष्पादन करने में कारगर है। एक हैक्टर क्षेत्र में इस यंत्र की प्रभावी बुआई क्षमता 3.5 से 4.0 घंटे है। इस यंत्र के प्रयोग से बुआई पर मानव श्रम में लगने वाली 70 प्रतिशत लागत की बचत की जा सकती है।

गन्ने की बुआई-कटाई में उपकरणों का प्रयोग

युगलपंक्ति गन्ना कटर-प्लांटर

ट्रैक्टर द्वारा संचालित युगलपंक्ति गन्ना कटर-प्लांटर को युगलपंक्ति ज्यामितीय (30 सें.मी. दूरी) के अंतर्गत गन्ने की बुआई हेतु विकसित किया गया है। इस युगलपंक्ति के बाद की दूरी में भिन्नता भी रखी जा सकती है। एक हैक्टर क्षेत्र में बुआई हेतु इस यंत्र की प्रभावी क्षमता 4-5 घंटे है। इससे बुआई कार्यों में लगने वाली लागत में लगभग 60 प्रतिशत तक बचत की जा सकती है।

शून्य-कर्षण गन्ना कटाई-रोपाई यंत्र

(पीटीओ) संचालित 'शून्य-कर्षण गन्ना-कटाई-रोपाई यंत्र' गन्ने के रोपण के लिए सभी क्रियाओं के साथ 75/90 सें.मी. अंतराल पर गन्ना बुआई हेतु विकसित किया गया। बाद में जोड़ी पंक्तियों के बीच की दूरी को कम व ज्यादा किया जा सकता है। यह 4-5 घंटे में एक हैक्टर में रोपण की

ट्रैक्टरचालित रिजर टाइप शुगरकेन कटर प्लांटर

प्रभावी क्षमता रखता है और लगभग रोपण लागत में 60 प्रतिशत बचत भी करता है। यह बीज शैय्या निर्माण की लागत को भी कम करता है।

दो-पंक्तियों में गड्ढा खुदाई यंत्र

यह यंत्र 25-30 सें.मी. गहरे, 70 सें.मी. व्यास वाले 30 सें.मी. अंतराल पर वृत्ताकार गड्ढे वलय गड्ढा पद्धति में गन्ना बोने हेतु विकसित किया गया। यह 150 गड्ढे/घंटा (0.017 हैक्टर/घंटा) की खुदाई की दर से प्रभावी क्षमता रखता है और 400 श्रम दिवस/हैक्टर बचाता है। मानव खुदाई की तुलना में यह 70 प्रतिशत गड्ढा खुदाई की लागत में बचत करता है।

रेज्ड बेड सीडर

17 सें.मी. पर गेहूं की बुआई हेतु तीन उठी हुई बीज शैय्याओं (2 पूर्ण शैय्याओं व 2 आधी शैय्याओं) तथा आवश्यकतानुसार गन्ने की बुआई हेतु 75 सें.मी. की दूरी पर तीन कूंड़ों के बनाने हेतु रेज्ड बेड सीडर का विकास किया गया है। इसकी प्रभावी क्षमता 0.35-0.40 हैक्टर/घंटा है।

रेज्ड बेड सीडर-कम-शुगरकेन कटर प्लांटर

इस यंत्र का विकास नालियों में गन्ने की दो पंक्तियों को बोने तथा गेहूं की दो पंक्तियों को उठी हुई क्यारियों पर अंतरसस्य फसल के रूप में बोने हेतु विकसित किया गया है। इसकी प्रभावी क्षमता 0.20-0.25 हैक्टर/घंटा है। इसके प्रयोग से लगभग 60 प्रतिशत बुआई लागत में बचत की जा सकती है।

पेड़ी प्रबंधन यंत्र

पेड़ी प्रबंधन यंत्र (आर.एम.डी.) पेड़ी

युगलपंक्ति गन्ना कटर प्लांटर

फसल के प्रबंधन में किए जाने वाले सभी कार्यों जैसे ठूंठों की छंटाई, उसके आसपास की निराई-गुड़ाई, पुरानी जड़ें काटने, खाद, उर्वरक व जैवकारकों तथा द्रवीय रसायनों का प्रयोग तथा मिट्टी चढ़ाने इत्यादि को एक बार में ही निष्पादित कर देता है। इस यंत्र की क्षमता 0.35-0.40 हैक्टर/घंटा है। इस यंत्र के प्रयोग से लागत को 60 प्रतिशत तक बचाया जा सकता है।

(साभारः भाकृअनुप-भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ)

गन्ना बोने की नई तकनीक 'केन-नोड प्रौद्योगिकी'

भाकृअनुप-भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ ने बौद्धिक सम्पदा अधिकार (आईपीआर) के अंतर्गत अपने नवाचारों के लिए पेटेंट दाखिल करना शुरू कर दिया है और अब तक पांच पेटेंट दायर कर दिए हैं। जिसमें प्रमुख है, गन्ना बोने की 'केन-नोड प्रौद्योगिकी'। इसके जरिए गन्ने के बीजों पर आने वाला खर्च एक तिहाई रह जाएगा। 'केन नोड' नाम की गन्ना बोने की इस नई तकनीक से न केवल कम बीज के इस्तेमाल से गन्ने का ज्यादा उत्पादन हो सकेगा, बल्कि इससे समय की भी काफी बचत होगी।

क्या है 'केन नोड' तकनीक

खेत के पास एक छोटी-सी नर्सरी बनाकर उसमें बराबर अनुपात में सड़ी हुई गोबर की खाद, मिट्टी और हो सके तो बालू की परत बिछा दी जाती है। इस परत में गन्ने के इन एक आंख वाले छोटे-छोटे टुकड़ों को बिछा दिया जाता है। इन टुकड़ों को एक लीटर पानी में 10 से 15 मि.ली. दवा में भिगोकर बिछाया जाता है, फिर इनके ऊपर खाद डाल दी जाती है। 5-6 दिनों में ही गन्ने के इन टुकड़ों की आंख फूलने लगती है, जिसका मतलब है कि ये अंकुरित होने लगते हैं। इस नई तकनीक को ईजाद करने वाले, भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ में कृषि वैज्ञानिक के पद पर कार्यरत डा. एस.एन. सिंह बताते हैं, ''आमतौर पर गन्ना बोने के लिए बीज के तौर पर तीन आंख वाले गन्ने की पेड़ी का प्रयोग किया जाता है, पर 'केन नोड' तकनीक में तीन आंखों की जगह एक आंख वाला टुकड़ा ही प्रयोग किया जाता है।''

गन्ना बोने की इस नई तकनीक के फायदों के बारे में डा. सिंह आगे बताते हैं, ''गन्ने के 3-3 आंख वाले टुकड़े बोने के समय प्रति हैक्टर के लिए कम से कम 70 से 80 क्विंटल बीज की जरूरत होती है, जबकि 'केन नोड' तकनीक से केवल 15 से 18 क्विंटल प्रति हैक्टर बीज से ही काम चल जाता है। इस विधि से दूसरा फायदा यह है कि 27-28 दिनों में ही गन्ना जमीन से बाहर निकल आता है। इस तरह पुरानी विधियों की तुलना में इससे कम से कम 12 से 15 दिनों की बचत होती है। इस तकनीक का एक और फायदा यह है कि नर्सरी में गन्ने का जो बीज पहले से अंकुरित हो जाता है उसी बीज को बोया जाता है, जिससे पौधे के न उगने की संभावना बहुत कम हो जाती है। ऐसे में गन्ने के पौधों के बीच अंतर नहीं रहता और कम जमीन पर ज्यादा फसल उगाई जा सकेगी।'' आमतौर पर गन्ने के बीज की कीमत, गन्ने की कीमतों से 15 फीसदी तक ज्यादा होती है। सामान्य दिनों में 300 से 400 रुपये तक बिकने वाले गन्ने के बीज बुआई के दिनों में 500 रुपये प्रति क्विंटल तक बिकने लगते हैं। ऐसे में गन्ना अनुसंधान संस्थान द्वारा विकसित की गई यह तकनीक किसानों को काफी लाभ पहुंचा सकती है।

संस्थान में कृषि प्रसार विभाग के वैज्ञानिकों ने बताया, ''एक एकड़ में उगाए जाने वाले गन्ने के बीजों पर लगभग 22 हजार रुपये खर्च आता है। इस तकनीक का इस्तेमाल करके अब 6 हजार में काम चल जाएगा। इससे लगभग 12 हजार रुपये की बचत होगी। वहीं 1 हैक्टर में 5 टन के करीब गन्ना उगाया जा सकेगा।''

संस्थान के वैज्ञानिकों ने अनुसार गन्ने को उगाने में ज्यादा पैसा लगता है और गन्ने की कीमतें नहीं बढ़ रही। यहां ज्यादातर किसान बंटाई पर खेत लेते हैं। बड़े किसानों से उधार लेकर भूमिहीन किसान गन्ने की खेती करते हैं। जमीन और सिंचाई के पानी, दोनों का अतिरिक्त भार उनकी कमर तोड़ देता है। ऐसे में नई तकनीकों के जरिए गन्ना उगाने में आने वाली लागत को कम करना जरूरी है, ताकि किसानों को मुनाफा हो सके।

(स्रोतः भाकृअनुप-भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ)

गन्ने के साथ पपीते की खेती दिलाएगी बम्पर मुनाफा

पपीता नगदी फसल है। इसकी मांग लगातार बढ़ती जा रही है। किसान अपने गन्ने के खेतों में सहफसल के रूप में पपीते को उगाकर कमाई करें, इसके लिए प्रयोग किए जा रहे हैं। भाकृअनुप-भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ के कृषि वैज्ञानिकों ने 'गन्ने की खेती के साथ पपीते की खेती' जैसे नायाब तरीके की खोज की है। यहां के वैज्ञानिकों ने उत्तर-पूर्वी राज्य मिजोरम में जाकर यह देखा है कि वहां के किसान किस तरह से गन्ने के साथ पपीते की उत्तम खेती कर रहे हैं। इससे वहां किसानों की आय भी बढ़ गई है। ऐसे में कृषि वैज्ञानिकों ने उत्तर प्रदेश के पूर्वांचल और बिहार के किसानों को सलाह दी है कि किसान जब गन्ने की शरदकालीन बुआई करें तो उसके साथ पपीते की खेती करें। यह किसान के लिए बहुत ही लाभकारी होगा।

उत्तर भारत के लिए यह है पहला प्रयोग

देश के सबसे बड़े गन्ना उत्पादक राज्य उत्तर प्रदेश में गन्ने के साथ कई सारी दूसरी फसलों को लगाया जाता है। अभी तक यहां गन्ने के साथ पपीते की खेती को किसान बड़े पैमाने पर नहीं कर पाए हैं। गाजीपुर, बलिया, देवरिया, मऊ और आजमगढ़ के कुछ जिलों में प्रयोग के तौर पर इसको बहुत छोटी जगह में आजमाया गया है। गन्ने की फसल तैयार होने में 11 से लेकर 12 महीने का समय लगता है, ऐसे में इस बीच गन्ने के साथ किसान कुछ दूसरी फसलें लगाकर अच्छी कमाई कर सकते हैं। किसान गन्ने के साथ पपीता उगाएं तो उनके लिए दोहरा लाभ होगा। पपीता जल्दी तैयार हो जाएगा और यह गन्ने के खेत में जगह भी अधिक नहीं लेगा।

बुआई का समय

पपीते की खेती के लिए पौधा आमतौर पर जून-जुलाई में लगाया जाता है। कुछ इलाकों में जहां सिंचाई की व्यवस्था अच्छी होती है वहां पर इसे सितंबर और अक्टूबर में भी लगाया जाता है। भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान के फसल उत्पादन विभाग के वैज्ञानिकों ने बताया कि गन्ने जैसी नगदी फसल के साथ दूसरी ऐसी फसलें जिससे किसानों को लाभ मिले, इसका प्रयोग चल रहा है। इस कड़ी में उत्तर प्रदेश के गन्ना किसानों के लिए गन्ने के साथ पपीते की खेती एक नया विकल्प है।

ऐसे करें खेत तैयार

पपीते की उन्नतशील प्रजातियां मधु, हनी, पूसा डिलिशियस, पूसा ड्वार्फ, पूसा नन्हा, सीओ-7 और पीके-10 हैं। एक एकड़ पौध रोपण के लिए मात्र 125 ग्राम बीज पर्याप्त होता है। बीज को तीन ग्राम कैप्टॉन दवा प्रति कि.ग्रा. की दर से उपचार करके 15 सें.मी. की दूरी पर दो सें.मी. गहराई में लगाकर पौध तैयार करनी

गन्ने के साथ चने की खेती

चाहिए। 10 कि.ग्रा. सड़ी गोबर की खाद प्रति पौधा और 500 ग्राम अमोनियम सल्फेट सिंगल सुपर फॉस्फेट और पोटेशियम सल्फेट को 2:4 के अनुपात में प्रति पौधा देना चाहिए।

पपीते को रोगों से बचाएं

पपीते के प्रमुख रोगों में लीफकर्ल और मोजेक रोग हैं। ऐसे में जब पपीते का पौधा बड़ा हो जाए तो रोगों से बचाने के लिए मैलाथियान और ई.सी. को पानी में मिलाकर छिड़काव करना चाहिए। इस तरीके को अपनाकर पपीते की खेती करने पर प्रति पौध 40 कि.ग्रा. तथा प्रति एकड़ 200 से 250 क्विंटल तक पैदावार मिल जाती है।

ऐसे करें उपचार

गन्ना संस्थान के वैज्ञानिकों के अनुसार उत्तर प्रदेश के पूर्वांचल के जिलों में दोमट और बलुई मृदा की अधिकता है। यह मृदा पपीते के लिए उपयुक्त होती है। पपीते की खेती के लिए पानी की भी जरूरत ज्यादा पड़ती है। यहां का मौसम भी पपीते की फसल के लिए अनुकूल है, लेकिन किसानों को खेत की तैयारी से लेकर बीज का चयन जैसी चीजों के लिए विशेष ध्यान रखना होगा। पपीते में लगने वाले रोग गन्ने में भी फैल सकते हैं। किसानों को किसी एक फसल में भी रोग लगे तो तो उसका तुरंत उपचार करना चाहिए।

फल मंडियों में पपीते की खपत

गन्ना संस्थान के वैज्ञानिकों के अनुसार पपीते का पौधा गन्ने में लगने वाले रोगों के लिए एक प्रतिरोधक का भी काम करता है। इसके साथ ही गन्ने का पौधा पपीते के लिए प्रतिरोधक भी है। उत्तर प्रदेश की फल मंडियों में पपीते की खपत है। इसके लिए देश के बाकी राज्यों पर निर्भर रहना पड़ता है। बिहार, बंगाल, महाराष्ट्र और दक्षिण भारत के राज्यों द्वारा यहां से पपीता मंगवाया जाता है। ऐसे में प्रदेश में ही गन्ने के सहफसली रूप में पपीता फायदेमंद होगा। ■

(स्रोत: भाकृअनुप-भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ)

गन्ने की खेती में सूक्ष्म पोषक तत्वों का रखें ख्याल

सूक्ष्म पोषक तत्व गन्ने के वर्धन और विकास के लिए काफी कम मात्रा में आवश्यक होते हैं। हरे पौधों के लिए अनिवार्य पोषक तत्व हैं; लोहा, मैंगनीज, तांबा, जिंक, बोरॉन, मॉलिब्डीनम और कलोरीन। अधिकतर सूक्ष्म पोषक तत्व जीवों के द्वारा उत्पादित एंजाइमों और को-एंजाइमों के महत्वपूर्ण हिस्से हैं, जो उनके विभिन्न कार्य की प्रक्रियाओं को पूरा करने के लिए आवश्यक है। इन तत्वों की उपलब्धता बहुत कम होती है तो पौधे इनकी कमी को विशिष्ट लक्षणों द्वारा दर्शाते हैं और पौधे की वृद्धि प्रभावित होती है। दूसरी तरफ अगर इनकी उपलब्धता अधिक हो जाती या पौधों द्वारा अधिक अवशोषित होते हैं, तब इनके पौधों में विषाक्तता के लक्षण दिखाई देते हैं और उत्पादन में कमी हो जाती है। अत: पोषक तत्वों की उपलब्धत्ता को ठीक अनुपात में उपयुक्त स्तर पर बनाये रखना उच्चतम उत्पादकता को प्राप्त करने के लिए आवश्यक है। दूसरी फसलों की तरह गन्ने की फसल के लिए भी सभी सूक्ष्म पोषक तत्वों की इष्टतम वृद्धि और उत्पादन के लिए आवश्यकता होती है। ये तत्व गुणवत्ता वाले गन्नों के उत्पादन के लिए भी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। गन्ने की फसल उच्च जैवभार उत्पादक है। अत: यह सभी सूक्ष्म पोषक तत्वों की उच्च मात्रा को खेत से निकालकर ले जाती है। इसके अलावा आमतौर पर एक बार रोपित की गई गन्ने की फसल 3 वर्ष तक खेत में रहती है, जिसके कारण सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी के लक्षण इसमें आमतौर पर देखे जाते हैं।

गन्ने में लोहे की कमी के लक्षण

पूरी पत्ती में पीलापन आना, जिसके बाद हरी और पीली प्रत्यावर्ती धारियां, पत्ती की पूरी लंबाई तक विकसित होती दिखाई देने लगती हैं। इसे अंग्रेजी में इंटरवीनल क्लोरोसिस का नाम दिया जाता है। अंत में पूरी पत्ती पीली हो जाती है। इस कमी के लक्षण सर्वप्रथम नये पत्तों में दिखाई देते हैं, क्योंकि लोहा पौधे के अंदर पुन:प्रस्थान नहीं करता है। इसकी कमी का प्रभाव पेड़ी और नवीन फसलों में अधिक दिखाई देता है। क्लोरोसिस के कारण पौधे बौने रह जाते हैं और कभी-कभी प्रभावित क्लम्प सूख जाते हैं।

गन्ने में लोहे की कमी को ऐसे करें दूर

लोहे की कमी को दूर करने के लिए, 1.0 से 2.5 प्रतिशत फेरस सल्फेट को 0.1 प्रतिशत साइट्रिक एसिड के साथ मिलाकर तैयार घोल को हर सप्ताह तब तक स्प्रे करें, जब तक लक्षण खत्म न हो जायें। मृदा की आदर्श अवस्थाओं में 25-50 कि.ग्रा. फेरस सल्फेट से मृदा के उपचार की सिफारिश की जाती है। लोहे की कमी के कारण होने वाले क्लोरोसिस को ठीक करने के लिए 2.5 टन कार्बनिक खाद/हैक्टर में 125 कि.ग्रा. फेरस सल्फेट को मिलाकर प्रयोग करना अति उत्तम है। चूनेदार मृदाओं में जिप्सम/गंधक का प्रयोग और पानी की निकासी के साधन होने से लोहे की उपलब्धता बढ़ जाती है।

ड्रिप सिंचाई प्रणाली से गन्ना उत्पादन

आर. एल. चौधरी, योगेश्वर सिंह, महेश कुमार, प्रवीण माने, पी.ए. काले और **एन.पी. सिंह**
भाकृअनुप-राष्ट्रीय अजैविक स्ट्रैस प्रबंधन संस्थान, बारामती-413115, पुणे (महाराष्ट्र)

"भारत, दुनिया में ब्राजील के बाद दूसरा सबसे बड़ा गन्ना उत्पादक देश है। ब्राजील, ऑस्ट्रेलिया, रूस, भारत, क्यूबा, चीन, थाईलैंड, संयुक्त राज्य अमेरिका और पाकिस्तान आदि देशों में व्यावसायिक रूप से गन्ना उगाया जाता है। भारत में, 45.17 लाख हैक्टर क्षेत्र में गन्ना उगाया जाता है। उससे 30.98 लाख टन के उत्पादन के साथ उत्पादकता लगभग 67.57 टन/हैक्टर है। उत्तर प्रदेश, तमिलनाडु, कर्नाटक, महाराष्ट्र, आंध्र प्रदेश, बिहार और उत्तराखंड व्यावसायिक रूप से गन्ने की खेती करने वाले राज्य हैं। गन्ना एक बारहमासी फसल है, जो 12 से 18 महीने की अवधि के बीच पककर तैयार होती है। आमतौर पर भारत में 12 महीने के लिए गन्ना लगाया जाता है। इसका खेत में रोपण जनवरी-फरवरी में किया जाता है। गन्ना 16-18 महीने के लिए दक्षिणी भारत के राज्यों जैसे कि आंध्र प्रदेश, कर्नाटक और तमिलनाडु के कुछ हिस्सों में जुलाई-अगस्त में लगाया जाता है। इसके अलावा गन्ने का तीसरा रोपण अक्टूबर-नवंबर में किया जाता है, जिसको पूर्व-मौसमी (15 महीने) फसल के नाम से जाना जाता है।"

लंबी अवधि की फसल होने के कारण गन्ने की फसल को प्रति हैक्टर लगभग 125-250 सें.मी. जल की आवश्यकता होती है। यह मात्रा अन्य कृषि फसलों की तुलना में बहुत अधिक है। हमारे देश में सिंचाई का सबसे आम तरीका परंपरागत सिंचाई प्रणाली है। इस सिंचाई पद्धति से वाष्पीकरण व सतह अपवाह (रन-ऑफ) के द्वारा हजारों लीटर पानी व्यर्थ चला जाता है। अन्य सिंचाई पद्धतियों/तरीकों की तुलना में इस सिंचाई पद्धति में पानी बहुतायत में इस्तेमाल होता है तथा सिंचाई दक्षता भी बहुत कम होती है। गन्ना बारहमासी फसल है और पानी की आवश्यकता पूरे जीवनचक्र में रहती है, विशेषकर गन्ने के विकास की महत्वपूर्ण क्रांतिक अवस्थाओं/चरणों के समय। गन्ने में चार महत्वपूर्ण विकास चरण होते हैं, जैसे कि गन्ना अंकुरण चरण (बुआई से 60 दिनों तक), कल्ले निकलना या प्रारंभिक चरण (बुआई के 60 दिनों बाद से 120 दिनों तक), लम्बवत वृद्धि/भव्य विकास के चरण (बुआई के 120 दिनों बाद से 280 दिनों तक) और परिपक्वता और पकने का चरण। अतः गन्ना विकास की इन क्रांतिक अवस्थाओं विशेषकर कल्लों के बनने के समय पानी की अनुपलब्धता या सीमित उपलब्धता से गन्ने की पैदावार में भारी गिरावट आ जाती है। इसलिए गन्ने में जल संसाधनों का समुचित प्रबंधन करना बहुत ही महत्वपूर्ण है।

गन्ने में परंपरागत सिंचाई को अपनाने से गन्ना व चीनी उत्पादन में निस्संदेह कई गुना सुधार हुआ है, लेकिन दूसरी ओर यह कृषि सिंचाई पानी की खपत का एक बड़ा स्रोत भी है। अधिकांश सिंचाई प्रणाली 60-80 प्रतिशत एकरूपता पर आधारित है और इसमें कई सीमाएं होती हैं। इसलिए सिंचाई के अधिक कुशल तरीकों की खोज करना आवश्यक है। इससे कम सिंचाई की खपत से अधिक गन्ना उत्पादन प्राप्त की

जा सकती है। पूरे विश्व में वैज्ञानिक और उत्पादक/किसान हमेशा सिंचाई के नए, वैकल्पिक और अधिक कुशल तरीकों की तलाश में रहते हैं। इस श्रृंखला में उपसतह ड्रिप (एसएसडीआई) सिंचाई प्रणाली एक नवीनतम विकास है, जिसके द्वारा सूखा व सीमित जल उपलब्धता जैसी विपरीत परिस्थितियों में भी गन्ने से अधिक पैदावार प्राप्त की जा सकती है।

उपसतह ड्रिप की कार्य प्रणाली

उपसतह ड्रिप सिंचाई एक अत्यधिक कुशल सिंचाई प्रणाली है। इसमें पानी मृदा की सतह के नीचे देने से सतह सिंचाई के विपरीत प्रभावों जैसे कि पपड़ी आना और जलभराव इत्यादि समस्याओं से निजात मिलती है। साथ में वाष्पीकरण और सतह अपवाह द्वारा होने वाले सिंचाई जल के नुकसान को भी लगभग पूर्णत: समाप्त कर सकते हैं। एक उचित आकार और अच्छी तरह से स्थापित उपसतह ड्रिप सिंचाई प्रणाली के साथ, पानी का बहाव बेहद कुशल और एक समान होता है। इसमें केवल पौधों के आसपास का क्षेत्र ही गीला होता है और पानी सभी दिशाओं में एकसमान फैलता है। उपसतह में सिंचाई करने से खरपतवारों के बीज जोकि ज्यादातर मृदा की ऊपरी सतह पर ही होते हैं, नमी के अभाव से अंकुरित नहीं हो पाते। इसके कारण मूल्यवान फसलों की पैदावार में खरपतवारों से होने वाला नुकसान भी कम होता है। साथ में इनके प्रबंधन पर होने वाले खर्च में बचत के कारण किसान पर आर्थिक बोझ भी कम पड़ता है। इसके अलावा कुछ फसलों को सूखी सतह से प्रदान की जाने वाली अतिरिक्त गर्मी से लाभ हो सकता है और अधिक उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। उपसतह ड्रिप सिंचाई प्रणाली स्थापित होने पर फसल में अंत:सस्य क्रियाओं के करने में आसानी रहती है। ठीक से प्रबंधित होने पर उर्वरकों के प्रयोग को भी अनुकूलित किया जा सकता है। उपसतह ड्रिप सिंचाई एक प्रभावी सिंचाई पद्धति है, जो पानी को सीधे फसल के जड़ क्षेत्र में पहुंचाकर सिंचाई जल की मात्रा में काफी बचत करती है। यह एक खर्चीली प्रणाली है और इसमें विशेषज्ञ व्यक्ति और रखरखाव की अधिक आवश्यकता होती है। इसको खेत में एक बार स्थापित करने पर 4-5 से भी अधिक वर्षों तक सफलतापूर्वक उपयोग में लाया जा सकता है।

एकल पंक्ति विधि द्वारा स्थापित गन्ने की फसल का उपसतह ड्रिप सिंचाई प्रणाली में प्रदर्शन

गन्ने में उपसतह ड्रिप सिंचाई प्रणाली की आवश्यकता

- गन्ने में जल की खपत को कम करने तथा जल उत्पादकता बढ़ाने के लिए
- गन्ने की खेती में अंत:सस्य क्रियाओं को सुविधाजनक बनाने के लिए
- यांत्रिक या मैनुअल फसल कटाई के समय ड्रिप लेटरल को नुकसान से बचाने के लिए
- ड्रिप लेटरल को लम्बे समय के लिए दुरुस्त व उपयोगी रखने के लिए, जिससे बार-बार होने वाले खर्च से बचा जा सके

उपसतह ड्रिप सिंचाई प्रणाली की खेत में स्थापना व गन्ना लगाने की पद्धतियां

उपसतह ड्रिप सिंचाई प्रणाली को खेत में स्थापित करने से पहले खेत को पारंपरिक तरीके से जुताई करके समतल कर लिया जाता है। इसके बाद ट्रैक्टर द्वारा चालित मशीन की सहायता से ड्रिप की लेटरल पाइपों को मृदा की उपसतह में उचित दूरी पर स्थापित कर दिया जाता हैं।

उपसतह ड्रिप सिंचाई की लेटरल पाइपों को मृदा की उपसतह पर स्थापित करने के बाद निम्नलिखित पद्धतियों द्वारा गन्ना लगाया जा सकता है:

जोड़ी पंक्ति पद्धति

जोड़ी पंक्ति पद्धति में दो गन्ना पंक्तियों को अगली दो पंक्तियों से पहले एक व्यापक अंतराल पर एक साथ लगाया जाता है। इसमें जोड़ी पंक्ति के बीच 60 से 75 सें.मी. तथा दो जोड़ी पंक्तियों के बीच 210 से 240 सें.मी. की दूरी रखी जाती है। इस पद्धति में एक लेटरल पाइप को जोड़ी पंक्ति के ठीक बीचों-बीच मृदा में उपसतह पर मशीन द्वारा गन्ना लगाने से पहले स्थापित कर दिया जाता है। इस प्रकार इस पद्धति में एक लेटरल पाइप के दोनों तरफ गन्ने की दो पंक्तियां लगाई जाती हैं। इस पद्धति से गन्ना लगाने पर खेत में प्रति हैक्टर पौधों की संख्या एकल पंक्ति में पौधों की संख्या के समान रहती है। इसका प्रमुख लाभ यह है कि इसमें एक लेटरल पाइप द्वारा गन्ने की दो पंक्तियों में सिंचाई होने के कारण लगभग 50 प्रतिशत सिंचाई जल की बचत की जा सकती है।

जोड़ी पंक्ति पद्धति द्वारा स्थापित गन्ने की फसल का उपसतह ड्रिप सिंचाई प्रणाली में प्रदर्शन

जोड़ी पंक्ति पद्धति द्वारा स्थापित गन्ने की फसल का उपसतह ड्रिप सिंचाई प्रणाली में प्रदर्शन

एकल पंक्ति पद्धति

इस पद्धति में 120-150 सें.मी. की दूरी पर ड्रिप की लेटरल पाइपों को मृदा की उपसतह पर स्थापित करने के बाद गन्ने की 25-30 दिनों की पौध को लेटरल पाइपों के ठीक ऊपर मृदा में हल्का गड्ढा बनाकर 50-60 सें.मी. के अंतर पर रोपाई की जाती है। इस प्रकार इस पद्धति में एक लेटरल पाइप के ऊपर गन्ने की एक ही पंक्ति लगाई जाती है। पौध की रोपाई करने से पहले खेत को उपसतह ड्रिप द्वारा सिंचाई करके उचित मृदा जलधारिता की स्थिति आने तक गीला करना चाहिए, जिससे पौध भी जल्दी स्थापित हो जाती है और उनकी मृत्यु भी कम हो जाती है।

सिंचाई करने का समय

उपसतह ड्रिप द्वारा गन्ने में कब और कितनी सिंचाई करें यह गन्ना उत्पादन की जगह, बुआई का समय तथा वहां के मौसम पर निर्भर करता है। किसी भी स्थिति में पौध प्रतिरोपण से लेकर 20-30 दिनों तक, जब तक कि पौध अच्छी तरह से स्थापित नहीं हो जाये, खेत में नमी बनाये रखना बहुत ही आवश्यक है। इसके बाद फसल की प्रतिदिन एक घंटे के लिए या एक दिन के अंतराल के बाद 2 घंटे के लिए उपसतह ड्रिप प्रणाली के माध्यम से सिंचाई करने से गन्ने से अच्छी पैदावार प्राप्त की जा सकती है। इसके अलावा उपसतह ड्रिप द्वारा गन्ने में जल प्रबंधन किया जा सकता है। यह कार्यक्रम 4-5 लीटर प्रति घंटा प्रवाह दर (डिस्चार्ज रेट) पर आधारित है। यह किसी जगह के वाष्पीकरण में परिवर्तन के कारण उस स्थान तथा फसल के बुआई के समय के अनुसार उचित सुधार करके अपनाया जा सकता है। इस कार्यक्रम का पालन सीड्स (बीज) के अंकुरण के बाद मृदा में संतृप्ति प्राप्त करने के लिए किया जाना चाहिए।

उर्वरक देने का समय

गन्ना लंबी अवधि की फसल है और बेहतर उपज के लिए फसल को पर्याप्त पोषण की आवश्यकता होती है। नाइट्रोजन, फॉस्फोरस और पोटेशियम जैसे प्रमुख पोषक तत्वों की आवश्यकता इसको अधिक होती है। फसल के जीवनचक्र में उर्वरक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। गन्ने के लिए अनुशंसित उर्वरक खुराक विभिन्न मौसमों के लिए अलग-अलग है। एकवर्षी गन्ने के लिए उर्वरक खुराक क्रमशः 250-300:115-140:115-140 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, तथा पोटेशियम (एनपीके), पूर्व-मौसमी फसल के लिए क्रमशः 350:140:140 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर एनपीके तथा अर्धवार्षिकी फसल के लिए 450:170:170 कि.ग्रा. एनपीके प्रति हैक्टर है। पोषक तत्वों को उपसतह से ड्रिप सिंचाई द्वारा देने से, उर्वरक का होने वाला नुकसान अन्य सिंचाई पद्धति की तुलना में कम है और पोषक तत्व की दक्षता एसडीआई प्रणाली में उच्च है। इस प्रणाली में आमतौर पर फर्टिगेशन टैंक शामिल होते हैं। उसमें उर्वरक को भंडारित किया जाता है और एक इंजेक्शन उपकरण द्वारा उर्वरक को पाइपलाइन में छोड़ा जाता है। इंजेक्शन या तो एक बिजली के इंजेक्शन पंप के साथ या एक वेंचुरी उपकरण से दे सकते हैं, जिसे बिजली की आवश्यकता नहीं होती है। वेंचुरी दाब के अंतर पर चलने वाला यंत्र है। उर्वरकों का प्रयोग फसल में सिंचाई के समय वेंचुरी उपकरण द्वारा उचित ढंग से किया जा सकता है। इस पद्धति से तरल पदार्थ पानी में उचित गति से डाले जाते हैं। इसके द्वारा 60 से 70 लीटर प्रति घंटे की गति से उर्वरक दे सकते हैं। उच्च गन्ना उत्पादन और अधिक चीनी रिकवरी के लिए 15 दिनों के अंतराल पर या अधिक समान विभाजनों में उर्वरक डालें।

उपसतह ड्रिप सिंचाई प्रणाली के लाभ

फसल उपज और गुणवत्ता में बढ़ोतरी

उपसतह ड्रिप सिंचाई प्रणाली में पानी सीधे फसल के जड़ क्षेत्र में दिया जाता है। इसमें पानी और पोषक तत्वों की आपूर्ति एकसमान होती है, जिसका सकारात्मक प्रभाव सीधा फसल की वृद्धि एवं विकास पर होने से फसल के उत्पादन और गुणवत्ता में बढ़ोतरी दर्ज की गई है।

अधिक जल उपयोग दक्षता

जल का प्रत्यक्ष उपयोग गन्ना फसल के जड़ क्षेत्र में करने से वाष्पीकरण और सतह प्रवाह को कम करने में सहायता मिलती है। उपसतह ड्रिप सिंचाई तकनीक द्वारा गन्ना खेती में लगभग 25 प्रतिशत की सिंचाई के लिए आवश्यक पानी की मात्रा को कम कर सकते हैं। जड़ क्षेत्र में सीधे पानी का उपयोग करने से जल का अधिक सदुपयोग होता है, जिसके परिणामस्वरूप पानी की उपयोग दक्षता में वृद्धि होती है।

उपसतह ड्रिप सिंचाई प्रणाली क्या है?

उपसतह ड्रिप (एसएसडीआई) सिंचाई परंपरागत सतह ड्रिप सिंचाई प्रणाली का एक संशोधित रूप है। इसमें वाष्पीकरण द्वारा होने वाली जल हानि को बचाने के लिए ड्रिप के लेटरल पाईप को खेत में मृदा की सतह के नीचे स्थापित किया जाता है। उत्सर्जक (एमिटर) के माध्यम से निम्न जल प्रवाह दर (बूंद-बूंद करके 1 से 4 लीटर प्रति घंटा) पर सिंचाई की जाती है। इस सिंचाई पद्धति में सतह सिंचाई प्रणाली की तुलना में पानी का अधिक कुशलतापूर्वक उपयोग किया जाता है। उपसतह ड्रिप सिंचाई प्रणाली स्थापित करने की गहराई, मृदा की संरचना और फसल की जल मांग के आधार पर निर्भर करती है। लेटरल पाईप को मृदा की सतह के नीचे स्थापित करने के तीन अलग-अलग स्थान हैं। उथली जमीन के लिए 0.5-10 सें.मी. की गहराई पर, मध्यम गहरी जमीन के लिए 10-25 सें.मी. की गहराई पर और गहरी जमीन के लिए 25 सें.मी. से अधिक गहराई पर स्थापित कर सकते हैं।

कुशल फर्टिगेशन

सिंचाई के माध्यम से उर्वरक के देने की तकनीक को फर्टिगेशन कहा जाता है। उपसतह ड्रिप प्रणाली में उर्वरकों को फसल की जड़ों में देने से फसल को पोषक तत्व आसानी से व पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध होते हैं। यह उर्वरकों के वाष्पीकरण और लीचिंग द्वारा होने वाले नुकसान को कम करता है तथा मृदा में समान रूप से उर्वरकों का वितरण करने में मदद करता है।

मृदा का अपक्षरण कम करना

उपसतह ड्रिप पूरी तरह से भूमिगत सिंचाई प्रणाली है। इस प्रणाली में मृदा में पर्याप्त नमी बनी रहती है, जो मृदा के कणों को आपस में जोड़कर रखने में सहायक होती है तथा साथ में सुविकसित जड़तंत्र का निर्माण करती है। इसके अलावा सतह अपवाह और तेज हवा के कारण होने वाले मृदा के क्षरण को भी इस प्रणाली द्वारा कम किया जा सकता है।

ऊर्जा की बचत

इस प्रणाली को कम दबाव और छोटी प्रवाह दरों पर संचालित किया जाता है। पंपिंग सिस्टम द्वारा उपयोग की जाने वाली ऊर्जा प्रवाह दर, पंपिंग गहराई, पम्प पर दबाव, ऑपरेशन का समय और पंपिंग संयंत्र दक्षता सहित विभिन्न कारकों के संयोजन पर निर्भर करता है, इससे ऊर्जा की बचत होती है।

सावधानियां

- उपसतह ड्रिप सिंचाई प्रणाली के सभी घटकों को ठीक तरह से स्थापित किया गया है और कुशलता से काम कर रहे हैं या नहीं इसकी जांच करें।
- एक निश्चित अंतराल पर एसएसडीआई सिस्टम की जांच निरंतर कराते रहें।
- एसिड और क्लोरीन के प्रयोग से तलछट गठन से बचने में मदद मिलती है। एक समय में एसिड और क्लोरीन उपचार न दें।
- पानी के उच्च पी-एच की वजह से लेटरल में सॉल्ट का गठन होता है, उससे ब्लॉकेज हो सकता है। इससे बचने के लिए विशिष्ट अंतराल में पानी के पी-एच की जांच करना आवश्यक है।

चूहे लेटरल पाइपों के साथ-साथ गन्ना फसल को भी क्षति पहुंचाते हैं। इसलिए इनके नियंत्रण के लिए उचित प्रबंधन करना चाहिए।

उपसतह ड्रिप सिंचाई प्रणाली द्वारा तैयार गन्ने की लहलहाती फसल

खरपतवार नियंत्रण में सहायक

एसएसडीआई अपनाकर खरपतवारों के कारण होने वाली हानि को लगभग 30 प्रतिशत तक कम किया जा सकता है। उपसतह ड्रिप सिंचाई प्रणाली खरपतवार को नियंत्रित करने में सहायक है। इसमें पानी सीधे फसल की जड़ क्षेत्र में दिया जाता है।

फसल में कीटों व रोगों का कम संक्रमण

उपसतह ड्रिप पद्धति से पौधों का स्वस्थ विकास होता है, जिनमें कीट तथा रोगों से लड़ने की अधिक क्षमता होती है। फलस्वरूप कीटनाशकों पर होने वाले खर्च में भी कमी होती है।

कम श्रमिकों की आवश्यकता

एसएसडीआई का खेत में स्थापन करने के बाद प्रणाली को संचालित करने के लिए आवश्यक श्रमिक संख्या पारंपरिक सतह सिंचाई विधियों की तुलना में कम होती है। एसएसडीआई पूरी तरह से स्वचालित प्रणाली है, जिससे श्रमिकों की आवश्यकता कम होती है।

प्रणाली का जीवनकाल

एसएसडीआई की आरंभिक लागत उच्च है, लेकिन अन्य तरीकों से तुलना करें तो इसकी अवधि और काम करने की दक्षता अधिक है। अगर एसएसडीआई का समय-समय पर साफ-सफाई व उचित प्रबंधन किया जाए तो इसको खेत में स्थापित करने के बाद लगभग 10 वर्षों तक उपयोग में लाया जा सकता है।

मशीनरी का उपयोग

सतह सिंचाई के समय खेत में पारंपरिक प्रक्रिया निष्पादित करने में मुश्किल आती है, लेकिन एसएसडीआई प्रणाली में यह मृदा की सतह के नीचे है। इस प्रणाली के इस प्रमुख लाभ की वजह से फावड़ा चलाना, निराई-गुड़ाई मिट्टी चढ़ानाइत्यादि तरह की विभिन्न अंत:सस्य क्रियाओं का संचालन करने के साथ ही खेत में ट्रैक्टर और यांत्रिक हार्वेस्टर आदि का उपयोग कर सकते हैं।

उपसतह ड्रिप सिंचाई प्रणाली की स्थापना में होने वाला खर्च

एसएसडीआई प्रणाली में प्रारंभिक निवेश अधिक है और इसकी लागत जल स्रोत, गुणवत्ता और रिसवाव की आवश्यकता, सामग्री, मृदा की विशेषता और स्वचालन की डिग्री, इन विभिन्न घटकों पर निर्भर करती है। सामान्यतया स्थापना सहित प्रणाली की लागत लगभग 1,12,500 से 1,50,000 रुपये प्रति हैक्टर है।

उपसतह ड्रिप सिंचाई प्रणाली पर सब्सिडी

किसानों और उत्पादकों को ड्रिप सिंचाई प्रणाली पर मिलने वाली सब्सिडी 50-75 प्रतिशत तक है। स्थानीय बागवानी व कृषि विभाग से कृषि ड्रिप व्यवस्था पर मिलने वाली वर्तमान सब्सिडी के लिए संपर्क कर सकते हैं। देश में ड्रिप सिंचाई व्यवस्था में सब्सिडी की व्यवस्था केंद्र प्रायोजित और राज्य सरकार की योजनाओं में उपलब्ध है। किसान की जमीन की उपलब्धता की दर से सब्सिडी की मात्रा अलग-अलग राज्यों में बदल जाती है। ■

गन्ने की खेती में कब क्या करें

गन्ना विशेषांक

जनवरी

- पाले से बचाव के लिए खड़ी फसल में आवश्यकतानुसार सिंचाई करें।
- शरदकालीन गन्ने के साथ ली गई विभिन्न अन्त:फसलों जैसे सरसों, तोरिया, मसूर, आलू, धनिया, लहसुन, मेथी, गेंदा प्याज तथा गेहूं आदि आवश्यकतानुसार निराई, गुड़ाई, कीट प्रबंधन एवं संतुलित उर्वरकों का प्रयोग करें।
- बसंतकालीन बुआई की तैयारी शुरू कर दें। इसके लिए मृदा परीक्षण के बाद ही उर्वरकों का प्रयोग करें।
- बसंतकालीन बुआई के लिए कुल क्षेत्रफल का 1/3 भाग शीघ्र पकने वाली प्रजातियों के अंतर्गत रखें। इसके साथ ही बुआई के लिए स्वस्थ बीजों का चयन कर उनका विशेष प्रबंध करें।
- गन्ने से खाली हुए खेत की तैयारी कर पशुओं के लिए चारे की फसल एवं सब्जियों की खेती करें।
- अगेती पौधे की फसल की कटाई तापमान यदि काफी कम हो तो न करें। इससे पेड़ी गन्ने में फुटाव उत्तम नहीं होगा।

फरवरी

- पौध गन्ने की कटाई जमीन से सटाकर करें, जिससे फुटाव अच्छा होगा।
- यथासंभव पोगले न छोड़ें, इससे पेड़ी प्रबंध में कठिनाई होगी साथ ही उत्पादन अपेक्षित नहीं होगा।
- शरदकालीन गन्ने में सिंचाई एवं निराई, गुड़ाई तथा खरपतवार का नियंत्रण करें।

गन्ने की फसल

- गन्ना बीज जिन खेतों में रोकना हो उनमें सिंचाई आदि का विशेष ध्यान रखें। बुआई पूर्व बीज नर्सरी में यूरिया के प्रयोग से फुटाव अच्छा होता है।
- पेड़ी गन्ने की देखभाल करें, खाली जगह पर गैप फिलिंग करें तथा सिंचाई व गुड़ाई के बाद एनपीके आदि उर्वरकों का प्रयोग करें।
- कुल क्षेत्र के अनुसार प्रजातीय संतुलन को ध्यान में रखकर बुआई करें।
- गन्ना बीज उपचार के लिए पारायुक्त रसायन एग्लाल 3 प्रतिशत (560 ग्राम), एरिटान 6 प्रतिशत (280 ग्राम) या एमईएमसी 6 प्रतिशत (280 ग्राम), या बाविस्टीन 110 ग्राम को घोलकर टुकड़ों को उपचारित करें।
- बुआई के समय दीमक व अंकुरबेधक के नियंत्रण के लिए फोरेट-10 जी 25 कि.ग्रा. या सेविडाल 4:4 जी 25 कि.ग्रा. या क्लोरोपाइफॉस-20 ई.सी. 5 लीटर/हैक्टर की दर से प्रयोग करें।
- गन्ने की बुआई के समय सूक्ष्म पोषक तत्वों (जिंक, सल्फेट, सुपर शुगर कैन स्पेशल आदि का 25 कि.ग्रा./हैक्टर की दर से) का भी प्रयोग करें।

मार्च

- अच्छी उपज के लिए उत्तम प्रजातियों एवं बुआई की नई तकनीकों यथा ट्रेंच पद्धति का प्रयोग करें।
- सफेद गिडार के नियंत्रण के लिए बुआई के समय बबरिया वेसियाना एवं मेटारेजियम 5 कि.ग्रा./हैक्टर की दर से 60:40 के अनुपात में प्रयोग करें।
- आय को बढ़ाने तथा संसाधनों के समुचित प्रयोग के लिए गन्ने के साथ-साथ उड़द, मूंग, फ्रांसबीन मक्का आदि की फसलें लें।
- सहफसल में उर्वरकों की अतिरिक्त मात्रा का प्रयोग करें।
- शरदकालीन गन्ने में यदि फरवरी में यूरिया की टॉप ड्रेसिंग न की तो मार्च में सिंचाई के पश्चात 132 कि.ग्रा. यूरिया/हैक्टर की दर से टॉप ड्रेसिंग करें।
- बावक गन्ने की कटाई उपरांत खेत में मेड़ जोतने के बाद ठूंठों की छंटाई पंक्तियों के दोनों तरफ गुड़ाई एवं रिक्त स्थानों में पूर्व अंकुरित पौधों से भराई करें।
- ऐसीटोबेक्टर एवं पीएसबी 5 कि.ग्रा./हैक्टर की दर से प्रथम सिंचाई के उपरांत पौधों के कूंड़ बनाकर डालना

गन्ने की सही देखभाल है जरुरी

चाहिए या बुआई के समय प्रयोग करें।

- कंडुआ रोग दिखाई देने पर पौधों को नष्ट कर दें।
- चोटीबेधक के अंड समूह को एकत्रित कर नष्ट कर दें।
- बसंतकालीन गन्ने में खरपतवार नियंत्रण के लिए 2 कि.ग्रा. ऐतरा जीन सक्रिय तत्व पानी में घोल बनाकर बुआई के तुरंत बाद छिड़काव करें।

अप्रैल

- गन्ने के अच्छे फुटाव के लिए गुड़ाई कर कूंड़ बनाकर यूरिया खाद की दूसरी मात्रा का प्रयोग करें।
- शरदकालीन गन्ने के साथ अंत:फसल की कटाई यदि हो गई हो तो सिंचाई करें एवं उर्वरक की शेष मात्रा कूंड़ बनाकर डाल दें।
- यदि गेहूं के बाद गन्ने की बुआई कर रहे हैं तो लाइन से लाइन की दूरी घटाकर 65 सें.मी. कर लें। बीज की मात्रा भी बढ़ाकर प्रयोग करें, जिससे खेत में पौधों की संख्या उचित मात्रा में रहें।
- इसी माह में पायरिला का प्रकोप हो सकता है। यदि मित्र कीट (अंड परजीवी) इपीरिकीनिया मिलेनोल्युका खेत में है तो कीटनाशी का प्रयोग न करें, बल्कि सिंचाई कर हल्के यूरिया का प्रयोग करें।

मई

- सूखे से बचाने के लिए आवश्यकतानुसार सिंचाई करते रहें।
- इस माह में अगेती चोटीबेधक के नियंत्रण के लिए सिंचाई करते रहें। साथ ही सेवीडॉल 4:4 जी फोरेट-10 जी फरटेरा या कारटॉफ 25 कि.ग्रा./हैक्टर या क्लोरोपायरीफॉस 20 ई.सी. 1 लीटर 700 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें, जब अंडे एवं पतंगें दिखाई पड़े।
- अगेती चोटीबेधक के लिए ट्राइकोकार्ड 4/हैक्टर की दर से प्रयोग करें।
- फसल की अच्छी बढ़वार कीट नियंत्रण एवं पोषक तत्वों की कमी के लिए यूरिया मैक्रोन्यूट्रीएंट का 2 प्रतिशत घोल एवं कीटनाशक रसायन जैसे एंडोसल्फान मेटासिड या क्लोरोपायरीफॉस 20 ई.सी. का 1 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें।
- यदि बसंतकालीन बुआई के समय खरपतवार नियंत्रण के लिए ऐट्राजीन का प्रयोग किया है तो इस माह 2-4 डी 1 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व छिड़काव करें।

गन्ने में खरपतवार नियंत्रण भी है जरुरी

जून

- उर्वरक की शेष मात्रा इस माह अवश्य पूर्ण कर लें।
- गुड़ाई पूर्ण करने के पश्चात मिट्टी चढ़ाई का कार्य अवश्य करें।
- खरपतवार नियंत्रण के लिए निराई करें। यदि देर से अर्थात अप्रैल में बुआई के समय नाइट्रोजन का उपयोग किया है तो इस माह में खरपतवार नियंत्रण के लिए 2, 4 डी. 1 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व 500-600 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।

गन्ने का उचित प्रबन्धन

जुलाई

- गन्ने के जिन खेतों का ब्यात पूरा हो चुका है उनमें मिट्टी चढ़ा दें।
- चोटीबेधक की मादा तिल्ली जुलाई में पत्तियों की निचली सतह पर समूह में अंडे देती हैं।
- अंडे वाली पत्तियों को नष्ट कर दें तथा कार्बोफ्यूरॉन 3 जी. 25 क्विंटल/हैक्टर की दर से अवश्य प्रयोग करें।
- चोटीबेधक के नियंत्रण के लिए ट्राइकोकार्ड 4/हैक्टर की दर से प्रयोग करें।
- गुरदासपुरबेधक के नियंत्रण के लिए सूखे अगोले को काटकर जमीन में दबा दें तथा क्लोरोपायरीफॉस 20 ई.सी./लीटर का प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करें।
- जल निकासी का उचित प्रबंधन करें।
- वर्षा के दिनों में पर्याप्त वर्षा न होने पर 8-10 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करते रहें।
- सूखे से बचने, जल के समुचित उपयोग एवं बिजली की कमी से निपटने के लिए ड्रिप सिंचाई प्रयोग करें।
- सफेद गिडार के नियंत्रण के लिए लाइट ट्रैप या पौधों पर कीटनाशी छिड़काव कर नियंत्रण करें।
- शरदकालीन गन्ने को गिरने से बचाने के लिए बंधाई अवश्य करें।

अगस्त

- गुरदासपुरबेधक एवं सफेद मक्खी के प्रभावी नियंत्रण के लिए जल निकास की व्यवस्था करें। मोनोक्रोटोफॉस 36 ई.सी. या क्लोरोपायरीफॉस 20 ई.सी. 1-1 .5 लीटर प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करें।
- गन्ने की दूसरी बंधाई अवश्य करें।
- अगस्त में गन्ने पर चढ़ने वाले खरपतवार

गन्ने का खेत

यथा आइपोमिया प्रजाति (बेल) की बढ़वार होती है, जिसे खेत से उखाड़कर फेक दें अथवा मेट सल्फुरॉन मिथाइल (एमएसएम) 4 ग्राम/हैक्टर की दर से 500-600 लीटर पानी में घोल बनाकर जब इसमें छोटे पौधे खेत में दिखाई पड़े तो प्रयोग करना चहिये।

सितंबर

- गन्ने की तृतीय बंधाई का कार्य पूर्ण कर लें।
- शरदकालीन बुआई के लिए खेत की तैयारी शुरू कर दें।
- पायरिला का प्रकोप अधिक होने पर क्लोरोपायरीफॉस 20 ई.सी./लीटर या मोनोक्रोटोफॉस 36 ई.सी., 10-15 लीटर/हैक्टर की दर से उपयोग करें।

अक्टूबर

- शरदकालीन बुआई प्रारंभ कर दें, वैज्ञानिक बुआई विधी या ट्रेंच विधि का प्रयोग करें।
- यथासंभव गन्ने की लाइनें पूरब से पश्चिम की ओर होनी चाहिये।
- लाइन से लाइन की दूरी 90 सें.मी. रखें।
- गन्ना बीज की पारायुक्त रसायन से अवश्य उपचारित करें।
- आय बढ़ाने के लिए शरदकालीन बुआई में सहफसली पद्धति को अवश्य अपनायें।

नवम्बर

- फसल की अच्छी बढ़वार के लिए 12-15 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करें।
- अच्छी पेड़ी लेने के लिए गन्ने की कटाई सतह से करें, ताकि फुटाव अच्छा हो।
- चीनी मिल को गन्ना निर्धारित कैलेंडर अनुसार पर्ची प्राप्त होने पर कटाई कर आपूर्ति करें।
- अगेती प्रजाति की पेड़ी गन्ना चीनी मिल को साफ-सुथरी स्थिति में आपूर्ति करें।
- गन्ना संबंधी किसी भी कठिनाई पर संबंधित समिति, चीनी मिल एवं जिला गन्ना अधिकारी से संपर्क करें।
- समिति कर्ज की कटौतीपूर्ण करने के लिए कर्जे की पर्ची प्राप्त कर गन्ने की आपूर्ति प्राथमिकता पर करें।
- कर्जे की कटौती से संबंध में संबंधित समिति से संपर्क करें।

दिसंबर

- अंत में फसल में निराई-गुड़ाई करें।
- आवश्यकतानुसार सिंचाई करते रहें।
- पेड़ी फसल काटने के बाद यदि गेहूं की बुआई करना चाहते हैं तो गेहूं की पछेती किस्मों का चुनाव करें।
- खेतों में जीवांश खाद्य गोबर, कम्पोस्ट, मैली को डालकर या फैलाकर जुताई कर दें।
- पाले से फसल को बचाने के लिए सिंचाई करें।

(साभार: भाकृअनुप-गन्ना प्रजनन संस्थान, कोयंबटूर)

बोतल बंद गन्ने का रस ऐसे तैयार किया जा सकता है

उच्चतम गुणवत्ता वाले गन्ने के रस के लिए आप सही प्रजाति का चुनाव करें। इसके रस में शर्करा मात्रा की उच्च हो, हल्के रंग की हो और रस में रेशे कम हों। गन्ने को परिपक्वता होने पर काटें। इस कार्य के लिए को.सी. 671, को. 62175, को. 7717, को. 86032, को. 86249 और को. 94012 कुछ उपयुक्त प्रजातियां हैं।

- तीन कि.ग्रा. गन्ने के रस लिए एक नीबू और 2-3 ग्राम अदरक का रस मिलायें
- गन्ने के रस को 60^0-70^0 सी. पर 15 मिनट के लिए गर्म करें
- गन्दगी को मसलिन वाले कपड़े से छानकर निकाल दें
- गन्ने के रस को साफ व सुरक्षित करने के लिए 1 ग्राम सोडियम मेटाबाइसल्फाइट प्रति 8 लीटर रस में डालें
- इस रस को गर्म पानी से जीवाणुरहित की गई बोतलों में भरकर कार्क लगाने वाली मशीन की सहायता से कार्क लगायें

बोतल बंद रस को 6 से 8 सप्ताह के लिए भंडारित किया जा सकता है

इस कार्य के लिए जिसमें 500 बोतलें प्रतिदिन संरक्षित किए जाने का लक्ष्य हो, उसके लिए करीब 10,000 रुपये की लागत आती है, जिसमें बोतलों की कीमत, स्टेनलैस स्टील के बर्तन, बिजली के हीटर, गर्म पानी का जीवाणुरहित करने वाला टैंक और कार्क लगाने वाली मशीन शामिल हैं। गन्ना पेराई का यंत्र इसमें शामिल नहीं है।

गन्ना विशेषांक

वर्षा जल संचयन और संरक्षण के विविध आयाम

मनीष कुमार[1]**, रिंकी**[2]**, सीमा**[3]**, एन.वाई. आजमी**[4] और **पी.के. सिंह**[5]

वर्षा जल का संग्रहण सभी क्षेत्रों के लोगों के लिए जरूरी है। सतह से बारिश के पानी को इकट्ठा करना बहुत ही असरदार और पारंपरिक तकनीक है। इससे छोटे तालाबों, भूमिगत टैंकों, बांध आदि के इस्तेमाल से जल संरक्षण किया जा सकता है। भूमिगत पुनर्भरण तकनीक जल संग्रहण का एक नया तरीका है। इसे कुआं खोदकर गड्ढा, खाई, हैंडपम्प और कुएं को दोबारा चार्ज करके किया जा सकता है। पहले गांवों, कस्बों और नगरों की सीमा पर या कहीं नीची सतह पर तालाब अवश्य होते थे, जिनमें स्वाभाविक रूप से मानसून की वर्षा का जल एकत्रित हो जाता था। इसके साथ ही अनुपयोगी जल भी तालाब में एकत्र हो जाता था, जिसे मछलियां और मेंढ़क आदि साफ करते रहते थे। यह जल पूरे गांव के पशुओं आदि के काम में आता था। जरूरी है कि गांवों, कस्बों और नगरों में छोटे-बड़े तालाब बनाकर वर्षा जल का संरक्षण किया जाए। मोहल्ला, नगरों और महानगरों में घरों की नालियों के पानी को गड्ढे बनाकर एकत्र किया जा सकता है।

घर की छत पर वर्षा जल एकत्र करने के लिए एक या दो टंकी बनाकर उन्हें मजबूत जाली या फिल्टर करके कपड़े से ढका जाये तो जल संरक्षण किया जा सकेगा।

[1]सहायक प्राध्यापक-सह-कनीय वैज्ञानिक (कृषि अभियंत्रण), [3]सहायक प्राध्यापक-सह-कनीय वैज्ञानिक (पादप कायिकी); [4]सहायक प्राध्यापक-सह-कनीय वैज्ञानिक (मृदा विज्ञान); सह अधिष्ठाता एवं प्राचार्य, नालन्दा उद्यान महाविद्यालय, नूरसराय, नालन्दा (बिहार); [2]शोध छात्र, डा. राजेन्द्र प्रसाद केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय, पूसा, समस्तीपुर (बिहार)

“भविष्य में जल की कमी को पूरा करने और इसे बहने से बचाने के लिए विभिन्न प्राकृतिक कृत्रिम संसाधनों का उपयोग कर बारिश के पानी को संग्रहित करना ही वर्षा जल संचयन है। कई कारणों से जल संचयन की मात्रा प्रभावित होती है जैसे बारिश की बारंबारता, जल की मात्रा को संग्रहित करने का तरीका और संसाधनों का आकार आदि। वनों की कटाई और पारिस्थितिकीय असंतुलन से भूमिगत जलस्तर घटता जा रहा है। खासतौर से लगातार बढ़ते शहरीकरण और औद्योगीकीकरण के नाम पर अत्यधिक भूमिगत जल के इस्तेमाल से जल आपूर्ति की मांग बढ़ रही है। ऐसे में तत्काल प्रभावी कदम उठाने की जरूरत है अन्यथा भविष्य में जल संकट बड़े पैमाने पर बढ़ेगा और यह जीवनयापन के लिए खतरा साबित हो सकता है।”

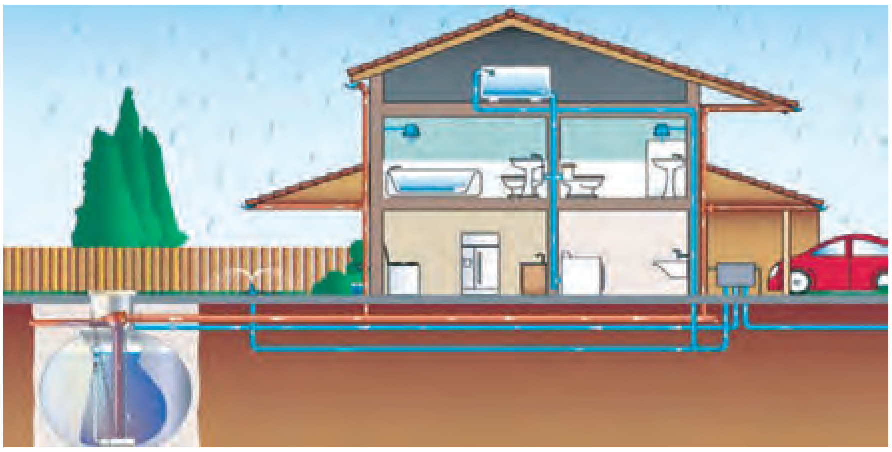

जल संरक्षण

जल के संकट को देखते हुए आज समुद्र के खारे जल को पीने योग्य बनाया जा रहा है। बड़ी नदियों की नियमित सफाई बेहद जरूरी है। बड़ी नदियों के जल का शोधन करके पेयजल के रूप में उपयोग किया जा सकता है। जंगल कटने पर वाष्पीकरण न होने से वर्षा नहीं हो पाती है इसलिए वृक्षारोपण जल संग्रहण में बेहद महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

वर्तमान में पानी का उपयोग घर, कृषि और कल-कारखानों के क्षेत्र में अत्यधिक हो रहा है। अब ग्रामीण क्षेत्रों में भी बड़ी संख्या में 'बोरवेल' स्थापित हो जाने से भूमिगत जल स्तर कम होने लगा है और कुछ जगहों पर तो कई 'बोरवेल' सूख चुके हैं। आज शहरी क्षेत्रों में भी कई कल-कारखानों में पानी का उपयोग होने के कारण पानी की किल्लत होने लगी है। ऐसे में घरेलू और व्यावसायिक उपयोग के लिए वर्षा जल को संरक्षित करना सबसे आसान और बेहतरीन तरीका माना जा रहा है। प्रतिवर्ष थोड़ी-बहुत वर्षा हर क्षेत्र में होती है। वर्षा जल संचयन या रेन वाटर हार्वेस्टिंग

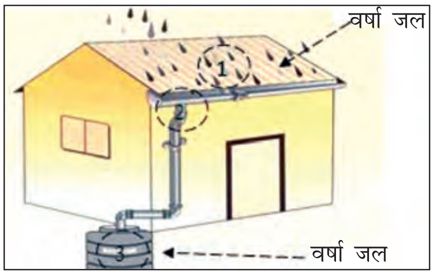

रेन वाटर हार्वेस्टिंग

खेत तालाब

जल संग्रहण एवं संरक्षण के लाभ

- घरेलू काम के लिए ज्यादा से ज्यादा जल बचा सकते हैं और इस पानी को कपड़े साफ करने, खाना पकाने, घर साफ करने तथा नहाने के उपयोग में लाया जा सकता है।
- बड़े-बड़े कल-कारखानों में स्वच्छ जल को इस्तेमाल कर बर्बाद किया जाता है। ऐसे में वर्षा जल का संचयन करके उपयोग में लेना जल सुरक्षित करने का बेहतरीन उपाय है। ज्यादा से ज्यादा पानी की बचत और जल संचयन करने के लिए ऊपर दिये हुए तरीकों का उपयोग कंपनियां कर सकती हैं।
- आज दुनिया आधुनिक तकनीक से जुड़ी हुई है। बढ़ती जनसंख्या के कारण विश्व के हर एक क्षेत्र में बड़ी-बड़ी इमारतों का निर्माण हो रहा है। ऐसे में वर्षा जल, संचयन के माध्यम से बचाया जा सकता है।
- वर्षा जल किसानों के लिए सबसे कारगर साबित हुआ है, ज्यादातर किसान गर्मियों के महीने में बहुत ही आसानी से जल संचय द्वारा जल संकट को दूर कर पटवन का काम कर सकते हैं।
- अधिकाधिक प्राकृतिक जल को इस्तेमाल करने से स्वच्छ पीने योग्य पानी को हम बचा सकते हैं। वर्षा जल को शौचालय, नहाने और बर्तन धोने के काम में लिया जा सकता है।

महत्वपूर्ण सावधानियां

- 'रेन वाटर हार्वेस्टिंग' की मदद से जमा किए हुए जल को इस्तेमाल करने से पहले अच्छी तरह से 'फिल्टर' किया जाना चाहिए, जिससे कि इसमें मौजूद अशुद्धियां पानी से अलग हो जाएं।
- वर्षा के पानी को ऐसे बर्तन या पात्रों में रखना चाहिए जो धूप के संपर्क में आने पर जहरीले तत्व न बनाते हों।
- वर्षा जल संचयन द्वारा जमा किए हुए पानी को अच्छे से उबालना बहुत जरूरी होता है, ताकि इसमें मौजूद जहरीले तत्व और बैक्टीरिया नष्ट हो जाएं।

एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसमें वर्षा के पानी का जरूरत की चीजों में उपयोग कर सकते हैं। इस तकनीक में जल को मिट्टी तक पहुंचने से पहले जमा करना जरूरी होता है।

सतह जल संग्रह सिस्टम

सतह जल वह पानी होता है, जो वर्षा के बाद जमीन पर गिर कर धरती के निचले तल में बहकर जाने लगता है। गंदी नालियों में जाने से पहले सतह जल को रोकने की प्रक्रिया को सतह जल संग्रह कहा जाता है। बड़े-बड़े पाइपों के माध्यम से वर्षा जल को कुएं, नदी और तालाबों में जमा करके रखा जाता है, जो बाद में जल के संकट को दूर करता है।

छत प्रणाली

इस तरीके से हम छत पर गिरने वाले बारिश के पानी को संचय करके रख सकते हैं। ऐसे में ऊंचाई पर खुली टंकियों का उपयोग भी किया जाता है, जिनमें वर्षा जल को रोगरहित करके नलों के माध्यम से घरों तक पहुंचाया जाता है। यह पानी स्वच्छ होता है, जो थोड़ा-बहुत ब्लीचिंग पाउडर के इस्तेमाल के बाद पूर्ण तरीके से उपयोग में लाया जा सकता है।

सतह जल संग्रह सिस्टम

जलाशय

बांध

बड़े-बड़े बांधों के माध्यम से वर्षा जल को बहुत ही बड़े पैमाने पर रोका जाता है जिन्हें गर्मी के महीनों में या पानी की कमी होने पर कृषि, बिजली उत्पादन और पाइपों के माध्यम से घरेलू उपयोग में भी इस्तेमाल किया जाता है। जल संरक्षण के मामले में बांध बहुत कारगर साबित हुए हैं, इसलिए भारत में कई बांधों का निर्माण किया गया है। साथ ही नए बांध भी बनाए जा रहे हैं।

भूमिगत टैंक

भूमिगत टैंक का निर्माण जल संग्रहण का बेहतर तरीका है जिसके माध्यम से हम भूमि के अंदर पानी को संरक्षित रख सकते हैं। इस प्रक्रिया में वर्षा जल को एक भूमिगत गड्ढे में भेज दिया जाता है। इससे भूमिगत जल की मात्रा बढ़ जाती है। साधारण रूप से भूमि के ऊपरी भाग पर बहने वाला जल सूर्य के ताप से भाप बन जाता है और हम उसका उपयोग नहीं कर पाते हैं। परंतु इस तरीके में हम ज्यादा पानी को मिट्टी के अंदर बचाकर रख सकते हैं। यह तरीका बहुत ही मददगार साबित हुआ है, क्योंकि मिट्टी के अंदर का पानी आसानी से नहीं सूखता है और लंबे समय तक पंप के माध्यम से हम इसका उपयोग कर सकते हैं।

भूमिगत टैंक

जल संग्रह जलाशय

यह एक साधारण प्रक्रिया है जिसमें बारिश के पानी को तालाबों और छोटे जल स्रोतों में जमा किया जाता है। इस तरीके से जमा किए हुए जल को ज्यादातर कृषि के कार्यों में लगाया जाता है, क्योंकि यह जल दूषित होता है।

जल संग्रह जलाशय पहाड़ी और रेगिस्तान क्षेत्रों में जल संचयन का प्रभावी तरीका है। जहां ऐसे जलाशयों का निर्माण कर आसानी से बारिश के पानी को इकट्ठा किया जा सकता है।

इस तरह से किसान वर्षा जल संग्रहण करके अपनी आमदनी बढ़ा सकते हैं। ■

कैसे लें चने की भरपूर उपज

मुकेश नागर[1], हुकमराज सैनी[2], दीपक कुमार सरोलिया[3] और **आशा शेरावत[4]**

"चना, देश की सबसे महत्वपूर्ण दलहनी फसल है। चने को दालों का राजा भी कहा जाता है। पोषक मान की दृष्टि से चने के 100 ग्राम दाने में औसतन 11 ग्राम पानी, 21.1 ग्राम प्रोटीन, 4.5 ग्राम वसा, 61.65 ग्राम कार्बोहाइड्रेट, 149 मि.ग्रा. कैल्शियम, 7.2 मि.ग्रा. लोहा, 0.14 मि.ग्रा. राइबोफ्लेविन तथा 2.3 मि.ग्रा. नियासिन पाया जाता है। इसकी हरी पत्तियां साग और हरा तथा सूखा दाना सब्जी व दाल बनाने में प्रयुक्त होती हैं। चने की दाल से अलग किया हुआ छिलका और भूसा पशु चाव से खाते हैं। दलहनी फसल होने के कारण यह जड़ों में वायुमंडलीय नाइट्रोजन स्थिर करती है, जिससे खेत की उर्वराशक्ति बढ़ती है। देश में चने की खेती मुख्य रूप से उत्तर प्रदेश, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, राजस्थान तथा बिहार में की जाती है। सबसे अधिक चने का क्षेत्रफल एवं उत्पादन वाला राज्य मध्य प्रदेश है।"

चना एक शुष्क एवं ठंडी जलवायु की फसल है। इसे रबी मौसम में उगाया जाता है। इसकी खेती के लिए मध्यम वर्षा (60-90 सें.मी. वार्षिक) और सर्दी वाले क्षेत्र सर्वाधिक उपयुक्त हैं। फसल में फूल आने के बाद वर्षा का होना हानिकारक होता है। वर्षा के कारण फूल में परागकण एक दूसरे से चिपक जाते हैं, जिससे बीज नहीं बनते हैं। इसकी खेती के लिए 24^0-30^0 सेल्सियस तापमान उपयुक्त माना जाता है।

भूमि की तैयारी

चने की खेती दोमट भूमि से मटियार भूमि में सफलतापूर्वक की जा सकती है। चने की खेती हल्की से भारी भूमि में भी की जाती है, किन्तु अधिक जलधारण एवं उचित जलनिकास वाली भूमि सर्वोत्तम रहती है। मृदा का पी-एच मान 6-7.5 उपयुक्त रहता है। असिंचित अवस्था में मानसून शुरू होने के पूर्व गहरी जुताई करने से रबी के लिए भी नमी संरक्षण होता है। एक जुताई मिट्टी पलटने वाले हल तथा 2 जुताई देसी हल से की जाती है, फिर पाटा चलाकर खेत को समतल कर लिया जाता है।

किस्में

प्रमुख किस्में

समय पर बुआई के लिए-जी.एन.जी. 1581 (गणगौर), जी.एन.जी. 1958 (मरुधर), जी.एन.जी. 663, जी.एन.जी. 469, आर.एस.जी. 888, आर.एस.जी. 963, आर.एस.जी. 973, आर.एस.जी. 986, देरी से बुआई के लिए-जी.एन.जी. 1488, आर.एस.जी. 974, आर.एस.जी. 902, आर.एस.जी. 945 प्रमुख हैं।

काबुली चना

- **एल 550:** यह 140 दिनों में पकने वाली किस्म है। इसकी उपज 10 से 13 क्विंटल/हैक्टर है। इसके 100 दानों का वजन 24 ग्राम है।
- **सी-104:** यह किस्म 130-135 दिनों में पककर तैयार हो जाती है। यह औसतन 10 से 13 क्विंटल/हैक्टर उपज देती है। इसके 100 दानों का वजन 25-30 ग्राम होता है।

अन्य किस्में: जी.एन.जी. 1669 (त्रिवेणी), जी.एन.जी. 1499, जी.एन.जी. 1992।

चने की बुआई का समय

10 अक्टूबर से 5 नवम्बर

बीज की मात्रा: मोटे दानों वाला चना 80-100 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर, सामान्य दानों वाला चना 70-80 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर एवं काबुली चना (मोटा दाना) 100-120 कि.ग्रा./हैक्टर।

बीजोपचार

- बीज को पहले रासायनिक फफूंदीनाशक से उपचारित करने के बाद जैविक कल्चर से छाया में उपचारित कर तुरंत बुआई करें, जिससे जैविक बैक्टीरिया जीवित रह सकें।
- फसल को उकठा रोग से बचाने के लिए बीज को बुआई के पूर्व फफूंदनाशक वीटावैक्स पॉवर, कैप्टॉन, थीरम या प्रोवेक्स में से कोई एक 3 ग्राम दवा प्रति किलो बीज की दर से उपचारित करें। इसके पश्चात एक किलो बीज में राइजोबियम कल्चर तथा ट्राइकोडर्मा विरडी 5-5 ग्राम मिलाकर उपचारित करें।
- बीज की अधिक मात्रा को उपचारित करने के लिए, सीड ड्रेसिंग ड्रम का उपयोग करें, जिससे बीज एक समान उपचारित हो सके।

[1,2]वरिष्ठ अनुसंधान अध्येता; [3]वरिष्ठ वैज्ञानिक भाकृअनुप-केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर (राजस्थान); [4]विद्यावाचस्पति, मृदा विज्ञान, कृषि महाविद्यालय, बीकानेर (राजस्थान)

उर्वरक

अच्छी पैदावार के लिए 20-25 टन सड़ी गोबर की खाद खेत की तैयारी के समय खेत में मिलाएं। उर्वरकों का प्रयोग मिट्टी परीक्षण के आधार पर करें। नाइट्रोजन 20 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर (100 कि.ग्रा. डाई अमोनियम फॉस्फेट), फॉस्फोरस 50 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर, जिंक सल्फेट 25 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर।

बुआई की विधि: चने की बुआई कतारों में करें। 7 से 10 सें.मी. गहराई पर बीज डालें। कतार से कतार की दूरी 30 सें.मी. (देसी चने के लिए) तथा 45 सें.मी. (काबुली चने के लिए)।

खरपतवार नियंत्रण

फ्लूक्लोरेलिन 200 ग्राम (सक्रिय तत्व) का बुआई से पहले या पेंडीमेथालीन 350 ग्राम (सक्रिय तत्व) का अंकुरण से पहले 300-350 लीटर पानी में घोल बनाकर एक एकड़ में छिड़काव करें। पहली निराई-गुड़ाई बुआई के 30-35 दिनों बाद तथा दूसरी 55-60 दिनों बाद आवश्यकतानुसार करें।

सिंचाई

आमतौर पर चने की खेती असिंचित अवस्था में की जाती है। चने की फसल के लिए कम जल की आवश्यकता होती है। चने में जल उपलब्धता के आधार पर पहली सिंचाई फूल आने के पूर्व अर्थात बोने के 45 दिनों बाद एवं दूसरी सिंचाई दाना भरने की अवस्था पर अर्थात बोने के 75 दिनों बाद करनी चाहिए।

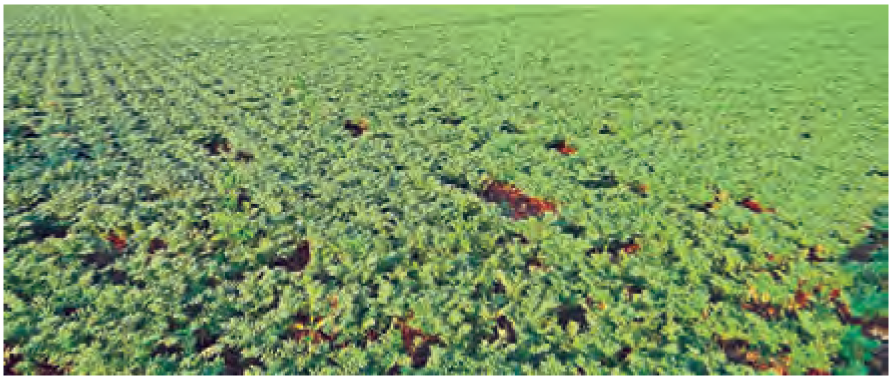

चने की फसल

देशी किस्में

- **जे.जी. 315:** यह किस्म 125 दिनों में पककर तैयार हो जाती है। औसत उपज 12 से 15 क्विंटल/हैक्टर है। इसके 100 दानों का वजन 15 ग्राम है एवं बीज का रंग बादामी है तथा देर से बोने के लिए उपयुक्त किस्म है।
- **विजय:** सर्वाधिक उपज देने वाली 90-105 दिनों में तैयार होने वाली यह किस्म है। यह सिंचित व असिंचित क्षेत्रों के लिए उपयुक्त है। इस किस्म में अधिक शाखायें व मध्यम ऊंचाई वाले पौधे होते हैं। उपज क्षमता 24-45 क्विंटल/हैक्टर है।
- **जी.एन.जी.-2171 (मीरा):** राजस्थान, हरियाणा, पंजाब, दिल्ली जैसे उत्तरी-पश्चिमी मैदानी सिंचित क्षेत्रों के लिए अधिसूचित किस्म। दाना मध्यम आकार व सुनहरे रंग का, जड़गलन, विल्ट व झुलसा रोग के प्रति सहनशील। लगभग 150 दिनों में पककर तैयार होती है और उपज 24 क्विंटल प्रति हैक्टर है।
- **जी.एन.जी-2144 (तीज):** राजस्थान के उत्तर-पश्चिमी मैदानी क्षेत्रों के लिए अधिसूचित यह किस्म दोहरे फूल व 20 से 25 प्रतिशत दोहरी फली वाली है। देरी से बुआई योग्य इस किस्म की दिसंबर के पहले सप्ताह में भी बुआई कर सकते हैं। बुआई के 130 से 135 दिनों में तैयार होने के साथ ही इसकी औसत उपज 23 क्विंटल प्रति हैक्टर है।

पौध संरक्षण

माहूं व चेंपा

माहूं व चेंपा, पौधे का रस चूसकर इसे कमजोर करते हैं। इनके नियंत्रण के लिए 5 ग्राम थायोमेथाक्जम 25 डब्ल्यूजी जैसे एकतारा, अनंत या 5 ग्राम इमिडाक्लोप्रिड 70 डब्ल्यू.जी. एडमायर या एडफायर का प्रति 15 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

कटुआ सूंडी

इस कीट की रोकथाम के लिए 200 मि.ली. फेनवालरेट (20 ई.सी.) या 125 मि.ली. साइपरमैथ्रीन (25 ई.सी.) को 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति हैक्टर की दर से आवश्यकतानुसार छिड़काव करें।

चने की फली

फलीछेदक

यह कीट चने की फसल को सबसे ज्यादा नुकसान पहुंचाता है।

- इल्ली के नियंत्रण के लिए पक्षियों के बैठने के लिए समान अंतर पर फसल की लंबाई से ऊंची 20-25 'T' आकार की खूंटियां प्रति एकड़ खेत में गाड़ दें।
- फसल में फलीछेदक इल्ली का निरीक्षण करते रहें। प्रारंभिक अवस्था में 50 मि.ली. प्रोफेनोफॉस 40 प्रतिशत + सायपरमेथ्रिन 4 प्रतिशत प्रति 15 लीटर पानी में छिड़कें अथवा इंडोक्साकार्ब 14.5 प्रतिशत एस.सी. जैसे अवांट, फीगो, दक्ष का प्रति एकड़ 200 लीटर पानी में एक समान रूप से छिड़काव करें।

अन्य समस्याएं

सूत्रकृमि

- सूत्रकृमि के प्रकोप से पौधा अविकसित रह जाता है। जड़ें छोटी रह जाती हैं और उत्पादन प्रभावित होता है।
- नियंत्रण के लिए गर्मियों में गहरी जुताई करें, प्रतिरोधी किस्म का चयन करें। गैर-दलहनी फसलों जैसे मक्का, धान या मूंगफली को फसलचक्र में शामिल करें। रासायनिक नियंत्रण प्रकोप के आधार पर 10-15 कि.ग्रा. कार्बोफ्यूरॉन प्रति एकड़ का प्रयोग करें।

उपज

चने की शुद्ध फसल से प्रति हैक्टर लगभग 20-25 क्विंटल दाना एवं इतना ही भूसा प्राप्त होता है। काबुली चने की पैदावार देसी चने से तुलना में थोड़ी कम होती है।

- सभी प्रकार की इल्लियों के प्रभावी नियंत्रण के लिए 7 ग्राम इमामेक्टिन बेन्जोएट, 5 प्रतिशत एस.जी. (प्रोक्लेम या ई.एम.-1) या 6 मि.ली. क्लोरोन्ट्रेनिलीप्रोल 18.5 प्रतिशत एस.सी. (कोराजन) या 5 मि.ली. फ्लूबेन्डीयामाइड 39.9 एस.सी. (फेम) या 10 ग्राम फ्लूबेन्डीयामाइड 20 डब्ल्यू.जी. प्रति 15 लीटर पानी में छिड़कें।

रोग नियंत्रण

चने का उकठा रोग

- उकठा रोग निरोधक किस्मों का प्रयोग करना चाहिए।
- प्रभावित क्षेत्रों में फसलचक्र अपनाना लाभकर होता है।
- प्रभावित पौधे को उखाड़कर नष्ट करना अथवा गड्ढे में दबा देना चाहिए।
- बीज को कार्बेन्डाजिम 2.5 ग्राम या ट्राइकोडर्मा विरडी से 4 ग्राम/कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित कर बोना चाहिए।

पौधों का पीलापन व मुरझान

पीलापन तथा मुरझान की समस्या के नियंत्रण के लिए 45 ग्राम कॉपर ऑक्सीक्लोराइड या 30 ग्राम कार्बेन्डेजिम प्रति 15 लीटर पानी में मिलाकर जमीन में दें अथवा 100 ग्राम थायोफैनेट मिथाइल, 70 प्रतिशत डब्ल्यू.पी. प्रति एकड़ 200 लीटर पानी में छिड़कें।

अल्टरनेरिया झुलसा रोग

फूल व फली बनते समय अल्टरनेरिया झुलसा रोग हो सकता है। इससे पत्तियों पर छोटे, गोल-बैंगनी धब्बे बनते हैं। यह नमी अधिक होने से पूरी पत्ती पर फैल जाता है। नियंत्रण के लिए 3 ग्राम मैन्कोजेब, 75 प्रतिशत डब्ल्यू.पी. या 2 ग्राम मेटालैक्सिल 8 प्रतिशत मैन्कोजेब, 64 प्रतिशत (संचार या रिडोमिल) प्रति लीटर पानी में छिड़कें।

काबुली चना

फसल कटाई से जुड़ी जानकारी

- **परिपक्व अवस्था:** जब पौधे के अधिकतर भाग और फलियां लाल भूरी हो कर पक जाएं तो कटाई करें। खलिहान की सफाई करें और फसल को धूप में कुछ दिनों तक सुखायें तथा गहाई करें। भंडारण के लिए दानों में 12-14 प्रतिशत से अधिक नमी नहीं होनी चाहिए
- **भंडारण:** चने के भंडारण हेतु भंडार गृह की सफाई करें तथा दीवारों एवं फर्श की दरारों को मिट्टी या सीमेंट से भर दें। चूने की पुताई करें तथा 15 दिनों के अंतराल पर 2-3 बार 10 मि.ली. मेलाथियान 50 प्रतिशत ई.सी. प्रति लीटर पानी के घोल का 3 लीटर/100 वर्ग मीटर की दर से दीवार तथा फर्श पर छिड़काव करें।
- अनाज भंडारण के लिए बोरियों को मेलाथियान 10 मि.ली./लीटर पानी के घोल में डुबोकर सुखाएं। इसके बाद ही अनाज को बोरियो में भरें।
- भंडारण कीट के नियंत्रण के लिए एल्यूमिनियम फॉस्फाइड की गोली 3 ग्राम/टन की दर से भंडारगृह में ध्रूमित करें। बीज के लिए फसल की गहाई अलग से करें तथा अच्छी तरह सुखाकर भंडारण के लिए मैलाथियान 5 प्रतिशत डस्ट 250 ग्राम/100 कि.ग्रा. अनाज में मिलाएं। ■

चने का खेत

खुशहाली का खजाना खार्चिया गेहूं

मोती लाल मीणा, धीरज सिंह, ऐश्वर्य डूडी और **एम.के. चौधरी**
भाकृअनुप-काजरी, कृषि विज्ञान केन्द्र, पाली-मारवाड़-306 401 (राजस्थान)

"राजस्थान के पाली जिले में मारवाड़ तहसील की खारी जमीन और खारे पानी जैसी विषम परिस्थितियों में भी गेहूं की सफल खेती हो रही है। यह लाल रंग का गेहूं है, जो 'खार्चिया' नाम से जाना जाता है। यह गेहूं यहां के किसानों को खुशहाल बना रहा है। देश की ऐसी भूमि जो लवणीय और क्षारीय होने के कारण खेती के लिए उपयुक्त नहीं है, वहां पर खार्चिया गेहूं की खेती वरदान बन सकती है।"

ऐसी मृदायें, जिनमें निष्क्रिय (उदासीन) घुलनशील लवणों की अधिक मात्रा के कारण बीज का अंकुरण एवं पौधों का विकास प्रभावित होता है, वे लवणीय मृदाएं कहलाती हैं। इन मृदाओं के संतृप्त घोल की वैद्युत चालकता 4 (ई.सी.) डेसी सीमन प्रति मीटर से अधिक, मृदा का पी-एच मान 8.2 से कम तथा विनियम योग्य सोडियम की मात्रा 15 प्रतिशत से कम होती है। लवणीय भूमि में सोडियम, कैल्शियम, मैग्नीशियम एवं उनके क्लोराइड एवं सल्फेट अधिक मात्रा में पाये जाते हैं। ये आसानी से पानी में घुल जाते हैं। गर्मियों में बढ़ते तापमान के कारण वाष्पीकरण दर बढ़ने से घुलनशील लवण मृदा सतह की ओर आ जाते हैं। ऐसे में पानी तो वाष्प बनकर आसमान में उड़ जाता है, जबकि भूमि की ऊपरी सतह पर सफेद रंग का लवण रह जाता है। इस प्रकार यह लवण पपड़ी बना लेता है। इसी कारण से ऐसी मृदाओं को कभी-कभी सफेद कल्लर भी कहा जाता है। इन मृदाओं में नमी तो बनी रहती है, परंतु अधिक परासरणीय दाब के कारण पौधों को आवश्यकतानुसार जल की उपलब्धता नहीं हो पाती है। इसके कारण उनकी बढ़वार एवं उत्पादन क्षमता पर विपरीत असर पड़ता है।

लवण प्रभावित भूमि में खेत की तैयारी पारंपरिक तरीके से ही करनी चाहिए, लेकिन जल प्लावन की समस्या से ग्रस्त भूमि में मेड़ बनाकर खेती करना अधिक लाभदायक रहता है। गेहूं की अच्छी पैदावार लेने के लिए खेत में उचित नमी की मात्रा तथा मिट्टी का भुरभुरा होना बहुत जरूरी है। इसके लिए सिंचित क्षेत्रों

में पहली जुताई मिट्टी पलट हल से तथा बाद की दो-तीन जुताई तवेदार हैरो या देसी हल से करनी चाहिए। अंतिम जुताई के बाद भूमि में नमी संरक्षित करने तथा समतल परत बनाने के लिए दो बार सुहागा अवश्य लगाएं। बारानी क्षेत्रों में प्रत्येक बरसात के बाद हैरो/हल से जुताई कर नमी को संरक्षित करना चाहिए तथा प्रत्येक, जुताई के बाद 'पाटा' अवश्य लगाना चाहिए। गर्मी के मौसम में गहरी जुताई करने से कीड़े-मकोड़े नष्ट हो जाते हैं। पानी के संरक्षण एवं समान रूप से उपयोग के लिए ट्रैक्टरचालित लेजर लैंड लेवलर से भूमि को समतल बनाना चाहिए।

खार्चिया गेहूं-सफलता की कहानी

खार्चिया गेहूं की खेती राजस्थान के पाली जिले की मारवाड़ तहसील के खारची गांव में 1960 के दशक में 60-70 प्रतिशत क्षेत्रफल में की जाती थी। देसी अर्थात लाल गेहूं के रूप में इसकी उपज प्राप्त होती थी।

खार्चिया गेहूं का पंजीकरण

खार्चिया गेहूं की गुणवत्ता और उपयोगिता के कारण राजस्थान के पाली जिले के खार्चिया ग्राम पंचायत के किसानों ने इस स्थानीय किस्म को बचाया तथा उसका लगातार प्रचार-प्रसार किया। इसकी बदौलत वर्ष 2015-16 में भारत सरकार के 'पौधा किस्म और कृषक अधिकार संरक्षण प्राधिकरण', नई दिल्ली द्वारा समूह पुरस्कार प्रदान किया गया। इस कार्यक्रम में केन्द्रीय कृषि मंत्री श्री राधा मोहन सिंह महानिदेशक, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली; अध्यक्ष पौधा किस्म और कृषक अधिकार संरक्षण प्राधिकरण, नई दिल्ली द्वारा खार्चिया गेहूं का पंजीकरण प्रमाण पत्र तथा 10 लाख रुपये का नगद पुरस्कार खार्चिया ग्राम पंचायत को दिया गया। खार्चिया गेहूं के उत्पाद दिल्ली में आयोजित प्रदर्शनी में दिखाये गए। इसकी सभी उच्च अधिकारियों ने सराहना की तथा उनका उपयोग करने के तरीके आदि के बारे में जानकरी प्राप्त की गयी। खार्चिया गेहूं की इन सभी विशेष गुणवत्ता के कारण इसका पंजीकरण किया गया। भविष्य में इस प्रकार के स्थानीय जीन व किस्म को बचाया जा सकता है। आज राजस्थान व अन्य पड़ोसी राज्यों में खार्चिया गेहूं की मांग इतनी बढ़ गयी कि इसका बीज मिलना मुश्किल हो रहा है। विषम परिस्थितियों में भी खार्चिया गेहूं का उत्पादन अच्छा होता है। राजस्थान में खार्चिया गेहूं की वर्तमान में लगभग 5.3 लाख हैक्टर क्षेत्रफल में खेती होती है।

सारणी 1. खार्चिया गेहूं व सामान्य गेहूं में अंतर

क्र.स.	खार्चिया गेहूं	सामान्य गेहूं (राज. 4083, राज 3765)
1.	यह स्थानीय वातावरण में अधिक उपयुक्त है	उन्नत किस्म के गेहूं स्थानीय वातावरण में कम पनपते हैं।
2.	असिंचित परस्थितियों में भी उत्पादन देता है।	इस किस्म के गेहूं केवल सिंचित परिस्थिति में ही उत्पादन देते हैं।
3.	अधिक लवण सहन कर सकता है	लवणीय मृदा व पानी में इनका उत्पादन घट जाता है।
4.	अधिक पी-एच मान यानी 8.2 से ऊपर तक सहन कर सकता है।	जिन मृदाओं में पी-एच मान 8.2 से अधिक हो वहां पर इसका उत्पादन 40-45 प्रतिशत घट जाता है।
5.	जब बालियां पकने लगती हैं तो फसल गिरती नहीं। लॉजिंग की समस्या नहीं होती है।	इन किस्मों के पौधे बालियां पकते समय गिरने लगते हैं, जिससे उत्पादन में 15-20 प्रतिशत तक हानि होती है।
6.	भूसा मीठा व मुलायम होता है, जिसे पशु अधिक पसंद करते हैं।	इनसे प्राप्त भूसा कठोर होता जिसे पशु कम पसंद करते हैं तथा उनके जबड़े में इन किस्मों के पेनिकल फंस जाते हैं।
7.	इससे बनी रोटियां स्वाद में मीठी और अधिक समय तक खराब नहीं होती हैं।	इनसे बनी रोटी स्वाद में कम मीठी व जल्दी कठोर हो जाती है।
8.	इसका आटा अधिक पानी सोखता है जिससे चपाती स्वादिष्ट व अधिक समय तक खराब नहीं होती। ठंडी होने पर उनका स्वाद और अधिक बढ़ जाता है।	उन्नत किस्मों का आटा पानी कम सोखता है। चपाती अधिक समय तक रखने पर खराब एवं कठोर हो जाती है एवं खाने योग्य नहीं रहती है।
9.	इसके दानों का रंग लाल होता है, इसी कारण इन्हें लाल गेहूं के नाम से भी जाना जाता है।	दानों का रंग भूरा होता है तथा दानों में कीटों का प्रकोप ज्यादा होता है।
10.	इससे बने उत्पाद लापसी, चूरमा, दलिया और लड्डू अधिक स्वादिष्ट व मुलायम होते हैं। इसी कारण आज भी इसका बाजार भाव ज्यादा होता है।	उन्नत गेहूं से बने उत्पाद खाने में कम पसंद किए जाते हैं, जिनका स्वाद खार्चिया गेहूं की बजाय कम होता है।
11.	इसकी पकने की अवधि लगभग 124 से 135 दिनों की होती है। पौधों की ऊंचाई 125 से 130 सें.मी. तक होती है।	राज. 4083 व अन्य गेहूं की किस्मों की औसतन ऊंचाई लगभग 94 से 96 सें.मी. तक होती है। इसकी पकने की अवधि लगभग 135 से 140 दिनों तक की होती है।
12.	लवण सहनशीलता 6.9 डे.सी./मी. तक होती है।	इन किस्मों में लवण सहन करने की क्षमता लगभग 4.6 डे.सी./मी. तक होती है।
13.	लवणग्रस्त मृदा में उपज 25 से 30 क्विंटल प्रति हैक्टर तथा सामान्य मृदा में उपज लगभग 35 क्विंटल प्रति हैक्टर तक होती है।	लवणग्रस्त मृदा में उत्पादन 10 से 12 क्विंटल प्रति हैक्टर तक ही होता है, जबकि सामान्य मृदा में लगभग 40 क्विंटल प्रति हैक्टर तक उत्पादन होता है।
14.	इस गेहूं का पंजीकरण 2016 में पी.पी.वी.एफ.आर.ए. नई दिल्ली द्वारा हुआ।	ये किस्में कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर द्वारा अनुमोदित की गई हैं।
15.	इसका बाजार में औसत भाव लगभग 2500 से 3000 रुपये प्रति क्विंटल तक होता है।	इन किस्मों का बाजार मूल्य लगभग 1,600 से 1,800 रुपये प्रति क्विंटल तक ही होता है।

सारणी 2. खार्चिया गेहूं और अन्य गेहूं के पोषक तत्वों की मात्रा

क्र. स.	पोषक तत्व	सामान्य गेहूं	खार्चिया गेहूं
1	प्रोटीन	11.8 ग्राम	14.7 ग्राम
2	वसा	1.5 ग्राम	2.3 ग्राम
3	कार्बोहाइड्रेट	71.2 प्रतिशत	73.5 प्रतिशत
4	एनर्जी	341 कैलोरी	349 कैलोरी
5	जल	11.2 प्रतिशत	14.3 प्रतिशत

यह किस्म यहां की विषम परिस्थितियों जैसे खारी जमीन और खारे पानी में भी अच्छा उत्पादन देने में सक्षम थी। इसका अन्य फसलों व किस्मों से अधिक उत्पादन भी प्राप्त होता था। लवणीय मृदा में दूसरे देसी गेहूं व कोई भी उन्नत किस्म तथा अन्य फसल के बीज अंकुरित हो जाने के बाद उनकी बढ़वार नहीं होती थी तथा उत्पादन बहुत नगण्य होता था। इन सब किस्मों व अन्य फसलों की तुलना में खार्चिया गेहूं का उत्पादन बहुत अधिक होता है। 1960 के दशक में साधारण परिस्थितियों में गेहूं की फसल हो जाती थी। पाली जिले की विषम परिस्थितियों, जिसमें अधिकतर भूमि पैतृक रूप से थोड़ी से लेकर अधिक विभिन्न प्रकार की खारच (लवणीय मृदा) पायी जाती है, पर अन्य फसल लेना कठिन है। इन परिस्थितियों में खार्चिया गेहूं ही मारवाड़ के लवणग्रस्त क्षेत्रों के लिए वरदान है। यह गेहूं असिंचित स्थिति में भी अच्छा उत्पादन देता है और इसके पौधे में लवण सहन करने की क्षमता होती है। राजस्थान में मारवाड़ क्षेत्र के पाली जिले में 65.4 प्रतिशत भूमि लवण प्रभावित है। इसका पी-एच मान 8.3 से 9.4 तक है तथा ई.सी. लगभग 4.7 है। खार्चिया गेहूं पाली जिले के मारवाड़ जंक्शन तहसील के खारची गांव से उत्पन्न हुआ है। आज से लगभग 40 वर्ष पहले से भी यह स्थानीय किस्म किसानों के द्वारा उगाई जा रही है। खारची गांव में 1996 में गेहूं अनुसंधान निदेशालय, करनाल के वैज्ञानिकों द्वारा यहां से जर्मप्लाज्म लेकर खार्चिया गेहूं से लवण व खारच सहन करने वाली किस्मों का विकास किया। इसके बाद इस किस्म पर कोई शोध कार्य नहीं हुआ। वर्ष 2010 में भाकृअनुप-भारतीय गेहूं एवं जौ अनुसंधान संस्थान, करनाल के वैज्ञानिकों की एक टीम ने खार्चिया ग्राम पंचायत का सर्वे किया और खार्चिया गेहूं के बारे में गांव वालों से जानकारियां जुटाईं। इसके बाद कृषि विज्ञान केन्द्र, पाली के साथ मिलकर गांव

खार्चिया गेहूं की विशेषता

- खार्चिया गेहूं लवण सहन करने वाली किस्म है। इसके संकरण से गेहूं की लवण सहन करने वाली किस्मों का विकास किया गया जैसे-खार्चिया 65, सी. 306, के.आर.एल. 19 आदि।
- जिस मृदा के संतृप्त घोल की वैद्युत चालकता 4 डेसी सीमन प्रति मीटर से अधिक, मृदा का पी-एच मान 8.2 से कम तथा विनियम योग्य सोडियम की मात्रा 15 प्रतिशत से कम होती है, उनमें यह किस्म अधिक उत्पादन देती है।
- कम पानी में भी उत्पादन देने में सक्षम है तथा जिन क्षेत्रों में वार्षिक वर्षा का स्तर लगभग 250 एम.एम. से कम हो वहां पर भी इसकी खेती की जा सकती है।
- इससे बने उत्पाद जैसे-रोटी, दलिया, बाटी और पूरी, चूरमा स्वादिष्ट होता है तथा अधिक समय तक खराब नहीं होता है।
- इसके आटे से बने लड्डू स्वादिष्ट और पौष्टिक होते हैं। गांवों में आज भी खार्चिया गेहूं से बने लड्डू प्रसव उपरांत महिलाओं को खिलायें जाते हैं।
- चपाती बनाते समय आटा पानी ज्यादा सोखता है, जिससे चपाती दो दिनों तक खराब नहीं होती। इस किस्म की प्रमुख पहचान तथा गुण के कारण इस किस्म को भारत के अन्य राज्यों के किसान और व्यापारी पाली से खरीदकर अच्छा मुनाफा कमाते हैं। बाजार में सामान्य गेहूं का भाव 1,600 से 1,800 रुपये प्रति क्विंटल है, जबकि लाल गेहूं (खार्चिया) का भाव 2,500 से 3,000 रुपये प्रति क्विंटल है।

गेहूं की खार्चिया किस्म के दाने

- यह गेहूं पाली जिले में रबी की मुख्य फसल है। यहां पर किसान गेहूं की अन्य किस्मों की अपेक्षा लाल गेहूं को ज्यादा क्षेत्र में उगते हैं, जिसका किसानों को अधिक लाभ प्राप्त होता है।
- इसकी मांग अधिक होने के कारण राजस्थान के पाली जिले में इसकी लगभग 36000 हैक्टर क्षेत्रफल में खेती होती है, जिससे किसानों को सीधा लाभ मिलता है।
- आज देश के ऐसे राज्य जहां पर मृदा में लवणता अधिक है, वहां के लिए खार्चिया गेहूं वरदान है।
- इस गेहूं में रोग व कीटों का प्रकोप नगण्य होता है तथा अधिक पानी देने पर भी फसल गिरने (लोजिंग) की समस्या नहीं होती जिससे उत्पादन अच्छा मिलता है।
- इसका चारा मुलायम व पौष्टिक होता है। इसे पशु अधिक पसंद करते हैं तथा दुग्ध उत्पादन में भी वृद्धि होती है।
- यह गेहूं कम पानी वाले क्षेत्रों में भी अधिक पैदावार देता है। इसकी फसल को पकने तक लगभग 2 से 4 बार सिंचाई की आवश्यकता होती है।
- फसल पर पाले का प्रभाव नहीं पड़ता।
- इसका बांध के पेटाकाश्त में असिंचित पद्धति अपनाकर फसल उत्पादन किया जाता है।
- राजस्थान के मारवाड़ क्षेत्र के लिए यह गेहूं की किस्म एक ईश्वर का दिया उपहार है, जो विषम परिस्थियों में भी किसान का साथ देती है।

लवण प्रभावित भूमि का उपयोग है जरूरी

खाद्यान्नों की लगातार बढ़ती मांग तथा कृषि भूमि की सीमित उत्पादन क्षमता को ध्यान में रखते हुए यह आवश्यक है कि लवण प्रभावित अनुपजाऊ एवं समस्याग्रस्त भूमि को सुधार कर फसलों के अंतर्गत लाया जाये। भारत में मुख्यत: राजस्थान, महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश, गुजरात, तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश, हरियाणा और पश्चिम बंगाल आदि राज्यों में लगभग 67.5 लाख हैक्टर से भी अधिक भूमि लवणग्रस्त है। इस लवण प्रभावित भूमि का लगभग 57.3 प्रतिशत भाग क्षारीय एवं 45.6 प्रतिशत भाग लवणीय है। फसलों की उचित बढ़वार के लिए मृदाओं में कुछ न कुछ लवणीय तत्वों का होना आवश्यक है। यदि किसी कारणवश इन लवणों की मात्रा एक विशेष मान से अधिक हो जाती है तो उसका फसलों की बढ़वार एवं उत्पादन क्षमता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। यह भूमि सामान्यत: दो प्रकार की होती है-क्षारीय भूमि, जिसे ऊसर कहते हैं और लवणीय भूमि जिसे सेम व खारच कहते हैं।

सारणी 3 खार्चिया गेहूं और अन्य गेहूं की किस्मों में बाजार भाव में अंतर

क्र.सं.	गेहूं किस्में	बाजार भाव	विशेष विवरण
1	राज. 4083	1735	इस किस्म के गेहूं खाने में कम पसंद किए जाते है और इनकी प्रति हैक्टर उत्पादन क्षमता 52.2 क्विंटल/हैक्टर
2	राज. 3765	1650	गेहूं की यह किस्म अधिक उत्पादन देने वाली है, लेकिन बाजार में इसका भाव कम मिलता है। यह किस्म 6 पानी देने पर पूर्ण रूप से पक जाती है।
3	राज. 4037	1650	राज. 4037 गेहूं उन्नत किस्म के दाने चमकीले व आकार में बड़े होते हैं। इसके आटे से बनी रोटियां जल्दी फट जाती हैं व रूखी दिखाई देती हैं।
4	राज. 1482	1850	राज. 1482 गेहूं उन्नत किस्म है जिसे राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर द्वारा विकसित किया गया है। इसके आटे से बनी रोटियां अधिक स्वादिष्ट व ज्यादा पसंद की जाती हैं।
5	के.आर.एल. 210	1735	के.आर.एल. 210 गेहूं की यह किस्म कम पानी व लवण सहन करने वाली किस्म है, जो लवण प्रभावित क्षेत्रों में लाभकारी है।
6	खार्चिया	2450	खार्चिया गेहूं कम पानी व असिंचित क्षेत्रों के लिए लाभकारी है। इससे बने उत्पाद बहुत अधिक स्वादिष्ट व अधिक समय तक खराब नहीं होते हैं।

स्तर पर एक किसान सेमिनार का आयोजन किया जिसमें भाकृअनुप-केन्द्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान की निदेशक डा. इन्दु शर्मा, काजरी निदेशक डा. एम.एम. रॉय और डा. डी.के. मिश्रा, सदस्य पौधा किस्म और कृषक अधिकार संरक्षण प्राधिकरण, नई दिल्ली आदि ने भाग लिया। इसमें खार्चिया गेहूं की उपयोगिता पर सभी वैज्ञानिकों ने कृषकों को अवगत कराया तथा किसान-वैज्ञानिक संवाद का आयोजन किया गया। खार्चिया गेहूं की उपयोगिता और इसके क्षेत्रफल को देखते हुए पौध किस्म और कृषक अधिकार संरक्षण प्राधिकरण, नई दिल्ली द्वारा खारची ग्राम पंचायत को वर्ष 2015-16 का किसान समूह का पुरस्कार प्रदान किया गया।

खार्चिया गेहूं व अन्य किस्मों के गेहूं में पोषक तत्वों की मात्रा

इस गेहूं में अन्य गेहूं की तुलना में पोषक तत्व ज्यादा पाये जाते हैं। इसी कारण इसकी उपयोगिता वर्तमान समय में बहुत अधिक बढ़ गयी है। इसमें पाये जाने वाले पोषक तत्वों को सारणी-2 में दर्शाया गया है।

खार्चिया गेहूं की बाजार में मांग

इस गेहूं की बाजार में मांग अन्य किस्मों की अपेक्षा अधिक है, जिसका मुख्य कारण यह है कि इस किस्म के गेहूं खाने में स्वादिष्ट हैं तथा कम पानी में भी यह फसल आसानी से हो जाती है। जिन क्षेत्रों में समस्याग्रस्त भूमि है वहां पर इसकी उपयोगिता अधिक पाई गई। इसी कारण राजस्थान के पड़ोसी राज्य व जिलों में इसकी खेती बढ़ती जा रही है। इसके दानों का बाजार में भाव अन्य किस्मों की अपेक्षा हमेशा अधिक होता है। किसानों को इसका मूल्य भी अन्य गेहूं किस्मों की अपेक्षा अधिक मिलता है जिसका विवरण सारणी-3 में दिया गया है।

भंडारण

भंडारण के दौरान संभावित हानि को रोकने के लिए ध्यान रहे कि गेहूं के दानों में नमी की मात्रा 8-10 प्रतिशत से अधिक न हो। इसके लिए अनाज को पक्के आंगन या तिरपाल पर फैलाकर तेज धूप में अच्छी तरह सुखा लेना चाहिए। बीज निकालने के बाद उनको साफ करके और सुखाकर बोरों में भर दें या भंडारण के लिए एल्यूमिनियम के बने ढोलों का भी प्रयोग किया जा सकता है। अनाज की कीटों से रक्षा के लिए एल्यूमिनियम फॉस्फाइड की एक टिकिया लगभग 10 क्विंटल अनाज में रखनी चाहिए। खार्चिया गेहूं की मांग हमेशा ज्यादा रहती है। इसका उचित भंडारण करके अधिक लाभ किसान कमा सकते हैं। प्रति हैक्टर लगभग 70,000 से 75,000 रुपये का शुद्ध लाभ मिल जाता है। गेहूं के भंडारण पर के.वी.के. पाली पर 15 दिवसीय आवासीय प्रशिक्षण किसानों को दिया गया, जिससे गेहूं के बीज को हानिकारक कीटों के प्रकोप से बचाया जा सके और अधिक समय तक भंडारित किया जा सके।

लेखकों से आग्रह

हमारे लेखक बंधु *खेती* पत्रिका के लिए अपने लेख और संबंधित फोटो, कवरिंग लैटर के साथ सिर्फ ई-मेल पर ही भेजें। ध्यान रखें कि फोटो जेपीजे फॉर्मेट में और उच्च रेज्योल्यूशन की हों। लेख में अधिकतम 1500 शब्दों की सीमा रखने का प्रयास करें। इसके अतिरिक्त सुझाव और प्रतिक्रियाएं भी ई-मेल के माध्यम से भेज सकते हैं। भेजने के लिए कृपया कृतिदेव 010 टाइप फेस का प्रयोग करें।

हमारा ई-मेल पता है : khetidipa@gmail.com

–संपादक

बायोचार एवं मृदा स्वास्थ्य

बृज लाल लकारिया, प्रमोद झा, भारत मीणा, अभय शिराले,
ए.के. विश्वास, प्रिया गुरव, संजीव बेहेरा और **ए.के. पात्र**
भाकृअनुप–भारतीय मृदा विज्ञान संस्थान, नबीबाग, भोपाल (मध्य प्रदेश)

"मृदा प्रबंधन के लिए वानस्पतिक पदार्थों को जलाने की ऐतिहासिक प्रथाओं के परिणामस्वरूप बायोचार दुनिया भर की मिट्टी में पाया जाता है। अमेजॉन (टेरा प्रीटा) की बायोचार से परिपूर्ण काली मृदा के गहन अध्ययन से मिट्टी की उर्वरता बढ़ाने के लिए इसके के अद्वितीय गुणों का पता चलता है। बायोचार का उपयोग करने का विचार हजारों साल पहले अमेजॉन बेसिन में शुरू हुआ था। वहां उपजाऊ मृदा के द्वीपों को टेरा प्रेटा (काली धरती) कहा जाता था, जिन्हें वहां के स्थानीय लोगों द्वारा तैयार किया गया था। वैज्ञानिकों ने यह पाया है कि बायोचार को मृदा में डालने के परिणामस्वरूप मृदा की उर्वरता एवं कार्बन पदार्थ की मात्रा में वृद्धि होती है। ये मृदा आज भी उस कार्बन को पकड़े हुए हैं और काफी पोषक तत्व समृद्ध हैं। मृदा को सुधारने और कार्बन को अनुक्रमित करने के लिए बायोचार का प्रयोग एक उपयोगी तरीका हो सकता है।"

बायोचार बनाने व प्रयोग करने की यह तकनीक लगभग 2,000 साल पुरानी है। इसके द्वारा कृषि अपशिष्ट पदार्थों को मृदा सुधारक के रूप में बदल दिया जाता है, जो कि कार्बन को मृदा में पकड़े रखता है। यह खाद्य सुरक्षा को बढ़ावा देता है और मृदा की जैव विविधता में वृद्धि करता है। इस तकनीक द्वारा वनों की कटाई पर भी रोक लगती है। बायोचार बनाने की प्रक्रिया में अत्यधिक बढ़िया छिद्रपूर्ण चारकोल बनता है, जो मृदा में पोषक तत्व और पानी की उपलब्धता को बनाए रखने में मदद करता है। गंभीर रूप से कमजोर मृदा वाले क्षेत्रों में, जहां पर कार्बनिक पदार्थों, पानी व उर्वरकों की कमी हो वहां पर, खाद्य सुरक्षा और कृषि भूमि में फसल-विविधता बढ़ाने के लिए बायोचार एक दुर्लभ कार्बनिक संसाधन है। लगभग सभी प्रकार की मृदा में बायोचार का उपयोग सुधारक के रूप में किया जा सकता है। शुष्क व अर्धशुष्क क्षेत्रों की कम वर्षा पोषक तत्व वाली मृदा में बायोचार के प्रयोग का विशेष प्रभाव देखने को मिलता है। विकसित बायोचार प्रौद्योगिकी द्वारा मृदा की उर्वरता और मृदा में कार्बन जकड़ने के लक्ष्य के लिए आई.बी.आई. (इंटरनेशनल बायोचार इनीशिएटिव) ने पर्याप्त दिशानिर्देश भी जारी किए हैं।

बायोचार उपयोग द्वारा तैयार मक्का की फसल

मृदा में कार्बन संचय की संभावनाएं

खाद्य एवं कृषि संगठन के एक अनुमान के अनुसार, वर्ष 2050 में विश्व की जनसंख्या लगभग 9.2 बिलियन हो जाएगी। इस बढ़ती आबादी की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए वैश्विक कृषि उत्पादन में 70 प्रतिशत की वृद्धि की जरूरत है। इसके लिए उपलब्ध सीमित क्षेत्रफल के उपयोग में कुछ बदलाव कर उच्च उत्पादन प्राप्त करना होगा। अकृष्य भूमि को कृषि में प्रयोग लाने से उसका पर्यावरण पर प्रभाव विभिन्न प्रबंधन प्रणालियों के अनुरूप भिन्न होता है। हमारी धरती वैश्विक कार्बन के संचयन के लिए एक अच्छा व महत्वपूर्ण सिंक भंडार है। वास्तव में इस सिंक का आकार दुनिया के घास के मैदानों के अंतर्गत क्षेत्रफल पर निर्भर करता है। इसलिए मृदा में अधिक कार्बन संचय के लिए सबसे व्यवहार्य और लागत प्रभावी दृष्टिकोण यही है कि निम्नीकृत मृदा में बड़े पैमाने पर कार्बन सिंक को फिर से बढ़ाया जाए। कार्बन संचय के लिए सबसे अच्छा तरीका यही है कि वायुमंडलीय कार्बनडाइऑक्साइड से कार्बन को स्थिर कर उसका दीर्घकालिक भंडारण मृदा में कर लिया जाए। मृदा कार्बन संचय से तात्पर्य है कि मृदा की जैविक गतिविधियों को बढ़ाने, मृदा के स्वास्थ्य में सुधार करने और ग्लोबल वार्मिंग को कम करने या स्थगित करने के लिए कार्बन का लंबे समय तक मृदा में भंडारण करना। इसे जीवाश्म ईंधन को जलाने से वातावरण में निष्कर्षित होने वाली ग्रीनहाउस गैसों के वायुमंडल और समुद्र में संचय को धीमा करने के तरीके के रूप में भी देखा जाता है। कार्बन को मृदा में संचय करने के लिए अलग-अलग दृष्टिकोण हैं। इनमें जैविक, भौतिक और रासायनिक विधियां शामिल हैं जिनमें बायोचार एक भौतिक तरीका है। यह अनुमान लगाया गया है कि धरती की एक मीटर गहराई तक लगभग 1500 गीगा टन (10^{12} कि.ग्रा.) जैविक कार्बन संग्रहित है। यह संयुक्त रूप से वानस्पतिक और वायुमंडलीय कार्बन से अधिक है। इससे पता चलता है कि हमारी धरती कार्बन को संचित करने के लिए एक अच्छा भंडार अर्थात सिंक है। विभिन्न कृषि प्रथाओं में बदलाव कर कार्बन संचय बढ़ाना एक सशक्त विधि

सुबबूल से बायोचार का निर्माण

है। वर्ष 2010 में किए गए एक अनुमान के अनुसार मृदा में बायोचार कार्बन के संचय से कार्बनडाइऑक्साइड के वार्षिक उत्सर्जन को 20 प्रतिशत तक निष्प्रभावी किया जा सकता है।

बायोचार द्वारा मृदा में कार्बन संचयन

यह सर्वविदित है कि वायुमंडलीय कार्बनडाइऑक्साइड के उत्सर्जन को कम करने के लिए बायोचार एक प्रबल तकनीकी है। एक अनुमान के अनुसार वर्ष 2100 तक बायोचार द्वारा लगभग 400 अरब टन कार्बन का संचयन मृदाओं में हो सकता है। इससे वायुमंडलीय कार्बनडाइआक्साइड की सांद्रता को 37 पी.पी.एम. तक कम किया जा सकता है। इसके साथ-साथ बायोचार बनाने से रोगजनक सूक्ष्मजीवों को भी दूर रखा जा सकता है। मृदा में भारी धातुओं की विषाक्तता के स्तर में भी कमी लाई जा सकती है। बायोचार जीवाश्म ईंधन के वैकल्पिक स्रोत के रूप में भी कार्य कर सकता है। परंतु कृषि में एक धीमी रिहाई उर्वरक व कार्बन संचयक के रूप में ही इसके प्रयोग पर बल दिया जाता है।

बायोचार का मृदा के गुणों पर प्रभाव

मृदा में बायोचार के उपयोग से अनेक लाभ है। कृषि अपशिष्ट पदार्थो को एक शक्तिशाली सुधारक बनाने से यह मृदा को अधिक उपजाऊ बनाता है। यह मृदा में पौधों और फसलों के लिए पोषक तत्वों

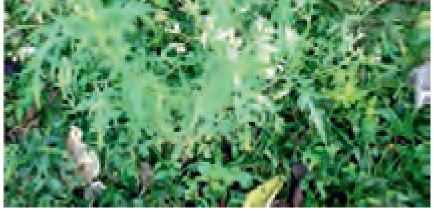

बायोचार निर्माण में उपयोगी गाजर घास

की प्रतिधारण क्षमता को बढ़ाता है। इसके साथ-साथ भू-जल में न्यूनतम लीचिंग के कारण मृदा प्रदूषण को कम कर देता है। यह अन्य तरीकों द्वारा भी लाभदायक है जैसे-इसके उपयोग द्वारा हम खाद्य सुरक्षा को बढ़ावा दे सकते हैं। वनों की कटाई को हतोत्साहित कर सकते हैं और फसल व भूमि विविधता को संरक्षित कर सकते हैं। बायोचार उपयोग से तत्काल लाभ उसमें बड़े पैमाने पर उपलब्ध पोषक तत्वों जैसे-उच्च पोटेशियम, फॉस्फोरस, जिंक, और कुछ हद तक, कैल्शियम तथा तांबा की उपलब्धता के कारण होते हैं। यह मृदा के भौतिक गुणों को भी बदलता है। इससे मृदा की जलधारण क्षमता में वृद्धि होती है। यह मृदा में वायु विनिमय को बढ़ा सकता है और मृदा से नाइट्रसऑक्साइड नामक ग्रीनहाउस गैस के उत्सर्जन को कम कर देता है। वर्तमान समय में बायोचार को वायुमंडलीय कार्बनडाइआक्साइड की मात्रा को कम करने के लिए एक सशक्त साधन के रूप में देखा जा रहा है। यह प्रकाश संश्लेषित कार्बन की पुन: वायुमंडल में लौटाने की दर को अत्यन्त धीमा कर देता है। इसके अलावा बायोचार कम उपजाऊ तथा निम्नीकृत मृदाओं में कृषि उत्पादकता में सुधार कर सकता है और गरीब किसानों के लिए भी विशेष रूप से उपयोगी हो सकता है। यह अपवाह द्वारा होने वाले पोषक तत्वों और कृषि रसायनों

बायोचार एवं जैविक नाइट्रोजन स्थिरीकरण

बायोचार मृदा में जैविक नाइट्रोजन स्थिरीकरण (बीएनएफ) को भी बढ़ाता है। ज्यादा बायोचार की मात्रा का उपयोग करने से मृदा में जैविक नाइट्रोजन निर्धारण, उपलब्ध नाइट्रेट सांद्रता आमतौर पर कम होती है। उपलब्ध कैल्शियम, फॉस्फोरस और सूक्ष्म पोषक तत्वों की सांद्रता उच्च होती है। अधिकतम जैविक नाइट्रोजन स्थिर करने के लिए आदर्श होती है। बायोचार की उपस्थिति में बेहतर जैविक नाइट्रोजन स्थिरीकरण के लिए मृदा में पोषक तत्वों की उपलब्धता से संबंधित कारकों का संयोजन और पौधों का सूक्ष्मजीवों के साथ इंटरैक्शन प्रमुख कारणों में शामिल हैं। इसके परिणामस्वरूप मृदा में सूक्ष्मजीवों की अच्छी कॉलोनी बनती है। दलहनी फसलों में बायोचार के उपयोग से जैविक पैदावार व जैविक नाइट्रोजन स्थिरीकरण में वृद्धि होती है।

सरसों डंठल से पोषण

के नुकसान को भी कम करता है। इसके साथ-साथ बायोचार के प्रयोग से अनेक लाभ हैं जैसे-मृदा में लाभकारी सूक्ष्मजीवों जैसे मायकोराइजल कवक की संख्या में वृद्धि, विभिन्न तंत्रों के माध्यम से फसल उपज में वृद्धि, मृदा में संतृप्ति बेसिक आयनों में वृद्धि, जलधारण क्षमता में वृद्धि और पोषक तत्व उपयोग दक्षता में सुधार।

पौधों द्वारा संचित कार्बन और वायुमंडल में कार्बन के लौटने के बीच एक संतुलन रहता है। मृदा में संग्रहित कार्बन की मात्रा आसानी से नहीं बदलती है। भूमि प्रबंधन में परिवर्तन से कार्बन चक्र बाधित होता है। एक अनुमान के अनुसार वर्ष 2001 में भारत में कुल फसल अवशेषों का 16 प्रतिशत जला दिया गया था (लगभग 116 मिलियन टन)। भारत में बायोमास की उपलब्धता (2010-2011) लगभग 500 मिलियन टन प्रतिवर्ष अनुमानित है। वैश्विक स्तर पर जीवाश्म ईंधन दहन के कारण सालाना लगभग 78 से 90 गीगा टन कार्बन का उत्सर्जन वायुमंडल में हुआ जो कि कुल कार्बनडाइऑक्साइड उत्सर्जन का 29 प्रतिशत है। मृदा कार्बन हमें जलवायु नियंत्रण, जल आपूर्ति, जैव विविधता और पारिस्थितिक तंत्र सेवाएं प्रदान करने में अहम भूमिका निभाता है, जो मानव कल्याण के लिए अति आवश्यक है। मृदा की भौतिक, रासायनिक और जैविक अखंडता को बनाए रखने के लिए उसमें कार्बनिक पदार्थ के

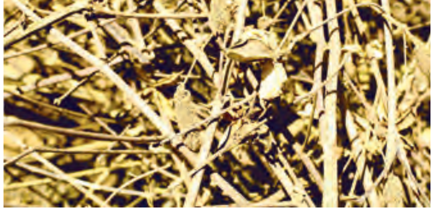

कपास के अवशिष्टों से भू उर्वरता

दहलीज स्तर (क्रिटिकल लेवल) का प्रबंधन महत्वपूर्ण है।

पाइरोलिसिस द्वारा बायोचार बनते समय उसमें अनेक धनायन, ऑक्साइड, हाइड्रॉक्साइड, और कार्बोनेट्स (राख) में परिवर्तित हो जाते हैं। मृदा में डालने पर ये चूने के रूप में कार्य करते हैं। वनों के अंतर्गत भूमि को कृषि भूमि में बदलने के दौरान जंगल काटने व प्राकृतिक वनस्पति के जलने से बने बायोचार के 30 प्रतिशत भाग का लगभग 30 वर्षों में अपघटन हो जाता है। बायोचार के भूमि में प्रयोग से यह कार्बन संचय के साथ-साथ खाद का भी काम करता है। अनेक अध्ययनों से यह सिद्ध हुआ है कि बायोचार मृदा में कार्बन भंडारण व दीर्घकालीन संचयन के साथ-साथ मृदा की उर्वरता में सुधार करता है। इस प्रकार कृषि भूमि पर फसल पैदावार में वृद्धि करता है।

बायोचार समृद्ध मृदा की फसलोत्पादन क्षमता में सुधार होने के साथ उसमें से उत्सर्जन होने वाली ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन कम होता है, जिससे जलवायु परिवर्तन को रोकने में अहम योगदान मिलता है। मृदा पोषक तत्वों पर बायोचार उपयोग द्वारा पोषक तत्व प्रतिधारण पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। ऐसा खासतौर पर कम उपजाऊ व अत्यधिक निम्नीकृत मृदा में होता है। बायोचार के प्रयोग से मृदा में कुल कार्बन, कार्बनिक कार्बन, कुल नाइट्रोजन, उपलब्ध फॉस्फोरस, कैल्शियम, मैग्नीशियम, सोडियम और पोटेशियम जैसे विनिमय योग्य धनायनों की मात्रा में वृद्धि होती है और मृदा में एल्यूमिनम की सक्रियता घट जाती है। यह भी देखा गया है कि बायोचार अनुप्रयोग से इन पोषक तत्वों को पौधे आसानी ले पाते हैं।

भौतिक गुणों पर प्रभाव

मृदा में बायोचार उपयोग करने से उसमें उपलब्ध तत्व पुनः मृदा में मिल जाते हैं। उच्च सतह क्षेत्र और उच्च सतह आवेश घनत्व के कारण, बायोचार मृदा की पोषक तत्वों और पानी की उपलब्धता को बनाए रखने की क्षमता को बढ़ाता है। निक्षालन द्वारा पोषक तत्वों और कृषि रसायनों के ह्रास को कम करता है। बायोचार एक कम घनत्व वाला पदार्थ है, जो मृदा के घनत्व को कम करता है। इस प्रकार जल संचरण, जड़ प्रवेश और वायु विनिमय तथा ढेलों की स्थिरता को बढ़ाता है। बायोचार का उच्चतम अंश मृदा के छोटे ढेलों में मिलता है, जबकि बड़े ढेलों में यह मात्रा कम पाई जाती है। सूक्ष्म-ढेलों में बायोचार की सतह पर कार्बनिक पदार्थों के समावेशन से इसके अपघटन को कम करने में सहायता मिलती है। बायोचार के अंश ह्यूमिक एसिड में टूट जाते हैं तो मृदा कणों के एकत्रीकरण को बढ़ावा मिलता है, जिससे इसके अपघटन को राकने में मदद मिलती है।

मृदा जैविक गुणों पर प्रभाव

बायोचार से मृदा के पी-एच मान में सुधार होता है, जिससे उसमें सूक्ष्मजीवों की

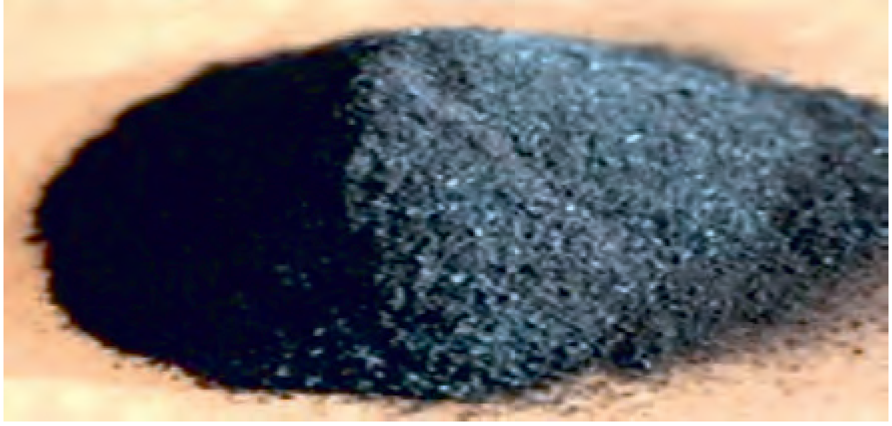

बायोचार

बायोचार बनाने की तकनीक

बायोचार धीमी पायरोलिसिस विधि द्वारा उत्पादित एक प्रकार का कोयला है। इसे कार्बनिक पदार्थों को ऑक्सीजन की अनुपस्थिति में व नियंत्रित तापमान (300-500 सेल्सियस) पर जलाकर बनाया जाता है। इसमें कुल कार्बन की मात्रा उच्च रहती है। यह इसे (60-80 प्रतिशत) दीर्घकाल के लिए मृदा में कार्बन भंडारण के लिए एक संभावित पदार्थ बनाती है। इसका मृदा में क्षय बहुत कम होता है। यह मृदा में हजारों सालों के लिए स्थिर हो सकता है। बायोचार का आधा जीवन 100 से 10000 साल तक हो सकता है। इस प्रकार यह वायुमंडल में कार्बनडाइऑक्साइड की समग्र एकाग्रता को कम करता है। इसी कारण अनुसंधानकर्ताओं का ध्यान इसकी ओर आकर्षित हुआ है। यह न केवल कार्बन भंडारण में योगदान देता है बल्कि इसके साथ-साथ पोषक तत्वों के भंडारण में भी सहयोग करता है। बायोचार का वैश्विक उत्पादन 50 से 270 टेरा ग्राम (1 टेरा ग्राम=10^9 कि.ग्रा.) प्रतिवर्ष होने का अनुमान लगाया गया है। इसका लगभग 80 प्रतिशत भाग मृदा में हठीले कार्बन के रूप में रह जाता है जिसे सूक्ष्मजीव विघटित नहीं कर पाते हैं। हालांकि जब ऑक्सीजन की अनुपस्थिति में जैविक कार्बनिक पदार्थ को जलाया जाता है तब भी हाइड्रोजन गैस, कार्बनमोनोऑक्साइड और अन्य जलने योग्य गैसें व टार तथा गैर-उपयोगी गैसें जैसे कार्बनडाइआक्साइड का उत्सर्जन होता है। यह खुली हवा में कृषि-अपशिष्ट पदार्थ जला देने से अपेक्षाकृत कम होता है। बायोचार बनाने के लिए विभिन्न तरीके तैयार किए गए हैं जिनमें स्थानीय स्तर पर आसान विधि से लेकर व्यावसायिक रूप से कारखानों का प्रयोग तक शामिल है। खेत-खलिहान स्तर पर तो मृदा में जैविक पदार्थों को दबाकर आग लगाने से भी बायोचार तैयार कर सकते हैं। केन्द्रीय कृषि अभियांत्रिकी संस्थान व भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली ने भी छोटे स्तर पर बायोचार बनाने के यंत्र तैयार किए हैं जिनके उपयोग से बायोचार खेत स्तर पर सफलतापूर्वक तैयार किया जा सकता है।

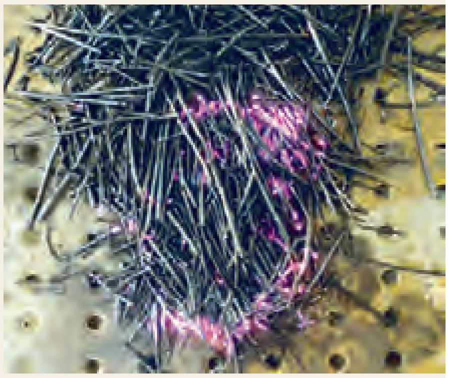

सक्रियता बढ़ती है। इसमें उपलब्ध सूक्ष्म छिद्रों की अधिकता के कारण मृदा में सूक्ष्मजीवों के विकास के लिए आवास क्षेत्र बढ़ जाता है। अधिकांश बायोचार में मैक्रो-छिद्रों की उच्च सांद्रता होती है, जो सतह से अंदर तक फैली होती है, इसमें खनिज और छोटे कार्बनिक कण जमा हो सकते हैं। उच्च पृष्ठीय सतही क्षेत्रों वाले बायोचार कीट नियंत्रण के लिए विशेष रूप से चुनौतीपूर्ण हो सकता है। शुरुआत में रासायनिक ऑक्सीकरण और माइक्रोबियल प्रक्रियाओं द्वारा बायोचार में प्रारंभिक गिरावट दर्ज की जा सकती है। विभिन्न प्रक्रियाओं के सुचारू कामकाज के लिए मृदा का स्वास्थ्य बहुत महत्वपूर्ण है। बायोचार कार्बन समृद्ध मृदा में सूक्ष्मजीवों की आबादी भी अधिक होती है। इस प्रकार मृदा के संशोधन के रूप में बायोचार के प्रयोग से माइक्रोबियल बायोमास और मृदा माइक्रोबियल समुदायों में भी परिवर्तन देखा गया है। अधिकांश मृदा में पारिस्थितिकी तंत्र में केंचुओं के महत्व को मृदा के जीवों का एक अनिवार्य हिस्सा माना जाता है। उनकी उपस्थिति को मृदा के स्वास्थ्य के उपयोगी संकेतक के रूप में माना जाता है। इसलिए केंचुओं की संख्या को व्यापक रूप से जैविक और अकार्बनिक प्रदूषक तथा जैव उपलब्धता दोनों के माप के रूप में भी उपयोग किया जाता है।

स्थानीय स्तर पर बायोचार बनाना

बायोचार के माध्यम से मृदा में कार्बन संचय

साधारणत: मृदा की संरचना और कार्यों में सुधार के लिए कई प्रकार के सुधारक व उर्वरक मृदा में डाले जाते हैं। बायोचार एक प्रकार का कोयला ही है जिसे अपशिष्ट जैविक पदार्थों के पायरोलिसिस द्वारा बनाया जाता है। इसके उपयोग से जैविक कार्बन को पुन: कार्बन चक्र में स्वाभाविक रूप से पुनर्नवीनीकरण किया जाता है। बायोचार को पायरोलिस करने से इसमें उपस्थित कार्बन अपेक्षाकृत निष्क्रिय होता है ताकि यह मृदा में ही अनुक्रमित अर्थात संचित रहे। इसके अलावा, मृदा में नए कार्बनिक पदार्थ के साथ मिलकर यह अतिरिक्त संचय का भी लाभ प्रदान करता है। मृदा में यह सूक्ष्मजीवों को कार्बन ऑक्सीकरण के लिए अनुपलब्ध रहता है। कार्बन संचय के लिए बायोचार कोई नई वस्तु नहीं है। इसका उपयोग पुरातन काल से ही हो रहा है लेकिन इसका महत्व हमने हाल ही में महसूस किया है। अमेजॉन वर्षावन क्षेत्र में विम सोम्ब्रोक नामक वैज्ञानिक ने 1950 के दशक में टेरा प्रीटा की खोज की थी। टेरा प्रीटा अभी भी अमेजॉन बेसिन के 10 प्रतिशत क्षेत्रफल में फैला है। इसी तरह की मिट्टी पश्चिम अफ्रीका में इक्वाडोर, पेरु, बेनिन और लाइबेरिया में भी देखी गई है। अमेजॅनिया में कई जनजातियों ने हजारों वर्षों तक धरती पर सबसे कम उर्वरता वाली मृदा अर्थात ऑक्सीसोल (उष्णकटिबंधीय वर्षा वन मृदा) में सफलतापूर्वक खेती की है। उन्होंने अतिशीघ्र निक्षालन वाली मृदाओं में पौधों के लिए पोषक तत्वों को लंबे समय तक मृदा में बनाए रखने का प्रबंधन कैसे किया? यह पाया गया है कि मानव हस्तक्षेप से तैयार इन मृदाओं में उपस्थित कार्बन इनकी अच्छी उर्वराशक्ति के लिए जिम्मेवार है। सामान्यत: पौधों को स्लैश करना एवं जलाना पद्धति की तुलना में बायोचार बनाने की यह तकनीक मृदा में सुधार करने के लिए लगभग 16 गुना अधिक कुशल है। हमारे इतिहास में कई प्रथाएं दर्ज हैं जैसे-रसोईघर में जलाने के लिए वनों की कटाई, श्मशानघाट पर शवदाह के लिए लकड़ी का जलाना, शादी व अन्य सामाजिक कार्यक्रमों में लकड़ी जलाना, खेती करने के लिए स्लैश करना और जलाना (झूम खेती) आदि जिनके द्वारा पहले भी कुछ बायोचार उत्पन्न हो जाता था। इसे ज्यादा महत्व शायद इसलिए नहीं मिल पाया। क्योंकि यह कम मात्रा में तैयार होता था व इसकी गुणवत्ता भी अनुसंधान के अभाव में कम रही होगी। 1970 और 1980 के दशक में मृदा वैज्ञानिकों ने इसे मृदा में सुधारक के रूप में देखना शुरू कर दिया, लेकिन 1990 के दशक के अंत तक यह समझ लिया गया कि बायोचार एक प्रकार का लकड़ी का कोयला है, जो मृदा को कार्बन से समृद्ध कर सकता है।

बायोचार एवं माइकोराइजी

बायोचार पौधों व कवकों के परस्पर गठबंधन को बढ़ावा देता है। कवक पौधों के लिए अधिक पानी लाते हैं, जिससे पौधे सूखे के प्रति अधिक सहनशील बन जाते हैं। कवक, पौधों के अच्छे स्वास्थ्य के लिए आवश्यक खनिज पदार्थ इनकी जड़ों तक पहुंचाते हैं। ये जड़ों के रोगजनकों के प्रति एंटीबायोटिक बाधाओं के रूप में कार्य करते हैं। अधिक तापमान व पी-एच मान की स्थिति में पौधों की सहिष्णुता की चरम सीमा को बढ़ाते हैं। इससे पौधों को विभिन्न तनावों जैसे-प्रत्यारोपण सदमा, मृदा कठोरपन, मृदा में विषाक्त पदार्थों और भारी धातुओं की अधिकता इत्यादि को सहने में मदद मिलती है। बायोचार मायकोर्जिजल संक्रमण को बढ़ाता है। यह अतिरिक्त रेडिकल हाइफा के लिए एक आवास के रूप में काम करने में सक्षम है। यह भी देखा गया है कि बायोचार के उपयोग से अरवेस्कुलर माइकोराइजी द्वारा पौधों की जड़ों में बेहतर संक्रमण होता है। मृदा में बायोचार और अरवेस्कुलर माइकोराइजल कवक (ए.एम.एफ.) पोषक तत्व उपलब्धता को एक

परिवर्तित स्तर की ओर ले जाते हैं। पौधों और मायकोर्जिजल कवक दोनों को प्रभावित करता है। निम्नीकृत मृदाओं में बायोचार द्वारा फसलों का उत्पादन बढ़ जाता है।

बायोचार का अपघटन

बायोचार, मैक्रोमोलेक्युलर संरचना के कारण सूक्ष्म जैविक अपघटन के लिए अधिक हठीला (रिकैल्सीट्रेंट) होता है। इसका अपघटन इतनी धीमी गति से होता है कि इसके क्षय का पता लगाना बहुत आसान नहीं है। इष्टतम परिस्थितियों में प्रतिवर्ष लगभग 0.5 प्रतिशत से भी कम बायोचार का क्षय हो पाता है। यदि प्राकृतिक कारकों के तहत 10 गुना धीमी गति से बायोचार का विघटन हो तो भी इसका मृदा में निवास समय लगभग 2000 वर्ष रहेगा और आधा जीवन लगभग 1400 साल होगा। एक उष्मायन अध्ययन में यह पाया गया है कि 624 दिनों के बाद सूक्ष्मजीवों में मृदा में डाले गए कार्बन का 1.5 प्रतिशत कार्बन देखा गया। भिन्न-भिन्न जैविक पदार्थों से बनाए गए बायोचार का क्षय भी अलग जल उपलब्धता स्तरों पर भिन्न होता है। बायोचार से कार्बन का निकलना इस बात पर निर्भर करता है कि वह किस जैविक पदार्थ/फसल के बायोमास से बना है। बायोचार का ऑक्सीकरण ही उसकी स्थिरता को नियंत्रित करने वाला प्रमुख तंत्र होता है।

मृदा की गुणवत्ता और मृदा कार्बन संचयन में सुधार के लिए मृदा के संशोधन के रूप में बायोचार ने व्यापक पैमाने पर वैश्विक ध्यान आकर्षित किया है। मृदा के स्वास्थ्य को बनाए रखने, कार्बन का दीर्घकाल के लिए मृदा में संचयन करने, फसल पैदावार में वृद्धि करने और ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन कम करने और जैसी अनेक कृषि की जरूरतों को पूरा करने की योग्यताएं बायोचार में विद्यमान हैं। इस प्रकार मृदा के स्वास्थ्य में सुधार करने में बायोचार की अपार संभावनाएं हैं। फिर भी उस मौलिक तंत्र जिसके द्वारा बायोचार मृदा को लाभदायक कार्य प्रदान कर सकता है, के बारे में और अधिक खोज करने की आवश्यकता है। यद्यपि कृषि में बायोचार के लाभकारी उपयोग की कुछ विरोधाभासी रिपोर्टें भी हैं। ऐसा लगता है कि बायोचार मृदा में कार्बन संचय को बढ़ाने और पर्यावरण में बढ़ती कार्बनडाइऑक्साइड की एकाग्रता को कम करने के लिए एक चमत्कारी पदार्थ हो सकता है। इसके प्रयोग करने की दर और इसके कार्यात्मक तंत्र को पूरी तरह और अच्छे से समझते हुए इसके दीर्घकालिक उपयोग से मृदा की भौतिक, रासायनिक, जैविक और पारिस्थितिक गुणों में सुधार के लिए व्यापक रूप में प्रयोग में लाने की आवश्यकता है। इसके अलावा विभिन्न कृषि-पारिस्थितिकीय क्षेत्रों के तहत फसलों के प्रति इसकी प्रतिक्रिया को जानने के बारे में भी अनुसंधान होते रहने चाहिए। ■

सेहत के लिए वरदान मोटे अनाज

कुपोषण की मुश्किल चुनौती, जो एक बड़ी आबादी को घेरे हुए है, उससे छुटकारा पाने का सबसे कारगर तरीका है मोटे अनाजों का सेवन। कभी हमारे जीवन में आहार का महत्वपूर्ण अंग होने वाले ये अनाज आज हमारे जीवन-आधार से काफी दूर हो चुके हैं। हरित क्रांति से पहले यही मोटे अनाज हमारी जीवनशैली में शामिल थे। हमारे पुरखों की लम्बी उम्र और सेहत का असली राज ही मोटे अनाज हुआ करते थे, जो उन्हें सर्दी, गर्मी और बरसात से बेपरवाह रखते थे। पौष्टिकता से भरपूर इन अनाजों का कम लागत पर उत्पादन किया जा सकता है। इस महंगाई के दौर में मोटे अनाज गरीबों की पौष्टिक भोजन की जरूरतों को पूरा करने में सक्षम हैं।

पोषण से भरपूर मोटे अनाज

- जई में बी कॉम्प्लेक्स कार्बोहाइड्रेट्स, कैल्शियम, जिंक, मैग्नीज, लोहा और विटामिन बी व ई भी भरपूर मात्रा में पाया जाता है। लो सैचुरेटेड फैट के साथ लेने पर यह हृदय संबंधी रोगों को कम करने के साथ-साथ डिसलिपिडेमिया के लिए भी लाभदायक है।
- बाजरा एक गर्म अनाज होने की वजह से आमतौर पर जाड़ों के दिनों में खाया जाता है। यह उन लोगों के लिए फायदेमंद है, जो गेहूं नहीं खा सकते, ऐसे लोगों को बाजरे को किसी अनाज के साथ मिलाकर खाना चाहिए। यह थायमिन, कैल्शियम, आयरन व विटामिन-बी का अच्छा स्रोत है।
- जौ की बात करें तो इसमें सबसे ज्यादा अल्कोहल पाया जाता है। इसमें फाइबर, मैग्नीशियम व एंटीऑक्सीडेंट प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। यह ब्लड कोलेस्ट्रॉल को कम करके ब्लड ग्लूकोज को बढ़ाता है। अल्कोहल की मात्रा अधिक होने की वजह से यह मूत्रवर्द्धक है व हाइपर टेंशन के पीड़ितों के लिए भी लाभदायक है।
- सामान्य गेहूं जहां अल्प अवधि में ही घुन खा जाता है वहीं मंडुआ 2 दशकों तक ज्यों का त्यों बना रहता है।
- काबुली चने में 23 प्रतिशत प्रोटीन होता है।
- कंगनी 100 ग्राम चावल की तुलना में 81 प्रतिशत अधिक पौष्टिक है।
- सांवां में 840 प्रतिशत ज्यादा वसा, 350 प्रतिशत फाइबर और 1229 प्रतिशत आयरन पाया जाता है।
- 633 प्रतिशत अधिक खनिज तत्व चावल की तुलना में कोदों में पाया जाता है।
- रागी में कैल्शियम की भरमार होती है।
- बाजरे में 85 प्रतिशत अधिक फॉस्फोरस पाया जाता है।

मोटा अनाज अधिक रेशेदार होने की वजह से आंतों में रुकता नहीं है व कब्ज से बचाता है। माताएं अपने शिशुओं को भी पुराने समय में ज्वार और मक्के के आटे का घोल पिलाती थीं, जो उनके लिए सुपोषक होता था। आजादी के बाद बाजारीकरण के कारण आम जनता का मोटे अनाजों की तरफ मोह भंग हो गया। इस दौरान एकफसली खेती को बढ़ावा मिला उसमें धान और गेहूं की केन्द्रीय भूमिका हो गई। नतीजतन कृषि योग्य भूमि में मोटे अनाजों की पैदावार उत्तरोत्तर कम हो गई। देहाती भोजन समझकर जिस मोटे अनाज को रसोई से बाहर कर दिया गया था आज उसी अनाज को वैज्ञानिकों द्वारा प्रमाणित किए जाने के बाद बड़ी-बड़ी कम्पनियां इन अनाजों के पैकेट बाजार में उतार रही हैं, जो अब हर वर्ग शौक से खरीदता है। अगर आज की मानव पोषण की जरुरतों को समझा जाए तो मोटा अनाज हमारे लिए बहुत महत्वपूर्ण है। ■

गन्ने की खेती का इतिहास

दक्षिण प्रशांत क्षेत्र में सबसे पहले हुई थी गन्ने की खेती

गन्ने की खेती 8,000 साल पहले दक्षिण प्रशांत क्षेत्र में न्यू गिनी के द्वीप पर हुई थी और इसके बाद यह धीरे-धीरे सोलोमन द्वीप समूह में फैली। यहां से 2000 वर्ष बाद गन्ना, इंडोनेशिया, फिलीपींस और उत्तर भारत पहुंचा। चीन में गन्ना लगभग 800 ईसा पूर्व भारत से पहुंचा था। 1520 तक मैदानी क्षेत्रों में गन्ने की खेती बढ़ रही थी। इसके बाद गन्ने की खेती पेरू, ब्राजील, कोलम्बिया और वेनेजुएला में भी होने लगी।

8वीं शताब्दी में हुई थी चीनी बनाने की शुरुआत

चीनी बनाने की शुरुआत 8वीं शताब्दी के आसपास, मुस्लिम और अरब व्यापारियों ने भूमध्य सागर, मेसोपोटामिया, मिस्र, उत्तरी अफ्रीका और अंडालुसिया में अब्बासीद खलीफा के दक्षिण हिस्सों में की थी। स्पैनिश एक्सप्लोरर कोरटेज ने वर्ष 1535 में उत्तरी अमेरिकी में पहली चीनी मिल स्थापित की थी। वर्ष 1547 में प्यूर्टो रिको में भी चीनी मिल की स्थापना की गई। वर्ष 1600 तक अमेरिका के कई हिस्सों में चीनी उत्पादन दुनिया का सबसे बड़ा और सबसे आकर्षक उद्योग बन गया। गन्ने की बढ़ती खेती के बाद वेस्टइंडीज के 'शर्करा द्वीप' इंग्लैंड और फ्रांस के लिए आर्थिक रूप से काफी फायदेमंद साबित हुए।

महंगी हुआ करती थी चीनी

अपने शुरुआती समय में चीनी इतनी महंगी बिका करती थी कि लोग इसे विलासिता की वस्तु मानते थे। इतिहासकारों के अनुसार महारानी एलिजाबेथ अपनी मेज पर एक चीनी का कटोरा रखती थीं और रोजाना भोजन और मसाले के रूप में चीनी का इस्तेमाल करती थीं, ताकि वो ये प्रदर्शित कर सकें कि वो कितनी धनवान हैं।

कोलंबस लाए थे गन्ना

क्रिस्टोफर कोलंबस अमेरिका की अपनी दूसरी यात्रा के दौरान कैरेबिया में गन्ना लाए थे। औपनिवेशिक काल में चीनी को कैरेबिया से यूरोप या इंग्लैण्ड भेजा जाता था, जहां रम बनाने के लिए इसका इस्तेमाल होता था। 17वीं से 19वीं शताब्दी के बीच ब्वॉयलिंग हाउसेज में गन्ने के रस से कच्ची चीनी बनाई जाती थी। ये ब्वॉयलिंग हाउसेज पश्चिमी उपनिवेश के चीनी के कारखानों से जुड़े होते हैं।

इस तरह बनती थी चीनी

गन्ना बुआई की तैयारी

उस समय ईंट या पत्थर के आयताकार बक्से की तरह भट्ठियां बनाई जाती थीं, जिनमें नीचे की ओर थोड़ी सी खुली जगह होती थी, जहां से राख निकाली जाती थी। हर भट्ठी के ऊपर की ओर तांबे की सात केतली या ब्वॉयलर लगे होते थे। हर केतली पहले वाले से छोटी और ज्यादा गर्म होती थी। गन्ने का रस सबसे बड़ी केतली में होता था, जो गर्म होता रहता था, इसमें नीबू मिलाकर इसकी अशुद्धियां दूर की जाती थीं। यहीं पर रस में ऊपर जो झाग बनता था उसे हटाया जाता था और फिर ऊपर वाली केतलियों में भेजा जाता था। आखिरी केतली में पहुंचते हुए गन्ने का रस एक सिरप में बदल जाता था, इसके बाद इसे ठंडा करने की प्रक्रिया होती थी। इस प्रक्रिया में सिरप ठंडा होकर गुड़ के टुकड़ों में बदल जाता था। इन टुकड़ों को लकड़ी के बैरल जिन्हें होगशेड्स कहा जाता था, में इसे इकट्ठा करके इसे साफ चीनी बनाने के लिए क्योरिंग हाउस में भेज दिया जाता था।

गन्ने की खेती के लिए भारत से ब्रिटेन गए थे श्रमिक

पश्चिमी अफ्रीका के गुलाम 1833 में आजाद हो गए और इसके बाद उन्होंने इंग्लैंड के गन्ने के खेतों में काम करना बंद कर दिया। गन्ना खेत मालिकों को नए श्रमिकों की जरूरत पड़ी और उन्हें ये श्रमिक कम दामों में चीन, पुर्तगाल और भारत से मिले। इन श्रमिकों को एक निश्चित समय के लिए अनुबंधित करके वहां ले जाया जाता था। राष्ट्रीय अभिलेखागार, ब्रिटिश सरकार की 2010 की रिपोर्ट के मुताबिक, 1836 में भारत का श्रमिकों से भरा हुआ पहला जहाज इंग्लैंड आया था।

गन्ने के खेतों में काम करने के लिए भारत, दक्षिणपूर्व एशिया और चीन के कई हिस्सों के लोग ब्रिटेन चले गए। अभी भी यूनाइटेड किंगडम के कुछ द्वीपों में एशियाई प्रवासियों की आबादी 10 से 50 फीसदी के बीच है। ऑस्ट्रेलिया के मानवाधिकार आयोग की एक रिपोर्ट के मुताबिक, ब्रिटिश उपनिवेश के दौरान क्वींसलैंड (अब ऑस्ट्रेलिया का एक राज्य) में 1863 से 1900 के बीच गन्ने के खेतों में काम करने के लिए 50,000 से 62500 लोग दक्षिणी प्रशांत द्वीप समूह से आए थे। ■

प्रस्तुति: अश्विनी कुमार निगम

अप्रैल के मुख्य कृषि कार्य

राजीव कुमार सिंह, विनोद कुमार सिंह, कपिला शेखावत, प्रवीण कुमार उपाध्याय और एस.एस. राठौर
सस्य विज्ञान संभाग
भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली-110012

"अप्रैल में ग्रीष्म ऋतु या चैत्र-वैशाख का आगाज होने लगता है। विशेषकर बैसाखी, त्यौहार के लिए मशहूर है। फसलें कटाई के लिए तैयार होती हैं। इसके साथ ही रबी फसलों की कटाई-मड़ाई का कार्य भी शुरू हो जाता है। ज्यादातर रबी फसलों जैसे राई-सरसों, अलसी, चना आदि की कटाई इस माह तक हो जाती हैं। रबी की मुख्य फसलें जैसे जौ, गेहूं आदि की कटाई हुई है, तो उन्हें सुखाकर अनाज को अच्छे तरह से रखते हैं। सिंचन सुविधासंपन्न क्षेत्रों में जायद फसलें जैसे मक्का, बाजरा, गन्ना, मूंग, उड़द, सूरजमुखी, मूंगफली, कपास; चारे वाली फसलें (मक्का, ज्वार, बाजरा, लोबिया), शाकीय फसलें (भिण्डी, बैंगन, लोबिया, मूली, परवल, घिया, तोरई, कद्दू, टिंडा, खरबूज, तरबूज, खीरा व अरबी) तथा हरी खाद (मूंग, उड़द, लोबिया, ढैंचा व ग्वार) आदि फसलों की बुआई शुरू हो जाती है। इसके लिए खेत को भलीभांति तैयार कर, उपयुक्त नमी बनाये रखने के लिए आवश्यक सिंचाई प्रबंधन करना चाहिए। साथ ही बीज, खाद एवं उर्वरक का समय पर प्रबंध कर लेना चाहिए। इस माह किए जाने वाले कृषि कार्यों का संक्षिप्त वर्णन इस लेख में किया गया है।"

गेहूं, जौ और अनाजी फसलों में देखभाल

- फसल की कटाई किसान के लिए सबसे महत्वपूर्ण है। गेहूं की कटाई से लेकर बेचने तक की अवधि में कई प्रकार के कार्य किए जाते हैं जिनका अलग-अलग महत्व है। यदि खेत छोटे-छोटे टुकड़ों में बिखरे हुए हैं तो गेहूं के एक बड़े हिस्से की कटाई मजदूरों द्वारा दरांती, हंसिये, रीपर या मोअर से की जाती है। इसमें सतह से 3-6 सें.मी. ऊपर से कटाई की जाती है। आजकल आसानी से कटाई के लिए रीपर का उपयोग बढ़ता जा रहा है। बड़े पैमाने पर खेती के लिए कम्बाइन प्रयोग में लाई जाती है। फसल को पकने के तुरंत बाद काट लेना चाहिए। गेहूं में कुल उत्पादन का लगभग 8 प्रतिशत भाग कटाई उपरांत नष्ट हो जाता है। उचित तरीकों को अपनाकर हानि को कम किया जा सकता है। गेहूं की फसल इस महीने में पककर तैयार हो जाती है। जब दाने सुनहरे सख्त होने लगे तथा दानों में 18-20 प्रतिशत नमी हो, वह कटाई की सही अवस्था होती है। सुबह का समय कटाई के लिए ज्यादा उपयुक्त होता है। अगर कटाई हाथ से की जाती है तो फसल के बंडल को 3-4 दिनों तक खेत में छोड़ देना चाहिए। बड़ी जोत वाली जगहों पर कम्बाइन हार्वेस्टर का प्रयोग करने से कटाई, मड़ाई तथा ओसाई एक साथ हो जाती है। भूसे को इकट्ठा करने के लिए भूसे बनाने की मशीन का उपयोग भी किया जा सकता है। परंतु कम्बाइन हार्वेस्टर से कटाई करने के लिए दानों में 20 प्रतिशत से अधिक नमी नहीं होनी चाहिए, क्योंकि दानों में ज्यादा नमी रहने पर मड़ाई या गहाई ठीक से नहीं हो पाती है।

गेहूं की नई प्रजाति एचडी-3237

चना, मसूर और मटर

- चना, मसूर, खेसारी आदि फसलों की पत्तियां पीली या भूरी पड़ जाएं एवं फलियां और फली के अंदर दाना पीला पड़ जाए, तो समझ लें कि फसल पकने वाली है। यदि दाने में नमी की मात्रा अधिक हो तो कटाई एवं मड़ाई तथा भंडारण के समय बीजों को क्षति होने तथा बीज की जमाव क्षमता भी नष्ट होने का खतरा रहता है। कटाई के समय दाने में नमी की मात्रा 15 प्रतिशत से कम होनी अति महत्वपूर्ण है। दांतों तले बीज दबाकर तोड़ने पर कट्ट की आवाज

चना पूसा-547

आए तो समझ लें कि फसल पक गई है। फसलों का पकना वहां की जलवायु परिस्थिति जैसे दाने में नमी की मात्रा, सूर्य की रोशनी, तापमान एवं आर्द्रता इत्यादि पर निर्भर करता है। जहां तक संभव हो दलहनी फसलों की कटाई सुबह के समय करनी चाहिए। इस समय फलियों के चटकने की आशंका कम रहती है।

- फसल को कटाई के बाद धूप या सूर्य की रोशनी में सुखाएं ताकि वानस्पतिक भाग जैसे, फलियों एवं दाने में नमी कम हो सके। खलिहान में 3-4 दिनों तक धूप में रखने के बाद जांच लें कि दाने में नमी की मात्रा 10-12 प्रतिशत से कम हो। मड़ाई या गहाई बैलों या ट्रैक्टर द्वारा की जा सकती है, परंतु थ्रेशर मशीन द्वारा गहाई करने से समय एवं श्रमिकों की बचत होती है। भूसा या कचरा अलग करने हेतु बिजली या ट्रैक्टरचालित विनोवर द्वारा दानों की सफाई अच्छी तरह से की जा सकती है। भंडारण दो तरीके से किया जा सकता है। वेयर हाउस या बोरों का इस्तेमाल कर सकते हैं, यदि लंबे समय तक भंडारण करना हो तो बिन्स या साइलो सबसे बेहतर तरीका है।
- दाने वाली मटर की फसल मार्च के अंतिम सप्ताह या अप्रैल के प्रथम सप्ताह में पककर तैयार हो जाती है। फसल अधिक सूख जाने पर फलियां खेत में ही चटकने लगती हैं। इसलिए जब फलियां पीली पड़कर सूखने लगें उस समय कटाई कर लें। फसल को एक सप्ताह खलिहान में सुखाने के बाद गहाई करते हैं। दानों को साफ कर 4-5 दिनों तक सुखाते हैं, जिससे कि दानों में नमी की मात्रा 10-12 प्रतिशत तक रह जाये। मटर का भंडारण करते समय कीटों से बचाने के लिए एल्युमिनियम फॉस्फाइड की 3 गोलियां प्रति मीट्रिक टन की दर से प्रयोग करें। इससे भंडारण में कीटों से होने वाली हानि से बचाया जा सके।
- भंडारण से पूर्व दानों को अच्छी तरह से सुखा लेना चाहिए। मसूर को भंडारण में कीटों से बचाने के लिए एल्युमिनियम फॉस्फाइड की तीन गोलियां प्रति मीट्रिक टन की दर से प्रयोग करें।

मसूर पूसा-वैभव

गेहूं भंडारण

उन्नत तकनीक से खेती करने पर सिंचित अवस्था में गेहूं की बौनी किस्मों से लगभग 50-60 क्विंटल दाना के अलावा 80-90 क्विंटल भूसा/हैक्टर प्राप्त होता है, जबकि देसी लंबी किस्मों से इसकी लगभग आधी उपज प्राप्त होती है। देसी

गेहू-1620

किस्मों से असिंचित अवस्था में 15-20 क्विंटल प्रति हैक्टर उपज प्राप्त होती है। भंडारण हेतु दानों में 10-12 प्रतिशत से अधिक नमी नहीं होनी चाहिए। भंडारण के पूर्ण कोठियों तथा कमरों को साफ कर लें और दीवारों व फर्श पर मैलाथियान 50 प्रतिशत के घोल को 3 लीटर प्रति 100 वर्गमीटर की दर से छिड़कें। अनाज को बुखारी, कोठिलों या कमरे में रखने के बाद एल्युमिनियम फॉस्फाइड 3 ग्राम की दो गोली प्रति टन की दर से रखकर बंद कर देना चाहिए।

ग्रीष्मकालीन मूंग, उड़द एवं अरहर

- ग्रीष्मकालीन मूंग की बुआई 15 अप्रैल तक कर दें। इस समय उड़द की बुआई न करें। बीज की बुआई कूंड़ों में या सीडड्रिल से पंक्तियों में की जानी चाहिए तथा बीजों को 4-5 सें.मी. गहराई में बोना चाहिए। मूंग एवं उड़द की पिछली बोयी गयी फसल में 25-30 दिनों बाद पहली सिंचाई करें। प्रति कि.ग्रा. बीज का 2.5 ग्राम थीरम तथा 1 ग्राम कार्बेन्डाजिम से उपचार करने के बाद राइजोबियम या फॉस्फेट घुलनशील बैक्टीरिया (पीएसबी) कल्चर/टीका एक पैकेट 10 कि.ग्रा. बीज की दर से बीजोपचार करके बुआई करनी चाहिए।
- **बीज शोधन एवं बीजोपचार:** मृदा एवं बीजजनित कई कवक एवं जीवाणुजनित रोग होते हैं, जो अंकुरण होते समय तथा अंकुरण होने के बाद बीजों को

मूंग की देखभाल

सामान्यत: उर्वरकों का प्रयोग मृदा परीक्षण की संस्तुतियों के आधार पर किया जाना चाहिए। मूंग की फसल के लिए 15-20 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 40-50 कि.ग्रा. फॉस्फोरस, 40 कि.ग्रा. पोटाश एवं

20 कि.ग्रा. सल्फर प्रति हैक्टर की दर से बुआई के समय कूंड़ों में देना चाहिए। कुछ क्षेत्रों में जिंक की कमी की अवस्था में 15-20 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर के दर से जिंक सल्फेट का प्रयोग करना चाहिए। साथ ही 5.0 टन/हैक्टर की दर से गोबर की खाद का उपयोग करना चाहिए। इस समय की मूंग की फसल लगभग दो से ढाई महीने में तैयार हो जाती है। इस कारण से सिंचाई की भी बहुत अधिक आवश्यकता नहीं होती है। सही मायने में ग्रीष्मकालीन मूंग एक बोनस फसल की तरह काम करती है।

अरहर

काफी क्षति पहुंचाते हैं। बीजों के अच्छे अंकुरण तथा स्वस्थ पौधों की पर्याप्त संख्या हेतु बीजों को कवकनाशी से बीज उपचार करने की सलाह दी जाती है। इसके लिए प्रति कि.ग्रा. बीज को 2 से 2.5 ग्राम थीरम तथा 1 ग्राम कार्बेन्डाजिम से उपचार करने के बाद राइजोबियम कल्चर/टीका से बीजोपचार करना चाहिए। इसी प्रकार फॉस्फेट घुलनशील बैक्टीरिया (पीएसबी) से बीज का शोधन करना भी लाभदायक होता है।

- **मूंग की उन्नत प्रजातियां:** मूंग की अच्छी पैदावार तथा उत्तम गुणवत्तायुक्त उत्पादन लेने के लिए अच्छी प्रजाति का चयन अत्यन्त महत्वपूर्ण है इसीलिए पानी के साधन, फसल चक्र व बाजार की मांग की स्थिति को ध्यान में रखकर उपयुक्त प्रजातियों का चुनाव करें।
- सघन खेती के लिए विभिन्न दलहनों की शीघ्र पकने वाली प्रजातियां विकसित की गयी हैं। सिंचित क्षेत्रों के अंतर्गत मूंग व उड़द की विभिन्न परिपक्वता अवधि वाली, तापमान एवं प्रकाश के प्रति अतिसंवेदनशील, विभिन्न पौधस्वरूप एवं अधिक उपज वाली प्रजातियों के विकास से इनको कई फसल प्रणालियों में स्थान मिला है। उत्तर भारत में मूंग व उड़द का कम अवधि वाला पीली चितेरी विषाणु रोग, अवरोधी प्रजातियों के विकास से मध्य मार्च से जून के बीच उगाने से फसल प्रणाली को अधिक लाभ कमाने तथा टिकाऊ बनाने में सहायता मिलती है। मूंग व उड़द को शामिल करके सारणी-2 में दर्शाई गयी फसल प्रणालियां उपयुक्त पायी गयी हैं।
- ग्रीष्मकालीन मूंग व उड़द की फसल की अच्छी वृद्धि व विकास के लिए 3 से 4 सिंचाइयां आवश्यक हैं। खरीफ की फसल से भरपूर पैदावार हेतु जल निकास की उचित व्यवस्था होनी चाहिए।
- बुआई के प्रारंभिक 4-5 सप्ताह तक खरपतवार की समस्या अधिक रहती है। पहली सिंचाई के बाद निराई करने से खरपतवार नष्ट होने के साथ-साथ भूमि में वायु का संचार भी होता है जो मूल ग्रन्थियों में क्रियाशील जीवाणुओं द्वारा वायुमंडलीय नाइट्रोजन एकत्रित करने में सहायक होता है। खरपतवारों के रासायनिक नियंत्रण हेतु 2.5-3.0 मि.ली. प्रति लीटर पानी में घोलकर बुआई के 2 से 3 दिनों के अंदर अंकुरण के पूर्व छिड़काव करने से 4 से 6 सप्ताह तक खरपतवार नहीं निकलते हैं। चौड़ी पत्ती तथा घास वाले खरपतवार को रासायनिक विधि से नष्ट करने के लिए एलाक्लोर की 4 लीटर या फ्लूक्लोरालिन (45 ईसी) नामक रसायन की 2.22 ली मात्रा को 800 लीटर पानी में मिलाकर बुआई के तुरन्त बाद या अंकुरण से पहले छिड़काव कर देना

सारणी 1. मूंग की उन्नत प्रजातियां

क्र. सं.	प्रजातियां	पकने की अवधि (दिन)	औसत उपज (क्विं./ है.)	विशिष्ट गुण औसत
1.	पूसा विशाल	60-62	10-12	पीत चितेरी रोगरोधी तथा एक साथ पकने वाली प्रजाति
2.	पूसा 9531	65-70	12-0	पीत चितेरी रोगरोधी, चमकीला हरा दाना
3.	पूसा रत्ना	65-70	10-12	पीत चितेरी रोगरोधी प्रजाति
4.	पूसा 0672	70-72	9-10	पीत चितेरी रोगरोधी, चमकीला तथा मध्यम आकार का हरा दाना
5.	सम्राट	58-62	10-12	पीत चितेरी रोगरोधी, चमकीला हरा दाना तथा एक साथ पकने वाली प्रजाति
6.	मेहा	65-70	12-14	पीत चितेरी रोगरोधी, चमकीला हरा दाना
7.	आर.एम.जी. 268	66-73	8-10	पीत चितेरी रोगरोधी, चमकीला हरा दाना
8.	पंत मूंग 4	65-70	12-14	पीत चितेरी रोगरोधी, हल्का हरा दाना
9.	पंत मूंग 5	60-65	12-14	पीत चितेरी रोगरोधी, सभी ऋतुओं के लिए उपयुक्त
10.	पंत मूंग 6	60-65	12-14	पीत चितेरी रोगरोधी
11.	एस.एम.एल. 668	60-62	10-12	पीत चितेरी रोगरोधी, बड़ा हरा दाना
12.	एस.एम.एल. 832	60-62	11-60	पीत चितेरी व थ्रिप्स रोगरोधी, मध्यम आकार व चमकीला दाना
13.	एच.यू.एम. 2	60-65	11-12	पीत चितेरी रोगरोधी, सभी ऋतुओं के लिए उपयुक्त
14.	एच.यू.एम. 1	60-65	9-11	पीत चितेरी रोगरोधी
15.	एच.यू.एम. 6	68.70	10-11	पीत चितेरी रोगरोधी
16.	एच.यू.एम. 12	60-65	8-10	पीत चितेरी रोगरोधी
17.	गंगा 8	72-75	9-10	पीत चितेरी रोगरोधी
18.	आर.एम.जी. 492	65-70	9-11	पीत चितेरी रोगरोधी
19.	एम.एल. 818	75-80	10-12	पीत चितेरी रोगरोधी
20.	टी.एम.बी. 37	65-70	12-14	पीत चितेरी रोगरोधी, चमकीला तथा बड़ा हरा दाना
21.	एच.यू.एम. 16	60-65	10-12	पीत चितेरी रोगरोधी, चमकीला तथा बड़ा हरा दाना
22.	बसंती (एम.एच.125)	65-70	10-12	पीत चितेरी रोगरोधी
23.	आई.पी.एम. 02-14	62.70	10.11	पीत चितेरी रोगरोधी, बड़ा, चमकीला तथा आकर्षक हरा दाना

चाहिए। अतः बुआई के 15-20 दिनों के अंदर निराई-गुड़ाई कर खरपतवारों को नष्ट कर देना चाहिए।

राई-सरसों और अलसी

- अप्रैल में कुछ जगहों पर सरसों, अलसी, कुसुम की मड़ाई होती है। जब 75 प्रतिशत फलियां सुनहरे रंग की हो जायें, फसल को काटकर सुखाकर व मड़ाई करके बीज अलग कर लेना

ग्रीष्मकालीन सूरजमुखी

चाहिए। देर से कटाई करने पर बीजों के झड़ने की आशंका रहती है।
- बीज का अच्छी प्रकार से सुखाकर ही भंडारण करना चाहिए। भंडारण के लिए दानों में नमी 8-10 प्रतिशत के लगभग होनी चाहिए। कीटों से बचाव के लिए मेलाथियान 50 ई.सी., 1 लीटर को 100 लीटर पानी में घोलकर भली प्रकार गोदाम के दीवारों और फर्श पर छिड़काव करें और एक सप्ताह के लिए गोदाम को बंद करें।
- अलसी की फसल की कटाई उस समय पर करें जब पौधे सुनहरे पीले रंग के होने लगते हैं। कैप्सूल भूरे रंग के साथ सूखने और खुलने लगते हैं, जबकि रसे के लिए अलसी की कटाई उसी समय पर शुरू करें जब पौधे हरे रंग के होते हैं।

ग्रीष्मकालीन सूरजमुखी और मूंगफली

सूरजमुखी

- सूरजमुखी की फसल में उर्वरक का

अलसी गरिमा

पूसा सरसों-28

सारणी 2. दलहन आधारित दलहन प्रजातियां

अरहर-मूंग-गेहूं-मूंग	मक्का-तोरिया-मूंग/उड़द
मक्का-गेहूं-मूंग/उड़द	धान-गेहूं-मूंग/उड़द
अरहर-गेहूं-मूंग	आलू-गेहूं-उड़द
उड़द-सरसो-मूंग/उड़द	उड़द-गेहूं-मूंग

प्रयोग मृदा परीक्षण के आधार पर करना चाहिए। यदि राई एवं मटर की खेती के बाद ग्रीष्मकालीन मूंगफली की खेती की जा रही है तो बुआई से पूर्व 100 क्विंटल/हैक्टर की दर से गोबर की खाद डालनी चाहिए। आलू तथा सब्जी मटर की फसलों में यदि गोबर की खाद प्रयोग की गयी है तो गोबर की खाद डालने की आवश्यकता नहीं है। राई तथा मटर की खेती के बाद उगाई जा रही मूंगफली में 40 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस, 40 कि.ग्रा. पोटाश तथा 200 कि.ग्रा. जिप्सम/ हैक्टर की दर से प्रयोग करना चाहिए। आलू एवं सब्जी मटर की खेती में 15 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 30 कि.ग्रा. फॉस्फेट, 45 कि.ग्रा. पोटाश तथा 300 कि.ग्रा. जिप्सम/हैक्टर फसलों में डालना उचित होगा। अप्रैल में सूरजमुखी की बुआई भी कर सकते हैं वैसे तो मार्च के प्रथम पखवाड़े तक इसकी बुआई हो जाती है किन्तु गेहूं के बाद सूरजमुखी लेने पर अप्रैल में ही बुआई कर सकते है। सूरजमुखी के लिए 8-10 कि.ग्रा. बीज को पंक्ति से पंक्ति की दूरी 45-60 सें.मी. और पौधे से पौधे की दूरी 15-20 सें.मी. एवं बीज की 4-5 सें.मी. पर गहराई

मूंगफली की उन्नत खेती

मूंगफली की खेती के लिए दोमट बलुआ, बलुआ दोमट या हल्की दोमट मृदा अच्छी रहती है। ग्रीष्मकालीन मूंगफली की खेती आलू, मटर, सब्जी मटर तथा राई की कटाई के बाद खाली खेतों में सफलतापूर्वक की जा सकती है। ग्रीष्मकालीन मूंगफली की उन्नत प्रजातियां जैसे-टीजी-26, टीजी-37ए, डीएच-86, टीपीजी-1, एसजी-99, टा-64, टा-28, चन्द्रा, उत्कर्ष, एम-13, अम्बर, चित्रा, कौशल व प्रकाश उगाई जा सकती हैं। इसकी एस जी 84 व एम 522 किस्में सिंचित हालत में अप्रैल के अंतिम सप्ताह में गेहूं की कटाई के तुरंत बाद बोयी जा सकती है जोकि अगस्त अंत तक या सितम्बर अंत तक तैयार हो जाती है। नाइट्रोजन की अधिक मात्रा न डालें अन्यथा यह मूंगफली की पकने की अवधि बढ़ा देगा। नाइट्रोजन, फॉस्फेट व पोटाश की पूरी मात्रा कूंड़ों में बुआई के समय बीज से करीब 2-3 सें.मी. गहराई में डालनी चाहिए। जिप्सम की शेष आधी मात्रा मूंगफली में फूल निकलते तथा खूंटी बनते समय टॉप ड्रेसिंग करके प्रयोग करना चाहिए।

ग्रीष्मकालीन मूंगफली

बोने से पूर्व बीज को थीरम 2.0 ग्राम और 1.0 ग्राम कार्बेन्डाजिम 50 प्रतिशत धूल के मिश्रण को 2 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज अथवा थायोफिनेट मिथाइल 1.5 ग्राम प्रति किलो बीज अथवा ट्राइकोडर्मा 4 ग्राम + 1 ग्राम कार्बक्सिन प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से शोधित करना चाहिए। इस शोधन के 5-6 घंटे बाद बोने से पहले बीज को मूंगफली के विशिष्ट राइजोबियम कल्चर से उपचारित करें।

सारणी 3 मक्का की उन्नत किस्में और पैदावार

प्रजातियां	उपज (क्विंटल/हैक्टर) छिलका सहित	छिलका सहित लंबाई सें.मी.	छिलका रहित उपज
पूसा अगेती संकर मक्का-2	45.50	5.6	16.18
आजाद कमल	45	4 .5	15.20
प्रकाश	45.50	4 .5	16.18
एच.एम.-4	45.50	7.8	15.20
जी-5414	50.55	7.8	18.20

जायद मक्का

बुआई करें। ऊंचे पर्वतीय क्षेत्रों में अप्रैल के प्रथम सप्ताह तक सूरजमुखी की ई.सी. 68415 प्रजाति की बुआई कर सकते हैं। यह अच्छे जल निकास वाली गहरी दोमट मिट्टी तथा क्षारीय व अम्लीय स्तर को सहन कर सकती है। बीज को 12 घंटे पानी में भिगोकर छाया में 3-4 घंटे सुखाकर बोने से जमाव शीघ्र होता है। बोने से पहले बीज का एप्रोन 35 एसडी की 6.0 ग्राम या कार्बेन्डाजिम की 2 ग्राम अथवा थीरम की 2.5 ग्राम मात्रा से प्रति कि.ग्रा. बीज दर से बीजोपचार अवश्य करें।

- रासायनिक खरपतवार नियंत्रण हेतु पेंडिमैथेलिन 30 प्रतिशत की 3.3 लीटर/हैक्टर की दर से 500-600 लीटर पानी में घोल बनाकर बुआई के बाद एवं अंकुरण से पूर्व अर्थात बुआई के 3-4 दिनों के अंदर छिड़काव करना चाहिए।

ग्रीष्मकालीन मक्का एवं बाजरा

- ग्रीष्मकालीन मक्का की खेती में निराई-गुड़ाई का अधिक महत्व है एवं साथ ही साथ निराई-गुड़ाई द्वारा खरपतवार नियंत्रण के साथ ही ऑक्सीजन का संचार होता है जिससे वह दूर तक फैल कर भोज्य पदार्थ को एकत्र कर पौधों को देती है। पहली निराई जमाव के 15-20 दिनों के बाद कर देनी चाहिए एवं दूसरी निराई 35-40 दिनों बाद करनी चाहिए। खरपतवारनाशी दवा एट्राजीन (50 प्रतिशत डब्ल्यू.सी.) 1.5-2.0 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर घुलनशील चूर्ण का 600-800 लीटर पानी में घोलकर बुआई के दूसरे या तीसरे दिन अंकुरण से पूर्व प्रयोग करने से खरपतवार नष्ट हो जाते हैं। दूसरे खरपतवारनाशी एलाक्लोर (50 ई.सी.) 4-5 लीटर बुआई के तुरन्त बाद अंकुरण के पूर्व

बेबीकॉर्न

इसके बिल्कुल कच्चे भुट्टे बिक जाते हैं, जोकि होटलों में सब्जी, सूप, सलाद व अचार बनाने के काम आते हैं। यह फसल 50-60 दिनों में तैयार हो जाती है

जायद बेबीकॉर्न

और निर्यात भी की जाती है। बेबीकॉर्न की संकर प्रकाश व कम्पोजिट केसरी किस्में के बीज को एक फुट लाइनों में और आठ इंच पौधों में दूरी रखकर बोया जाता है। जायद हेतु बेबीकॉर्न की उन्नत प्रजातियों का चुनाव करें।

600-800 लीटर पानी में मिलाकर भी इसका प्रयोग किया जा सकता है। यदि मक्का के बाद आलू की खेती किसान को करनी हो तो एट्राजीन का प्रयोग न करें। मक्का की फसल में शेष नाइट्रोजन की आधी मात्रा को दो बार खड़ी फसल में टॉप ड्रेसिंग के रूप में प्रयोग करें। आधी मात्रा बुआई के 25 से 30 दिनों बाद शेष फूल आने के समय नाइट्रोजन की मात्रा का प्रयोग करना चाहिए।

- दोमट या बलुई दोमट भूमि बाजरा के लिए अच्छी रहती है। खेत में जल निकास का सही इंतजाम होना चाहिए, क्योंकि यह फसल ज्यादा पानी नहीं सहन कर सकती है। बाजरे की बुआई मार्च के प्रथम सप्ताह से अप्रैल के प्रथम सप्ताह तक की जा सकती है।

कपास की फसल

कपास फसल की बढ़वार के समय 21-27^0 सेल्सियस तापमान व उपयुक्त फलन हेतु दिन में 27 से 32^0 सेल्सियस तापमान सर्वोत्तम है जोकि अप्रैल में मिल जाता है तथा रात्रि में ठंडक का होना आवश्यक है, जोकि सितम्बर-नवम्बर का मौसम है। गेहूं के खेत खाली होते ही कपास की तैयारी शुरू कर दें। पर्याप्त सिंचाई सुविधा उपलब्ध हैं तो कपास की फसल को मई में भी लगाया जा सकता है। कपास की फसल

को मिट्टी अच्छी भुरभुरी तैयार कर लगाना चाहिए। सामान्यत: उन्नत प्रजातियों का 2.5 से 3.0 कि.ग्रा. बीज (रेशाविहीन) तथा संकर एवं बीटी प्रजातियों का 1.0 कि.ग्रा. बीज (रेशाविहीन) प्रति हैक्टर की बुआई के लिए उपयुक्त होता है। उन्नत प्रजातियां 45-60 सें.मी. पर लगायी जाती हैं व संकर एवं बीटी प्रजातियों में कतार से कतार एवं पौधे से पौधे के बीच की दूरी 90-120 सें.मी. एवं 60-90 सें.मी. रखी जाती है।

कपास

बाजरा एक पर परागित फसल है। इसके परागकण 46^0 सेल्सियस तापमान पर भी जीवित रह सकते हैं। 4-5 कि.ग्रा. बीज प्रति हैक्टर की दर सही रहती है। बुआई के वक्त लाइनों की आपसी दूसरी 25 सें.मी. होनी चाहिए, बीजों को 2 सें.मी. से ज्यादा गहरा नहीं बोना चाहिए।

- बाजरे की प्रमुख संकर प्रजातियां-जी.एच.बी.-558 एवं 86, एम.-52 डी.एच.-86, आई.सी.जीएस-44, आई.सी.जीएस-1, आर-9251, टीजी 37, आर-8808, जी.एच.बी.-526, पी.बी.-180, तथा बाजरे की संकुल प्रजातियां जैसे-पूसा कम्पोजिट-383, आई.सी.टी.पी.-8203, राज.-171 व आई.सी.एम.वी.-221 हैं। उर्वरकों का प्रयोग मृदा परीक्षण के आधार पर करें। संकर प्रजातियों के लिए 80 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 40 कि.ग्रा. फॉस्फोरस, 40 कि.ग्रा. पोटाश तथा संकुल प्रजातियों के लिए 60 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 40 कि.ग्रा. फॉस्फोरस, 40 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हैक्टर की दर से प्रयोग करना चाहिए।
- ग्रीष्मकालीन बाजरे की फसल में 4-5 सिचाइयां पर्याप्त होती हैं। 10-15 दिनों के अंतराल से सिंचाई करते रहना चाहिए। कल्ले निकलते समय व फूल आने पर खेत में पर्याप्त मात्रा में नमी होनी चाहिए।
- बेबीकॉर्न की खेती के लिए पर्याप्त जीवांश वाली दोमट भूमि अच्छी होती है। भलीभांति समतल एवं अच्छी जलधारण क्षमता वाली भूमि मक्का की खेती के लिए उपयुक्त होती है। पलेवा करने के बाद मिट्टी पलटने वाले हल से 10-12 सें.मी. गहरी एक जुताई तथा उसके बाद कल्टीवेटर या देसी हल से दो-तीन जुताइयां करके पाटा लगाकर खेत की तैयारी कर लेनी चाहिए।
- कपास की देसी प्रजातियां जैसे-एल.डी.-327, एल.डी.-694, लोहित, आर.जी. 8 व सी.एड. 4 तथा अमेरिकन प्रजातियां जैसे-एच.डी. 107, एच. 777, एच.एस. 45, ए.ए.एच. 1, आर.एस. 810, आर. एस. 2013, एच.एस.-6, विकास तथा संकर एल.एच.-1556, एफ.-1861, एफ.-1378, एल.एम.एच.-144, एफ. -846, लगा सकते हैं।
- बोने से पूर्व बीज को प्रति कि.ग्रा. 2.5 ग्राम कार्बेन्डाजिम या कैप्टॉन दवा से उपचारित करें। इमिडाक्लोप्रिड 7 ग्राम/कि.ग्रा. बीज अथवा कार्बोसल्फॉन 20 ग्राम/कि.ग्रा. बीज उपचारित कर बोने से फसल को 40 से 60 दिनों तक रस चूसक कीड़ों से सुरक्षा मिलती है। दीमक से बचाव के लिए 10 मि.ली. पानी में 10 मि.ली. क्लोरोपाईरीफॉस मिलाकर बीज पर छिड़क दें तथा 30-40 मिनट छाया में सुखाकर बुआई कर दें।
- खाद एवं उर्वरकों का प्रयोग मृदा परीक्षण के आधार पर करनी चाहिए, यदि मृदा में कार्बनिक पदार्थों की कमी हो तो खेत तैयारी के समय आखिरी जुताई में कुछ मात्रा गोबर की सड़ी खाद में मिलाकर प्रयोग करनी चाहिए। इसके साथ-साथ 60 कि.ग्रा. नाइट्रोजन तथा 30 कि.ग्रा. फॉस्फोरस तत्व के रूप में प्रयोग करना चाहिए।

गन्ने की नयी प्रजाति को.-0238

गन्ने की फसल

- गेहूं की कटाई के बाद अप्रैल में भी गन्ना लगा सकते हैं। इसके लिए उपयुक्त किस्म सी.ओ.एच.-35 है। गन्ने में आवश्यकतानुसार फसल की मांग के अनुरूप सिंचाई एवं गुड़ाई करते रहें। जिन खेतों से गन्ने का बीज लेना है, उन खेतों में बीज लेने से 5-7 दिनों पूर्व सिंचाई करें।
- बसंतकालीन गन्ना, जो कि फरवरी में लगा है, में 1/3 नाइट्रोजन की दूसरी किश्त और एक बोरा यूरिया अप्रैल में डाल दें एवं खेत में खाली स्थानों को पोरिया या नर्सरी में उगाएं गए पौधों से भर दें।
- ग्रीष्मकालीन गन्ने की बुआई उत्तर प्रदेश, पंजाब, हरियाणा एवं उत्तराखंड में अप्रैल व मई में की जाती है। गन्ने की बुआई से पूर्व खेतों को अच्छी तरह से समतल कर लें क्योंकि गन्ने की फसल खेत में 2-3 वर्षों तक रहती है। शीघ्र एवं कम अवधि में पकने वाली फसलों जैसे मूंग, उड़द एवं लोबिया को गन्ने की दो पंक्तियों के बीच में बो सकते हैं। बुआई के लिए करीब 35,000-40,000 गन्ने के तीन आंख वाले टुकड़े की आवश्यकता होती है। इसके लिए 5-6 टन गन्ने का बीज पर्याप्त होता है। पंक्ति से पंक्ति की दूरी 75-90 सें.मी. के अंतराल पर 10-15 सें.मी. गहरा कूंड़ डेल्टा हल से बनाकर बोया जाता है। गन्ना कटर प्लांटर के द्वारा केवल 5 मजदूरों की मदद से एक हैक्टर की बुआई कर सकते हैं,जो कि सामान्यत: 30-40 मजदूरों के द्वारा की जाती है। साथ ही इस गन्ना प्लांटर के द्वारा एक दिन में 2 हैक्टर क्षेत्रफल की बुआई कर सकते हैं। बुआई से पूर्व गन्ने के सेट को कवकनाशी जैसे कार्बेन्डाजिम 0.2 प्रतिशत से 15 मिनट तक उपचारित करने से स्मट रोग को रोका जा सकता है। दो आंखों वाली या तीन आंखों वाली पोरियों को 6 प्रतिशत पारायुक्त ऐमीसान या 0.25 प्रतिशत मेंकोजैब के 100 लीटर पानी के घोल में 4-5 मिनट तक डुबोकर लगाएं। गन्ने में 150-180 कि.ग्रा./हैक्टर नाइट्रोजन, 80 कि.ग्रा./हैक्टर फॉस्फोरस, 60 कि.ग्रा./हैक्टर पोटाश प्रयोग करना लाभप्रद होता है। उर्वरक प्रबंधन मृदा परीक्षण के आधार पर ही करना चाहिए।

चारे की फसल

- इसकी खेती दोमट या बलुई और हल्की काली मिट्‌टी में की जाती है। भूमि का जल निकास अच्छा होना चाहिए। एक जुताई मिट्‌टी पलटने वाले हल से तथा 2-3 जुताइयां देसी हल या कल्टीवेटर से करनी चाहिए।
- ज्वार की प्रमुख प्रजातियां जैसे-पूसा चरी-23, पूसा हाइब्रिड चरी-109, पूसा चरी-615, पूसा चरी-6, पूसा चरी-9, पूसा शंकर-6, एस.एस.जी. 59-3 (मीठी सूडान), एम.पी.चरी, एस.एस. जी.-988-898, एस.एस.जी.-59-3, जे.सी.-69, सी.एस.एच.-20-एमजी,

चारे वाली ज्वार

हरियाणा ज्वार-513 आदि प्रमुख हैं, जो इस समय लगायी जा सकती हैं। ज्वार की इन किस्मों से 30-60 टन/हैक्टर तक हरे चारे की प्राप्ति होती है। बहुकटाई वाली किस्में जैसे मीठी सूडान, एम.पी. चरी, पूसा चरी 23, जवाहर चरी 69 से 60 टन/हैक्टर तक हरे चारे की पैदावार ली जा सकती है।

- हरे चारे के लिए संकर बाजरा या कम्पोजिट बाजरा तथा जाइंट बाजरा, राज 171, एल.-72 एवं एल.-74 आदि प्रमुख प्रजातियां हैं। 8-10 कि.ग्रा./हैक्टर बीज शुद्ध फसल की बुआई के लिए पर्याप्त होता है। मिलवां फसल में बाजरा तथा लोबिया 2:1 अनुपात (2 लाइन बाजरा तथा 1 लाइन लोबिया) में बुआई के लिए 6-7 कि.ग्रा. बाजरा तथा 12-15 कि.ग्रा. लोबिया बीज की आवश्यकता होती है। 2.5 ग्राम थीरम/ कि.ग्रा. बीज की दर से बीज उपचारित करें। बाजरा के लिए 60 कि.ग्रा. नाइट्रोजन एवं 40 कि.ग्रा. फॉस्फोरस प्रति हैक्टर की आवश्यकता होती है।
- चारे के लिए लोबिया की प्रमुख प्रजातियां जैसे-बुन्देल लोबिया, सी-20, सी-30-558, सीओ.-5, ई.सी. -4216, रशियन जायंट, एचएफसी 42-1, यूपीसी-5286, यूपीसी-5287, यूपीसी-287, एनपी-3 हैं। अच्छी प्रकार खेत तैयार कर इसकी बुआई 40 कि.ग्रा. बीज/हैक्टर की दर से करते हैं। बुआई के लिए पंक्ति से पंक्ति की दूरी 25-30 सें.मी. एवं पौधे से पौधे की दूरी 15 सें.मी. रखनी चाहिए। लोबिया की कटाई बुआई के 50-55 दिनों बाद करते हैं।

चारे वाला लोबिया

- दीमक की समस्या ज्यादा हो तो वहां अंतिम जुताई पर क्विनॉलफॉस (1.5 प्रतिशत) की 25 कि.ग्रा. मात्रा का प्रति हैक्टर प्रयोग करनी चाहिए।
- बरसीम में 10-12 दिनों के अंतराल पर सिंचाई एवं कटाई करते रहें। यदि बरसीम की फसलें बीज उत्पादन के लिए उगाई गयी हैं तो मार्च के बाद कटाई नहीं करनी चाहिए। फूल आ जाने पर बीज वाली फसल में सिंचाई नहीं करनी चाहिए। यानी अप्रैल के प्रथम सप्ताह के बाद सिंचाई बंद कर देनी चाहिए। 10-15 मई तक फसल पककर तैयार हो जाती है।
- ग्रीष्मकाल में पशुओं के लिए चारे की कमी अधिकतर ग्रामीण क्षेत्रों में एक आम समस्या है। इसके समाधान के लिए गर्मी के मौसम में अप्रैल में जहां सिंचाई की व्यवस्था है वहां पर हरे चारे की खेती कर सकते हैं। इस समय प्रमुख हरे चारे में मक्का, लोबिया, ज्वार आदि फसलों की उत्तम किस्मों को सुझाई गयी सस्य क्रियाओं को अपनाकर उगाना चाहिए।

मेंथा फसल की देखभाल

- मेंथा में 10-12 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करते रहें तथा तेल निकालने हेतु मेंथा में पहली कटाई करें।

मक्का चारा

मक्का की हरे चारे हेतु विजय कम्पोजिट, जे-1006, प्रताप चारा-6 तथा संकर मक्का गंगा-2, गंगा-7 प्रमुख उन्नत प्रजातियां हैं। मक्का एवं ज्वार की मिश्रित फसल लोबिया और ग्वार के साथ उगानी चाहिए। इससे चारे की पौष्टिकता एवं स्वाद बढ़ता है तथा मृदा की उर्वराशक्ति में भी सुधार होता है। 50-60 कि.ग्रा./हैक्टर बीज शुद्ध फसल की बुआई के लिए पर्याप्त होता है। मक्का या ज्वार के साथ मिलाकर बुआई के लिए 15-20 कि.ग्रा. बीज प्रयोग करना चाहिए। 2.5 ग्राम थीरम/ कि.ग्रा. बीज की दर से बीज उपचारित करें। संकर तथा संकुल किस्मों में 120 कि.ग्रा. तथा देशी प्रजातियों में 80 कि.ग्रा. नाइट्रोजन एवं 60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस, 60 कि.ग्रा. पोटाश/ हैक्टर की आवश्यकता होती है।

मृदा परीक्षण

- रबी फसल की कटाई के बाद किसान अपने खेतों से मृदा नमूने इकट्ठे करें। तत्पश्चात मिट्टी के नमूने लेकर अपने नजदीक की मृदा परीक्षण प्रयोगशाला में मृदा के नमूनों की जांच कराएं तथा प्रयोगशाला से नमूनों की जांच के उपरान्त मृदा स्वास्थ्य कार्ड अवश्य प्राप्त करें। आगामी खरीफ की फसल में मृदा स्वास्थ्य के आधार पर खाद एवं उर्वरकों का प्रयोग किया जा सके।

भिण्डी

भिण्डी की उन्नत प्रजातियों में आजाद भिण्डी 1, आजाद भिण्डी 2, आजाद भिण्डी 3, आजाद भिण्डी 4, परभनी क्रांति, वर्षा उपहार, पूसा ए-4, पूसा ए-5, अर्का अनामिका एवं अर्का अभय प्रमुख हैं। भिण्डी की फसल में 35-40 कि.ग्रा. नाइट्रोजन की टॉप

ड्रेसिंग बुआई के 30 दिनों बाद व शेष एक तिहाई मात्रा की दूसरी टॉप ड्रेसिंग बुआई के 45-50 दिनों बाद करें। फूल एवं फल आने की स्थिति में भिण्डी में तनाबेधक और फलबेधक कीट लगते हैं। इसके लिए कार्बोसल्फॉन 25 ई.सी. 1.5 लीटर 800-1000 लीटर पानी में घोलकर/हैक्टर प्रत्येक 10 से 15 दिनों के अंतराल छिड़काव करते रहना चाहिए, लेकिन यह ध्यान रखें जब इसका छिड़काव करें, इसके पूर्व भिण्डी की तुड़ाई कर लेना चाहिए। साथ ही भिण्डी में येलो मोजेक पीला रोग का नियंत्रण आवश्यक है, जिससे कि फल पत्तियां और पेड़ पीले पड़ जाते हैं। इसके नियंत्रण हेतु रोगरहित प्रजातियां का प्रयोग करना चाहिए या मेलाथियान 50 ई.सी. को 1.0 लीटर को 800-1000 लीटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टर की दर से हर 10 से 15 दिनों के अंतराल पर छिड़काव करते रहना चाहिए, जिससे यह रोग उत्पन्न ही नहीं होता है।

हरी मिर्च

सब्जी वाली फसलों का उत्पादन एवं प्रबंधन

- चौलाई की फसल अप्रैल में लग सकती है, जिसके लिए पूसा कीर्ति व पूसा किरण 500-600 कि.ग्रा. पैदावार देती है। 700 ग्राम बीज को लाइनों में 6 इंच और पौधों में एक इंच दूरी पर आधी इंच से गहरा न लगाएं। बुआई पर 10 टन कम्पोस्ट, आधा बोरा यूरिया और 2.7 बोरा सिंगल सुपर फॉस्फेट डालें।
- हरी मिर्च में रोपाई के 25-30 दिनों बाद प्रति हैक्टर 35-40 कि.ग्रा. नाइट्रोजन की पहली टॉप ड्रेसिंग व रोपाई के 45 दिनों बाद इतनी ही यूरिया की दूसरी टॉप ड्रेसिंग करें। फसल की निराई-गुड़ाई करें तथा उचित समय पर सिंचाई कर दें।
- आलू अधिक ऊंचाई वाले पहाड़ी क्षेत्रों में आलू अप्रैल के पहले पखवाड़े में लगा सकते हैं। इसके लिए झुलसा रोग-रोधक कुफरी ज्योति प्रजाति का रोगरहित बीज लें। आलू अच्छे जल निकास वाले भूमि में बुआई के लिए ढलान के विपरीत 10 इंच दूरी पर नालियां बनाएं तथा 10 टन गोबर की खाद, 1 बोरा यूरिया, 5 बोरे सिंगल सुपर फॉस्फेट तथा 1 बोरा पोटेशियम सल्फेट डालकर मिट्टी से ढक दें। आलू के बीज के मध्यम आकार के 10-12 क्विंटल 2-3 आंख वाले टुकड़ों को 0.25 प्रतिशत एमिसान-6 के घोल में 6 घंटे तक डुबोकर 8-10 इंच दूरी पर लगाकर मिट्टी से ढक दें। दीमक, कटुआ व सफेद सूंडी के नियंत्रण के लिए बुआई के समय 1 लीटर क्लोरोपाइरीफॉस 35 ई.सी. को 10 कि.ग्रा. रेत में मिलाकर छिड़काव कर दें।
- खरपतवार नियंत्रण के लिए बुआई के 48 घंटे के अंदर 500 ग्राम आइसोप्रोटान 75 प्रतिशत पाउडर 250-300 लीटर पानी में घोलकर खेत पर छिड़काव कर दें। रोगग्रस्त पौधों को निकालते रहें तथा निराई-गुड़ाई करके पौधों पर मिट्टी चढ़ा दें।

गाजर

- तैयार हो चुके प्याज व लहसुन की खुदाई करें। खोदने के वाद फसल को तीन दिनों तक खेत में ही पड़ा रहने दें। तीन दिनों बाद लहसुन व प्याज को छाया में सुखाएं और फिर सही तरीके से भंडारण करें। खुदाई के 10-12 दिनों पहले सिंचाई बन्द कर दें।
- गाजर व मूली की बीज वाली फसल कटाई के लिए तैयार हो गई हो तो उसकी कटाई करें। फसल को पूरी तरह सुखाकर ही बीज निकालें। निकले बीजों को ठीक से सुखाने के बाद पैकिंग करके भंडारण करें।
- इस महीने में कद्दूवर्गीय फसलें जैसे तोरई, कद्दू, लौकी, तरबूज, खरबूज, खीरा, ककड़ी प्रमुख सब्जी वाली फसलों की बुआई करते हैं। इन फसलों की बुआई के लिए अच्छी प्रकार से पलेवा कर खेत की तैयारी करनी चाहिए और बुआई के लिए आवश्यक सस्य क्रियाओं को अपनाना चाहिए। बुआई से पूर्व बीज को 2 ग्राम कार्बेन्डाजिम/कि.ग्रा. बीज, साथ ही ट्राइकोडर्मा 4 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करना चाहिए।

प्याज

- लौकी व करेला की जनवरी-फरवरी के दौरान नर्सरी में तैयार की गयी पौध की रोपाई करें। लौकी के पौदों की रोपाई 200×100 सें.मी. की दूरी पर करें, जबकि करेले के पौदों की रोपाई 150×60 सें.मी. की दूरी पर करें।
- कद्दूवर्गीय सब्जी की नर्सरी फरवरी में तैयार कर मार्च-अप्रैल में पौद की रोपाई कर देनी चाहिए। कद्दूवर्गीय सब्जियों में 5-6 दिनों के अंतराल पर छिड़काव करते रहें। फसल कमजोर होने की स्थिति में आवश्यकतानुसार यूरिया की टॉप ड्रेसिंग कर दें। ध्यान रहे कि यूरिया उर्वरक पत्तियों पर नहीं पड़ना चाहिए अन्यथा पत्तियां जल जायेंगी। कद्दूवर्गीय सब्जियों में लाल भृंग कीट की रोकथाम के लिए सुबह ओस पड़ने के समय राख का बुरकाव करने से कीट पौधों पर नहीं बैठते हैं। इस कीट का प्रकोप होने पर कार्बरिल 5 प्रतिशत या मैलाथियान चूर्ण 5 प्रतिशत के 25 कि.ग्रा. चूर्ण को राख में मिलाकर सुबह पौधों पर छिड़काव करें या सेविन नामक रसायन के 0.2 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें।
- अदरक व हल्दी की बुआई इस माह में प्रारंभ कर दें। अदरक की बुआई के लिए 18 क्विंटल बीज/हैक्टर एवं 30-40 सें.मी. फासले पर मेड़ बनाकर 20 सें.मी. फासले पर करें। हल्दी के लिए 15-20 क्विंटल एवं सूरन के लिए 75 क्विंटल बीज/हैक्टर पर्याप्त होता है। बुआई से पूर्व हल्दी व अदरक के बीज को 0.3 प्रतिशत कॉपर ऑक्सीक्लोराइड के घोल से उपचारित कर लें। सूरन के बीज को 2 प्रतिशत तुतियां/नीला थोथा या 0.2 प्रतिशत बाविस्टीन से उपचारित करें। सूरन, अदरक व हल्दी की बुआई करने के बाद खेत को सूखी पुआल/सूखी पत्तियों की पलवार से ढक दें। इससे खेत में खरपतवार का जमाव नहीं होता, नमी संरक्षित रहने से फसल का जमाव में भी वृद्धि होगी तथा साथ ही इनके सड़ने से खेत में जीवांश या कार्बनिक पदार्थ की मात्रा में भी बढ़ोतरी होती है।
- फूलगोभी की बीज वाली फसल कटाई हेतु तैयार हो तो कटाई का काम करें। कटाई के बाद फसल सुखाकर बीज निकालें। बीजों को अच्छी तरह पैक करके उन का भंडारण करें।
- टमाटर की फसल में आवश्यकतानुसार सिंचाई एवं गुड़ाई करते रहें। टमाटर

मूली

बैंगन

नर्सरी तैयार करने के लिए लो टनल पॉली हाउस से अच्छी गुणवत्ता की पौद तैयार कर सकते हैं। वर्षाकालीन बैंगन की फसल के लिए नर्सरी में बीज की बुआई भी कर सकते हैं। वर्षाकालीन बैंगन की नर्सरी यदि तैयार हो तो उसकी रोपाई 75-90×60 सें.मी. की दूरी पर

करें, जहां तक संभव हो, रोपाई शाम के समय करें तथा रोपाई के तुरन्त बाद हल्की सिंचाई कर दें। ग्रीष्मकालीन बैंगन में रोपाई के 30 दिनों बाद प्रति हैक्टर 50 कि.ग्रा. नाइट्रोजन की पहली टॉप ड्रेसिंग व इतनी ही मात्रा की दूसरी टॉप ड्रेसिंग रोपाई के 45-50 दिनों बाद कर दें। बैंगन में तना और फलीबेधक कीटों से बचाव के लिए कार्बोसल्फान 25 ई.सी. 1.5 लीटर/हैक्टर की दर से 500-600 लीटर पानी में घोल कर प्रत्येक 10-15 दिनों के अंतराल पर छिड़काव करते रहना चाहिए। नीमगिरी 4 प्रतिशत का छिड़काव 10 दिनों के अंतराल पर करने से अच्छा परिणाम मिलता है।

लौकी

लौकी की किस्म पूसा संतुष्टि 55-60 दिनों में पक जाती है और इससे करीब 25-30 टन/हैक्टर पैदावार मिल जाती है। पूसा संकर 3 किस्म की औसतन 42 टन/हैक्टर तक पैदावार होती है और इसकी प्रथम कटाई 55-60 दिनों में होती है। करेले की उन्नत किस्मों में पूसा संकर 1, पूसा संकर 2 और पूसा विशेष प्रमुख हैं। इनकी बुआई 5-6 कि.ग्रा. बीज/हैक्टर की दर से करतें है। कद्दूवर्गीय सब्जियों में

समेकित पोषक तत्व प्रबंध करना चाहिए। इसके लिए 200-250 क्विंटल सड़ी गोबर की खाद या कम्पोस्ट/हैक्टर की दर से खेत की आखिरी जुताई के समय अच्छी तरह से मिला देनी चाहिए। इसके लिए 120 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 100 कि.ग्रा. फॉस्फोरस और 80 कि.ग्रा. पोटाश तत्व के रूप में देनी चाहिए। नाइट्रोजन की आधी मात्रा तथा फॉस्फोरस एवं पोटाश की पूरी मात्रा आखिरी जुताई के समय मिला देनी चाहिए। नाइट्रोजन की शेष आधी मात्रा खड़ी फसल में दो बार में प्रयोग करते हैं, जिससे कि लगातार फसल की अच्छी पैदावार मिल सके।

करेला

की फसल में बहुत से रोग और कीट लगते हैं जैसे कि अर्धगलन, डंपिंग ऑफ आदि। इस रोग में पौधे गलने लगते हैं। इसके नियंत्रण के लिए बुआई से पहले बीज को उपचारित कर लेना

कद्दू

चाहिए। इंडोफिल एम-45 की 2 ग्राम मात्रा/लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए। मोजैक एवं विषाणु रोग में पत्तियां सिकुड़ जाती हैं और पौधे की वृद्धि रुक जाती है। नियंत्रण हेतु सिकुड़ी पत्तियों को उखाड़कर जला देना चाहिए। फसल पर 2 ग्राम मोनोक्रोटोफॉस का छिड़काव करते रहना चाहिए, जिससे कि यह रोग और न फैले तथा पैदावार अच्छी मिल सके। पत्ती, तना एवं फलबेधक कीट की रोकथाम के लिए मैलाथियान 50 ई.सी. की 1-1.25 लीटर दवा 500-600 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करना चाहिए। ध्यान रहे कि फलों की तुड़ाई छिड़काव के 4-5 दिनों बाद करनी चाहिए।

- अप्रैल की शुरुआत में तोरई की नर्सरी लगा सकते हैं। इस बीच फरवरी व मार्च में लगाई गई नर्सरी की तैयार पौध की रोपाई 100×50 सें.मी. फासला रखते हुए करें व रोपाई के बाद हल्की सिंचाई करें।
- अरबी की अगेती प्रजातियां लगाने का इरादा हो तो इसी महीने उन की बुआई करें।
- नियंत्रित स्थिति में ग्रीनहाउस में खीरे की वर्षभर पौद तैयार की जा सकती है। गर्मी के मौसम में इस विधि से पौद 15-18 दिनों में रोपाई योग्य हो जाती है। अंकुरण के तुरन्त बाद उनको

फूलगोभी पूसा स्नोबाल के.-25

पॉलीहाउस में फैला दिया जाना चाहिए। इस प्रकार पौद में जड़ों का विकास बहुत अच्छा होता है तथा जड़ माध्यम के चारों ओर लिपट जाती है। इससे उन्हें ट्रे से निकालने पर जड़ों को कोई नुकसान भी नहीं होता है। बेल वाली सब्जियां जड़ों में कोई नुकसान सहन नहीं कर सकती हैं। अतः उनकी पौद तैयार करने का यह एक मात्र उपयुक्त उपाय व साधन है।

अदरक

- खीरे के पौधों को एक प्लास्टिक की रस्सी के सहारे लपेटकर ऊपर की ओर चढ़ाया जाता है। इस प्रक्रिया से प्लास्टिक की रस्सियों को एक सिरे की पौधों के आधार से तथा दूसरे सिरे को ग्रीनहाउस में क्यारियों के ऊपर 9-10 फुट ऊंचाई पर बंधे लोहे के तारों पर बांध देते हैं। अंत में जब पौधा उस

टमाटर

तार के बराबर हो जाये, जिस तार पर रस्सी का दूसरा सिरा बंधा होता है, तो पौधो को नीचे की ओर चलने दिया जाता है। साथ-साथ विभिन्न दिशाओं से निकली शाखाओं की निरन्तर काट-छांट करनी चाहिए। मोनोशियस किस्मों में मादा फूल मुख्य शाखा से निकली द्वितीय शाखाओं पर ही आते हैं। अतः उनकी कटाई नहीं की जाती है, अन्यथा उपज में भारी कमी होती हैं। कटाई-छंटाई करते समय इस बात का अवश्य ध्यान रखें कि हमने किस किस्म को उगाया है।

- पौधों की उर्वरक व जल की मात्रा मौसम एवं जलवायु पर निर्भर करती है। आमतौर पर पानी 2.0 से 2.5 घन मीटर प्रति 1000 वर्ग मीटर की दर से गर्मी में 2 से 3 दिनों के अंतराल पर दिया जाता है। गर्मी में फसल में जल की मात्रा फल आने की अवस्था में 3 से 4 घन मीटर तक बढ़ा दी जाती है। उर्वरक पानी के साथ मिलाकर ड्रिप सिंचाई प्रणाली द्वारा दिये जाते हैं। नाइट्रोजन 80-100 पी.पी.एम., फॉस्फोरस 60-70 पी.पी.एम तथा पोटाश 100-120 पी.पी.एम. तक दिये जाते हैं। इनकी मात्रा को फसल की अवस्था, भूमि के प्रकार व मौसम के अनुसार घटाया व बढ़ाया जा सकता है।
- ग्रीष्मकालीन फसल की अवधि 2.5 से 3.0 तक होती है। इस प्रकार के खीरे को 8 से 10 सें.मी. लंबाई व कम मोटाई में तोड़कर ग्रेडिंग करके उच्च बाजार में अधिक भाव पर बेचा जा सकता है। इस प्रकार की किस्मों को बहुत कम लागत वाले ग्रीनहाउस में भी सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है।

बागवानी फसलों का उत्पादन एवं प्रबंधन

- **आमः** फलों को गिरने से बचाने के लिए यूरिया के दो प्रतिशत घोल से पेड़ पर छिड़काव करें। मिलीबग कीट नई कोपलों, फूलों व फलों का रस चूसकर काफी नुकसान करती हैं। नियंत्रण के लिए 700 मि.ली. मिथाईल पैराथियान 70 ई.सी. को 700 लीटर पानी में छिड़कें तथा नीचे गिरी या पेड़ों पर चढ़ रह कीटों को इकट्ठा करके जला दें और घास साफ रखें। यदि तेला (हॉपर) फूल पर नजर आये तो 700 मि.ली. मैलाथियान 70 ई.सी. 700 लीटर पानी में छिड़कें। आम में फुदका कीट से बचाव के लिए इमिडाक्लोरोपिड 0.3 मि.ली./लीटर पानी में घोलकर प्रथम छिड़काव फूल खिलने से पहले करते है। कार्बरिल 4 ग्राम/लीटर का दूसरा छिड़काव फल मटर के दाने के बराबर हो जाये, तब करना चाहिए। आम की मक्खी के नियंत्रण के लिए मिथाईलयूजिनाल ट्रैप का प्रयोग करना चहिये।

आम

आंवला

नवरोपित आंवला के बागों में गर्मियों में 10-12 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करते रहना चाहिए। पौधों के बड़े हो जाने पर बागों में मई-जून में एक बार पानी देना आवश्यक है। फूल आते समय बागों में किसी भी तरह से पानी नहीं देना चाहिए। शुरू में आंवला के बगीचों में बीच की जगह में कोई फसल ली जा सकती है। सिंचाई के बाद निराई-गुड़ाई करना अति आवश्यक रहता है, जिससे भूमि मुलायम रहे तथा खरपतवार न उग सकें। पेड़ बड़े होने पर गुड़ाई करनी चाहिए और घास एवं खरपतवार से साफ रखना चाहिए। आंवला में शूटगॉल मेकर/छाल वाले कीट प्रमुख हैं। इनके नियंत्रण हेतु मेटासिसटॉक्स या डाइमिथोएट तथा 10 भाग मिट्टी का तेल मिलाकर रूई भिगोकर तने के छिद्रों में डालकर चिकनी मिट्टी से बन्द कर देना चाहिए।

- आम, अमरूद, अंगूर, बेर, नीबू एवं पपीता उत्पादन में सिंचाई पर ध्यान देना अति आवश्यक है। गर्मियों में 7-8 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करनी चाहिए, लेकिन बड़ होने पर आवश्यकतानुसार सिंचाई करनी चाहिए। आम के बागों में एक वर्ष के वृक्ष के लिए 50 ग्राम नाइट्रोजन, 25 ग्राम फॉस्फोरस और 50 ग्राम पोटाश का प्रयोग करें। क्रमशः बढ़ाकर 10 वर्ष या उससे अधिक आयु के वृक्षों के लिए प्रति वृक्ष 500 ग्राम नाइट्रोजन, 250 ग्राम फॉस्फोरस और 500 ग्राम पोटाश देनी चाहिए। आम के गुच्छा रोग या मॉलफारमेशन से ग्रस्त बौर की तुड़ाई कर दें। आम के फलों को गिरने से बचाने के लिए नैफ्थलीन एसिटिक एसिड 20 मि.ग्रा./लीटर या प्लेनोफिक्स 5 मि.ली./10 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें। पहला छिड़काव फल बनने पर तथा दूसरा छिड़काव उसके 15 दिनों के अंतर पर करें। आम में ऊतक क्षय रोग के नियंत्रण के लिए 10 ग्राम/लीटर (1 प्रतिशत) बोरेक्स का छिड़काव करें।

अमरूद

- **अमरूदः** अप्रैल में सिंचाई न करें, फूलों को तोड़ दें ताकि फल मक्खी फूलों में अण्डे न दें पाये, जिससे फल सड़ जाते हैं। अमरूद की सिर्फ शरदकालीन फसल ही लेनी चाहिए।
- अमरूद में उकठा तथा काला वर्ण फल गलन या टहनी मार रोग नियंत्रण के लिए खेत साफ-सुथरा रखना चाहिए। अधिक सिंचाई नहीं करनी चाहिए एवं जैविक खादों का प्रयोग करना चाहिए। रोगग्रस्त डालियों को काटकर 0.3 प्रतिशत कॉपर ऑक्सीक्लोराइड के घोल

अंगूर

का छिड़काव दो या तीन 15 दिनों के अंतराल पर करना चाहिए।

- **पपीताः** अप्रैल में पपीते की नर्सरी लगाने के लिए 70 वर्ग मीटर में 170 बीज को 6×6 इंच की दूरी और एक इंच गहरा लगाएं। उन्नत किस्मों में सनराइज, हनीड्यू, पूसा डिलीशियस, पूसा ड्वार्फ व पूसा जायंट हैं। एक

पपीता

नर्सरी में एक क्विंटल खाद मिलाकर बेड तैयार करें। बीज को एक ग्राम कैप्टॉन से उपचारित करें। पपीते की रोपाई यदि मई में की गयी है तो अगले साल अप्रैल में फल आने लगते हैं। पपीते के लिए सिंचाई का उचित प्रबंध होना आवश्यक है। गर्मियों में 6-7 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करनी चाहिए। सिंचाई का पानी पौधे के सीधे संपर्क में नहीं आना चाहिए। पपीते में मोजैक, लीफ कर्ल, रिंगस्पॉट, जड़ एवं तना सड़न, एंथ्रेक्नोज एवं कली तथा पुष्प वृंत का सड़ना आदि रोग लगते हैं। इनके नियंत्रण के लिए पेड़ों पर सड़न/गलन को निकालकर बोर्डो मिक्स्चर 5:5:20 के अनुपात से छिड़काव करना चाहिए। साथ ही डाइथेन एम-45, 2-2.5 ग्राम/लीटर पानी में अथवा मैन्कोजेब या जिनेब 0.2-0.25 प्रतिशत का घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

- नीबू में एक वर्ष के पौधे के लिए दो कि.ग्रा. कम्पोस्ट और 70 ग्राम यूरिया प्रति पौधा दें। अप्रैल में नीबू का सिल्ला, लीफ माइनर और सफेद मक्खी के नियंत्रण के लिए 300 मि.ली. मैलाथियान 70 ई.सी. को 700 लीटर पानी में घोलकर छिड़कें। तने व फलों के गलने से संबंधित रोग के लिए बोर्डो मिश्रण का छिड़काव करें। जस्ते की कमी के लिए तीन कि.ग्रा. जिंक सल्फेट को 1.7 कि.ग्रा. बुझा हुआ चूना के साथ 500 लीटर में घोलकर छिड़कें। नीबूवर्गीय पौधों में सूक्ष्म तत्वों का छिड़काव करें। फलों को फटने से बचाने के लिए 100 मि.ग्रा. जिब्रेलिक एसिड प्रति 10 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।
- केले में प्रति पौधा 25 ग्राम नाइट्रोजन, 25 ग्राम फॉस्फोरस और 100 ग्राम पोटाश मृदा में गुड़ाई कर मिला दें। केले के पौधों में चारों ओर से निकलते हुए सकर्स को निकाल दिया जाता है।
- अंगूर में एक वर्ष के पौधे के लिए 50 ग्राम नाइट्रोजन, 40 ग्राम पोटाश जिसे क्रमशः बढ़ाकर 5 वर्ष या इससे अधिक आयु की उम्र में 250 ग्राम नाइट्रोजन, 200 ग्राम पोटाश का प्रयोग करें।
- लीची के बागों में आवश्यकतानुसार सिंचाई करते रहें। लीची-100 ग्राम यूरिया प्रति पेड़ प्रति वर्ष आयु की दर से डालें। लीची में फलछेदक की रोकथाम के लिए डाइक्लोरोवास 5 मि.ली. (70 ई.सी. न्यूवान) 10 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।

पुष्प व सुगंध वाले पौधों का प्रबंधन

- रजनीगंधा में एक सप्ताह के अंतराल पर सिंचाई व दो सप्ताह के अंतराल पर गुड़ाई करें।
- ग्लेडियोलस के कंदों की खुदाई से 15 दिनों पूर्व सिंचाई बन्द कर दें और स्पाइक काटने के 40-45 दिनों बाद घनकंदों (कार्म) की खुदाई करें। कार्म को सड़न रोग से बचाने हेतु 0.2 प्रतिशत मैन्कोजेब पाउडर से उपचारित करके शीतग्रह में भंडारण कर दें।

रजनीगंधा

ग्लेडियोलस

- गुलाब की फसल में आवश्यकतानुसार सिंचाई व निराई-गुड़ाई करें।
- गेंदे की फसल में एफिड कैटरपिलर तथा माइट्स का प्रकोप होता है, जिसका निराकरण करने के लिए 0.2

गुलाब

प्रतिशत मेटासिस्टाक्स या 0.25 प्रतिशत केराथेन या 0.2 प्रतिशत रोगोर का छिड़काव प्रत्येक सप्ताह बाद कम से कम दो बार करना चाहिए।

भाकृअनुप-भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

भाकृअनुप-भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान (आईआईएसआर), देश के सबसे बड़े गन्ना उत्पादक राज्य उत्तर प्रदेश की राजधानी लखनऊ में स्थित है। इसकी स्थापना गन्ना में उन्नत अनुसंधान करने के लिये भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के तत्वावधान में कृषि मंत्रालय द्वारा की गयी थी। वर्ष 1952 में तत्कालीन भारतीय केन्द्रीय गन्ना समिति द्वारा गन्ने की खेती के विभिन्न पहलुओं पर शोध करने के लिए यह संस्थान स्थापित किया गया था। इस संस्थान की स्थापना का एक उद्देश्य देश के विभिन्न राज्यों में गन्ने की फसल पर किए जाने वाले अनुसंधान कार्यों को समन्वित करना भी था।

वर्ष 1929 में भारत के विभिन्न राज्यों के बीच अनुसंधान से संबंधित कोई समन्वयन नहीं था। उस समय की इम्पीरियल कृषि अनुसंधान परिषद की गन्ना समिति ने इस कमी को चिन्हित किया और पूरे देश में सात अनुसंधान शृंखला, जो कि गन्ने के सुधार के लिए समर्पित थे, को स्थापित किया।

इस संस्थानने गन्ना उपज बढ़ाने के लिए कई प्रजातियों को विकसित किया है, जिसमें शीघ्र पकने वाली कोलख-94184 बीरेन्द्र और कोलख-9709 प्रमुख हैं। यह संस्थान उन राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय संस्थानों के साथ संबंधों को मजबूत बनाने व विकसित करने के लिए प्रतिबद्ध है, जो गन्ना अनुसंधान और विकास में तथा अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान परियोजना (गन्ना) को मजबूत बनाने में कार्यरत हैं।

संस्थान, चीनी मिलों की गुणवत्तायुक्त बीज की आवश्यकता को पूरा करने के लिए बड़े पैमाने पर गन्ने के बीज का उत्पादन और फसल उत्पादकता बढ़ाने लिए काम कर रहा है। संस्थान गन्ने की खेती के विभिन्न पहलुओं से संबंधित जानकारी और परामर्श भी किसानों को प्रदान करता है। इसके अलावा समय-समय पर किसानों को प्रशिक्षण भी देता है।

संस्थान में मृदा, जल तथा पौधों के तैयार नमूनों की जांच सुविधा तय दरों पर प्रदान की जाती है। बड़ी संख्या में गन्ना किसान इस सुविधा का लाभ भी उठाते हैं। संस्थान ने बौद्धिक सम्पदा अधिकार (आईपीआर) के अंतर्गत अपने पांच नवाचारों का पेटेंट दायर किया है, जिसमें गन्ना बोने की मशीन (सीडर-कटर प्लांटर), पेड़ी प्रबंधन उपकरण (आरएमडी), गाइडर के साथ शून्य जुताई, सुक्रोज घाटे को कम करने के लिए गन्ने के भंडारण का एक उन्नतशील तरीका, गुड़ और खांडसारी बनाने की भट्टियों हेतु संशोधित ऊष्मा उपयोग विधि, कड़ाही के द्वारा गुड़ एवं खांडसारी बनाने की भट्टियों में ऊष्मा उपयोगिता को बढ़ाने हेतु विकसित तकनीक और गन्ना बोने की 'केन-नोड प्रौद्योगिकी' शामिल है।

गन्ने की खेती में मानव श्रम को कम करने और इसके यंत्रीकरण में भी इस संस्थान का बड़ा योगदान है। रिजर टाईप शुगनकेन कटर-प्लान्टर, तीन पंक्ति गन्ना कटर प्लान्टर, जुड़वां पंक्ति गन्ना कटर प्लान्टर, रेज्ड बैड सीडर, रेज्ड बैड सीडर कम शुगरकेन कटर प्लान्टर और पेड़ी प्रबंधन यंत्र जैसी मशीनों को संस्थान द्वारा विकसित किया गया है। संस्थान का क्षेत्रीय केन्द्र बिहार के मुजफ्फरपुर जिले में मोतीपुर नामक स्थान पर स्थित है। देश के मध्य-पूर्वी क्षेत्र में गन्ने की खेती की समस्याओं का समाधान करने के लिए यह केन्द्र कार्यरत है। ■

संस्थान की प्रमुख उपलब्धियां

भाकृअनुप-भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ द्वारा गन्ने मे समेकित खरपतवार प्रबन्धन पर एक प्रभावी तकनीक का विकास किया गया है, जिसके अपनाने से कम खर्च में ही गन्ने की अच्छी उपज मिल जाती है। इस तकनीक को लोकप्रिय बनाने के लिए 'संस्थान-ग्राम सम्पर्क कार्यक्रम' के अन्तर्गत चयनित किसानों से विचार-विमर्श किया गया। समेकित खरपतवार नियंत्रण में रसायनों के प्रयोग के साथ केवल एक गुड़ाई करनी होती है, जो सामान्यत: प्रचलित तीन गुड़ाइयों की तुलना में कम है इससे लागत घटती है और गन्ने की उपज में कोई कमी नही आती है।

संस्थान के टिकाऊ प्रयासों ने उत्तर प्रदेश के चीनी सेक्टर में अतुलनीय सफलता हासिल करने में उल्लेखनीय योगदान दिया है। प्रतिवर्ष नई गन्ना किस्मों का 2000 टन प्रजनक बीज उत्पन्न किया गया और नर्सरियों में इसका बहुगुणन किया गया।

विभिन्न प्रकार के गन्ना प्लान्टर्स को व्यापक पैमाने पर अपनाने से किसानों को समय से गन्ना रोपाई कार्य पूरा करने में मदद मिली और साथ ही इससे 8 से 10 प्रतिशत तक उपज वृद्धि हासिल करने में भी सफलता मिली। संस्थान के जरिए रैटून प्रोमोटर मशीन की शुरुआत करने से रैटून गन्ना की उपज में 10 से 15 प्रतिशत तक बढ़ोतरी हुई। गन्ना फसल के साथ दालों, सब्जियों, तिलहन और अनाज का अंतर फसलचक्र अपनाने से गन्ना उत्पादकों को प्रति हैक्टर 50,000 से 2,00,000 रुपये की अतिरिक्त आमदनी अर्जित करने का अवसर मिला।

पंजीकरण संख्या 14252/57 पंजीयक, समाचार पत्र, भारत सरकार
दिल्ली पोस्टल पंजीकृत संख्या DL(C)-12/1145/10-12
ISSN 0023-1088
मूल्य: ₹30

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के प्रकाशन

JOURNALS

HANDBOOKS

अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क करें:
व्यवसाय प्रबंधक
कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद-I, पूसा, नई दिल्ली 110 012
टेलिफैक्स: 91-11-25843657; ई-मेल: bmicar@icar.org.in
वेबसाइट: www.icar.org.in

डा. सतेन्द्र कुमार सिंह, परियोजना निदेशक, कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय द्वारा भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली के लिए प्रकाशित तथा मैसर्स चन्दु प्रेस, 469, पटपड़गंज इंडस्ट्रियल एस्टेट, दिल्ली 110 092 से मुद्रित। सम्पादक: अशोक सिंह